“MAA” OMWATI COLLEGE OF EDUCATION HASSANPUR (PALWAL)

AFFILIATED CRS UNIVERSITY, JIND

B.ED – 2nd YEAR (2021-22)

NOTES PAPER- II

ASSESSMENT FOR LEARNING

MAA OMWATI EDUCATION TRUST

DELHI

E-mail: moce.principal@maaomwati.com

आंकलन की अवधारणा
(CONCEPT OF ASSESSMENT)

मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता का जन्म वैयक्तिक विभिन्नताओं के उद्गम (Origin) से हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जैसे-जैसे **गाल्टन, कैटिल** आदि प्रवृत्ति मनोवैज्ञानिकों का ध्यान वैयक्तिक विभिन्नताओं के स्वरूप, उत्पत्ति एवं समस्याओं के अध्ययन की ओर अग्रसर हुआ; उसी भाँति मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। जीवन के समस्त पहलुओं में विभिन्नताएँ दृष्टिगोचर होने लगीं; व्यक्तियों के मानसिक स्तर, व्यक्तित्व गुणों, योग्यताओं, क्षमताओं, रुचियों, उपलब्धियों आदि में असमानताएँ झलकने लगीं जिनके फलस्वरूप समायोजन की समस्या का रूप बिगड़ने लगा। अतएव ऐसी परिस्थिति में मनोवैज्ञानिकों को ऐसे यन्त्रों या उपकरणों की आवश्यकता का अनुभव हुआ जो वैयक्तिक भिन्नताओं के प्रत्येक पहलू का अध्ययन कर समायोजन बनाये रखने का प्रयास करें। अन्वेषण प्रारम्भ हुए, प्रयोग कार्य सम्पन्न हुए फिर परीक्षणों का धीरे-धीरे प्रयोग हुआ। परीक्षणों की सहायता से व्यक्तियों के मानसिक एवं दैहिक दोनों ही पहलुओं का मापन किया जाने लगा। इसी प्रकार समय की गति के साथ-साथ जैसे-जैसे वैयक्तिक भिन्नताओं के जटिल रूप को महत्व दिया जाने लगा वैसे-वैसे ही मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की आवश्यकता का अनुभव होने लगा।

मनोवैज्ञानिक परीक्षण का अर्थ एवं स्वरूप
(MEANING & NATURE OF PSYCHOLOGICAL TEST)

अब प्रश्न उठता है, मनोवैज्ञानिक परीक्षणों से हमारा क्या आशय है ? साधारणतया बोलचाल की भाषा में, मनोवैज्ञानिक परीक्षण व्यक्ति के व्यावहारिक अध्ययन का वह साधन है जो उसके प्रति निर्णय लेने एवं उसे समझने में सहायक होता है। इसके द्वारा व्यक्ति की विभिन्न योग्यताओं का मापन एवं उसके व्यक्तित्व और चरित्र का अध्ययन भी सम्भव होता है। इसके स्वरूप को अधिक स्पष्ट रूप से समझने के लिए अब हम आधुनिक मनोवैज्ञानिकों के परीक्षण सम्बन्धी अनुभवों पर दृष्टिपात करते हुए उनके मनोवैज्ञानिक परीक्षण के सम्बन्ध में विचार विनिमय करेंगे।

मनोविज्ञान शब्दावली (Dictionary of Psychological Terms) के अनुसार, "मनोवैज्ञानिक परीक्षण मानकीकृत एवं नियन्त्रित स्थितियों का वह विन्यास (Set) है जो व्यक्ति से अनुक्रिया प्राप्त करने हेतु उसके सम्मुख पेश किया जाता है जिससे वह पर्यावरण की माँगों के अनुकूल प्रतिनिधित्व व्यवहार का चयन कर सके; आज हम बहुधा उन सभी परिस्थितियों एवं अवसरों के विन्यास को मनोवैज्ञानिक परीक्षणों

Scanned with CamScanner

के अन्तर्गत सम्मिलित कर लेते हैं जो किसी भी प्रकार की क्रिया चाहे उसका सम्बन्ध कार्य या निष्पादन से हो या नहीं करने की विशेष पद्धति का प्रतिपादन करती है।''[1] (Psychological test is a set of standardized or controlled occasions for response presented to an individual with design to elicit a representive sample of his behaviour when meeting a given kind of environment demand.....it is now common usage to include as a test any set of situations or occasions that elicit a characteristic of the individual best performance.)

क्रोनबेक (Cronback) के अनुसार, ''दो या अधिक व्यक्तियों के व्यवहार का तुलनात्मक अध्ययन करने की व्यवस्थित प्रक्रिया को परीक्षण करते हैं।''[2] (A test is a systematic procedure for comparing the behaviour of two or more persons.)

फ्रीमेन (Freeman) के शब्दों में, ''मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह मानकीकृत यन्त्र है जो समग्र व्यक्तित्व के एक पक्ष या अधिक पहलुओं का मापन शाब्दिक या अशाब्दिक अनुक्रियाओं या अन्य किसी प्रकार के व्यवहार के माध्यम से करता है।''[3] (A psychological test is a standardized instrument designed to measure objectively one or more aspects of a total personality by means of samples of verbal or non-verbal responses or by meas of other behaviour.)

ऐनेस्टेसी (Anastasi) की दृष्टि में, ''मनोवैज्ञानिक परीक्षण आवश्यक रूप से व्यवहार के प्रतिदर्श का एक वस्तुनिष्ठ एवं मानकीकृत मापन है।''[4] (A Psychological test is essentially an objective and standardized measure of sample of behaviour.)

मन (Munn) के विचारों में, ''परीक्षण वह परीक्षा है जो किसी समूह से सम्बन्धित व्यक्ति की बुद्धि, व्यक्तित्व, अभिक्षमता एवं उपलब्धि को व्यक्त करती है।''[5] (Test is an examination to reveal the relative standing of an individual in the group with respect to intelligence, personality, attitude or achievement.)

टाइलर (Tyler) के अनुसार, ''परीक्षण यह मानकीकृत परिस्थिति है जिससे व्यक्ति का प्रतिदर्श व्यवहार निर्धारित होता है।''[6] (A test can be defined as a standardized situation designed to elicit a sample of an individual behaviour.)

अतएव उपर्युक्त समस्त परिभाषाओं एवं विचारों से यह स्पष्ट है कि मनोवैज्ञानिक परीक्षण वह वस्तुनिष्ठ एवं मानकीकृत साधन है जिसके द्वारा सम्पूर्ण व्यवहार के विभिन्न मनोवैज्ञानिक पहलुओं; जैसे–योग्यताओं, क्षमताओं, उपलब्धियों, रुचियों एवं व्यक्तित्व विशेषताओं का परिमाणात्मक एवं गुणात्मक अध्ययन होता है। यह व्यक्ति को समझने एवं समूह में उसकी तुलना करने में भी सहायक होता है। लेखक ने अपने शब्दों में मनोवैज्ञानिक परीक्षण की व्याख्या इस प्रकार की है :

(''In the hand of a testee, a psychological test is an objective and standardized, instrument to measure quantitatively and qualitatively the various psychological aspects

1. English & English. A Comprehensive Dictionary of Psycho-analytic Terms, (1958).
2. Cronback, Lee J. : Essentials of Psychological Testing (IInd ed.), p. 21.
3. Freeman, Frank, S. : Theory and Practice of Psychological Testing (1965), p. 46.
4. Anastasi, Anne : Psychological Testing (1971), p. 21.
5. Munn, N.L. : Introduction to Psychology, (1967).
6. Tyler Leona, E. : Test and Measurements, (1969), p. 26.

such as abilities, potentialities, achievement, interest and personality characteristics which reveal the behaviour of the individual at a phase in a systematic and scientific fashion. It also involves the study of individual differences and the study of various groups when they are compared.'')

परीक्षण एवं मापन में अन्तर
(DIFFERENCE BETWEEN TEST AND MEASUREMENT)

परीक्षण एवं मापन में निम्न भेद दृष्टिगोचर होते हैं–

(i) परीक्षण का क्षेत्र संकुचित होता है जबकि मापन का प्रयोग व्यापक रूप से विभिन्न मनोवैज्ञानिक शोधों में होता है।

(ii) परीक्षण का सम्बन्ध अधिकतर मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक गुणों से होता है जबकि मापन में हम भौतिक गुणों का अत्यधिक अध्ययन करते हैं।

(iii) परीक्षण के माध्यम से व्यक्ति के विषय में ज्ञात किया जाता है जबकि मापन में किसी सामान्य प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास होता है। कभी-कभी मापन को परीक्षण के रूप में भी प्रयोग कर सकते हैं।

(iv) परीक्षण में विभिन्न प्रकार के पद सम्मिलित होते हैं जिन्हें मानकीकृत करके प्रयोग में लिया जाता है जबकि मापन में वस्तुओं को नियमानुसार संख्यात्मक रूप देकर परिभाषित किया जाता है।

(v) परीक्षण का प्रयोग स्वयं उपकरण के रूप में किया जाता है जबकि मापन में भौतिक एवं मानसिक दोनों प्रकार के उपकरणों की आवश्यकता होती है।

परीक्षण एवं प्रयोग में अन्तर
(DIFFERENCE BETWEEN TEST & EXPERIMENT)

यद्यपि परीक्षण एवं प्रयोग दोनों ही मानव-व्यवहार की व्याख्या उद्दीपक, जीव एवं अनुक्रिया चरों के अन्तर्गत करते हैं फिर भी कुछ अध्ययनों के आधार पर इन दोनों के मध्य कुछ भिन्नताएँ दृष्टिगोचर होती हैं–

(i) परीक्षण में हम विभिन्न मनोवैज्ञानिक पहलुओं; जैसे–बुद्धि, अभिक्षमता, रुचि, उपलब्धि आदि का अध्ययन करते हैं लेकिन प्रयोग में केवल स्वतन्त्र चर के घटाने एवं बढ़ाने के प्रभाव का अध्ययन करते हैं।

(ii) मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उद्देश्य व्यक्ति के व्यावहारिक पहलुओं का अध्ययन करना होता है अर्थात् इसमें व्यक्ति के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है जबकि प्रयोग में प्रतिक्रियाओं का अध्ययन ही सम्भव होता है।

(iii) मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का निर्माण करते समय उसका मानकीकरण विश्वसनीयता, वैधता तथा मानकों की गणना आदि करना होता है जबकि प्रयोगों में इस प्रकार की पूर्ण योजना नहीं होती है। प्रयोग में केवल उद्दीपक एवं जीव परिवर्तियों को ही नियन्त्रित किया जाता है।

(iv) परीक्षणों का क्षेत्र प्रयोगों की अपेक्षाकृत अधिक संकीर्ण होता है। परीक्षणों का प्रयोग केवल उन्हीं लोगों के लिए उपयुक्त होता है जिन पर कि उसका मानकीकरण किया गया हो। भाषा का प्रयोग होने से यह केवल भाषा जानने वालों पर ही उपयुक्त होता है जबकि मनोवैज्ञानिक प्रयोग प्रत्येक परिस्थिति क्रियान्वित किया जा सकता है।

Scanned with CamScanner

मनोवैज्ञानिक परीक्षण के उद्देश्य
(AIMS OF PSYCHOLOGICAL TEST)

मनोवैज्ञानिक परीक्षण के निम्न उद्देश्य हैं जिनके कारण इनका व्यापकता से प्रयोग किया जाता है–

(1) वर्गीकरण का चयन (Classification and Selection)–प्राचीनकाल से ही दार्शनिकों शिक्षाशास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि विभिन्न व्यक्तियों में जिस प्रकार शारीरिक भिन्नताएँ होती हैं इसी प्रकार उनकी मानसिक शक्तियों में भी भिन्नताएँ होती हैं। दो व्यक्ति कदापि एक प्रकार की मानसिक योग्यता वाले नहीं होते, उनमें किसी न किसी प्रकार की भिन्नता अवश्य होती है। **गाल्टन** ने अनुसन्धानों द्वारा यह सिद्ध कर दिया है कि प्रत्येक व्यक्ति मानसिक योग्यता, अभिक्षमता, अभिवृत्ति, रुचि व्यक्तित्व गुणों आदि में दूसरों से भिन्न होता है। अतएव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परीक्षणों के आधार पर व्यक्तियों का वर्गीकरण सम्भव होता है। परीक्षणों के आधार पर सैनिकों का, मानसिक रोगियों का, छात्रों का एवं कर्मचारियों का वर्गीकरण किया जा सकता है। परीक्षणों की सहायता से न केवल व्यक्तियों का वर्गीकरण किया जा सकता है बल्कि विभिन्न व्यवसायों, सेवाओं एवं शैक्षिक संस्थाओं में उपयुक्त व्यक्तियों का चयन करने में भी इनका महत्वपूर्ण स्थान है। किसी विशेष कार्य में कौन-सा व्यक्ति उपयुक्त श्रेणी में होगा तथा वह उसमें कैसी सफलता प्राप्त करेगा इसका अध्ययन भी मनोवैज्ञानिक परीक्षण का कार्य होता है। अतएव मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का शैक्षिक, व्यावसायिक, औद्योगिक एवं व्यक्तिगत चयन में व्यापक रूप से प्रयोग होता है।

(2) पूर्व-कथन (Prediction)–कभी-कभी कार्य एवं व्यक्ति के सम्बन्ध में पूर्व-कथन की आवश्यकता होती है। अतएव मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का दूसरा उद्देश्य व्यक्ति या कार्य के विषय में पूर्व-कथन करना होता है। पूर्व-कथन से हमारा तात्पर्य व्यक्ति की वर्तमान क्षमताओं एवं योग्यताओं के आधार पर भविष्य के विषय में विचार प्रकट करना है। विभिन्न मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के माध्यम से व्यक्ति की बुद्धि योग्यताओं, अभिक्षमताओं, रुचियों एवं व्यक्तित्व गुणों के सम्बन्ध में कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ, किसी अमुक व्यक्ति की अभिक्षमता किसी अमुक व्यवसाय में है या नहीं, रमेश की रुचि विज्ञान अथवा कला में है आदि ऐसी ही समस्याओं के अध्ययन में हमें पूर्व-कथन की आवश्यकता है जिन्हें परीक्षण के माध्यम से प्रकट किया जाता है। पूर्व-कथन करने में उपलब्धि-परीक्षणों, अभिक्षमता-परीक्षणों एवं बुद्धि-परीक्षणों का विशेष महत्व है। जहाँ उपलब्धि परीक्षणों द्वारा यह बताने का प्रयास किया जाता है कि अमुक छात्र विज्ञान जैसे विषय में उन्नति करेगा या नहीं, वहाँ अभिक्षमता परीक्षण के द्वारा किसी विशेष व्यवसाय में अमुक व्यक्ति सफल होगा या नहीं इसका अनुमान किया जाता है। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हम परीक्षणों की पूर्व-कथित वैधता ज्ञात करते हैं।

(3) निर्देशन (Guidance)–व्यावसायिक तथा शैक्षिक क्षेत्रों में व्यक्ति को मार्ग निर्देशित करना मनोवैज्ञानिक परीक्षण का तीसरा उद्देश्य है। उदाहरणार्थ, यदि हम कक्षा 9 में प्रवेश दिलाने से पूर्व किसी विद्यार्थी का मार्ग-प्रदर्शन करना चाहते हैं तो हमें उसकी बुद्धि, लगन, विभिन्न विषयों में योग्यता एवं प्रयोगात्मक कार्यों में क्षमता आदि का ध्यान रखना होगा तथा यदि हम यह पाते हैं कि वह विद्यार्थी तीव्र बुद्धि वाला है, उसके विज्ञान विषय में अच्छे प्राप्तांक हैं तथा वह प्रयोगात्मक कार्यों में रुचि रखता है तो हम भविष्यवाणी कर सकते हैं कि वह कक्षा 9 में विज्ञान विषय लेकर अवश्य सफल होगा। परीक्षणों के माध्यम से शिक्षक भी अपनी शिक्षण विधियों में आवश्यक परिवर्तन कर सुधार ला सकता है। इस प्रकार से व्यावसायिक एवं शैक्षिक निर्देशन प्रदान करने में परीक्षणों का महत्वपूर्ण स्थान होता है।

(4) तुलना करना (Comparison)–वैयक्तिक भिन्नताओं के फलस्वरूप व्यक्ति सदैव ही मानसिक, शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक शीलगुण में एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। यही नहीं, समूहों में भी भिन्नताएँ होती

हैं। अतएव व्यक्ति हो या समूह दोनों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए **गाल्टन** ने मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के प्रयोग में सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया था। इन सांख्यिकीय गणनाओं के आधार पर किसी क्षेत्र में व्यक्तियों के फलांकों के आधार पर समूह की तुलना की जाती है।

(5) निदान (Diagnosis)–परीक्षण के द्वारा समस्याओं एवं कमजोरियों का निदान भी सम्भव होता है। शिक्षा के क्षेत्र में सीखने की विभिन्न कठिनाइयों का पता लगाकर उनका निदान परीक्षणों की सहायता से किया जाता है। अतएव परीक्षणों का प्रयोग शैक्षिक निदानों में इस प्रकार होता है जिस प्रकार थर्मामीटर, माइक्रोस्कोप, एक्स-रे जैसे यन्त्रों का प्रयोग चिकित्सात्मक निदान में होता है। ऐसे परीक्षण जिनका मुख्य कार्य विषय सम्बन्धी कठिनाइयों का निदान करना होता है उन्हें नैदानिक परीक्षण भी कहा जाता है। ये परीक्षाएँ शैक्षिक विषयों के अतिरिक्त संवेगात्मक कठिनाइयों का निदान भी करती हैं। कभी-कभी कोई बालक कुछ कारणोंवश इतने भावनाप्रद हो जाते हैं कि वह किसी विषय में ज्ञान प्राप्त करने में असमर्थ होते हैं। अतएव यहाँ पर अध्यापक का कर्त्तव्य है कि उनके कारणों का पता लगाये व उनको दूर करने का प्रयास करे। यदि वह अपने नैदानिक परीक्षणों के माध्यम से बालक की कठिनाइयों का निदान कर लेता है तो उसका विद्यार्थी उस विषय में अधिक उन्नति के योग्य होगा अन्यथा अनेक प्रयासों के बाद भी वह उस विषय में पर्याप्त ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता है। इस प्रकार से कठिनाइयों की रोकथाम एवं उनके निराकरण दोनों में ही मनोवैज्ञानिक परीक्षण अत्यधिक सहायक सिद्ध होते हैं।

(6) शोध (Research)–मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक शोधों में परीक्षण एक साधन, यन्त्र एवं उपकरण का कार्य करता है। अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार भौतिक विज्ञान में अन्वेषणों के लिए यन्त्रों की आवश्यकता होती है उसी प्रकार शैक्षिक तथा मनोवैज्ञानिक अन्वेषणों में परीक्षणों की आवश्यकता होती है। परीक्षण के द्वारा अध्ययन के लिए प्रदत्त एकत्रित किये जाते हैं। इसके आधार पर शोधकर्ता प्रयोगात्मक एवं नियन्त्रित समूह का विभाजन करता है, अध्यापक विद्यार्थियों को विभिन्न समूहों में विभक्त कर सकता है, उनकी तुलना कर सकता है, उनकी रुचि एवं अभिरुचि के सम्बन्ध में बता सकता है जिनका शोधों में महत्व है।

मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग
(USE OF PSYCHOLOGICAL TEST)

आज के इस वैज्ञानिक एवं औद्योगिक युग में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग नित्य-प्रतिदिन बढ़ रहा है। जटिल समस्याओं के समाधान एवं मानव समायोजन को बनाये रखने में इनका विशेष रूप से महत्व है। यही कारण है कि आज जीवन में प्रत्येक पहलू एवं क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की व्यावहारिकता दृष्टिगोचर होती है। शिक्षा, उद्योग, सेना, चिकित्सा, व्यापार, सेवा तथा अनुसन्धान कार्यों में इनका व्यापकता से उपयोग किया जा सकता है।

(1) वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन–वास्तव में देखा जाय तो मनोवैज्ञानिक परीक्षण का जन्म वैयक्तिक भिन्नताओं से ही हुआ। यह बात तो शताब्दियों से ही ज्ञात है कि व्यक्ति सदैव ही शारीरिक, मानसिक, व्यक्तिगत एवं व्यावहारिक शीलगुणों में एक-दूसरे से भिन्न होता है। अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि व्यक्ति शारीरिक गठन, वेशभूषा, रूप-रंग, रुचि, बुद्धि, अभिक्षमता एवं व्यावसायिक योग्यता आदि में अन्य व्यक्तियों की अपेक्षाकृत सदैव भिन्न होता है। अतएव उसे अपने को समायोजित करने में कठिनाई होती है एवं इसी कठिनाई का पता लगाने के लिए हम मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का उपयोग करते हैं। इन परीक्षणों के माध्यम से हम व्यक्ति के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करते हैं, उसे समझने की चेष्टा करते हैं एवं उसकी क्षमताओं एवं योग्यताओं के आधार पर उसे उनके अनुकूल शिक्षा देने एवं व्यवसाय चयन करने को प्रेरित करते हैं जिससे वह अपने को उचित रूप से समायोजित करते हुए स्वयं

Scanned with CamScanner

[illegible] प्रस्तुत पुस्तक में भी इसी वर्गीकरण को आधार मानकर [illegible] का प्रयास किया गया है।

मापन का अर्थ
(MEANING OF MEASUREMENT)

मापन शब्द का प्रयोग दैनिक जीवन में किसी वस्तु के लिए प्रदान की गई ठीक मात्रा [illegible] का द्योतक है। किसी वस्तु के गुणों का [illegible] मूल्यांकन करना ही मापन है। शिक्षा के क्षेत्र में [illegible] एवं विद्यार्थियों की योग्यता एवं विशेषताओं की मात्रा को [illegible] इकाई में निश्चित करते हैं [illegible] कहलाता है। [illegible] विद्यार्थियों की विषय सम्बन्धी योग्यताओं को [illegible] मात्रात्मक रूप में व्यक्त किया जा सकता है [illegible] है इसे मापन कहते हैं। इस प्रकार मापन से [illegible] पता चलता है कि कोई वस्तु कितनी मात्रा में है। [illegible] गणित विषय में 70 अंक प्राप्त किए हैं या [illegible] प्रथम श्रेणी प्राप्त की तो ये इसके मापन [illegible] परिमाण को बताते हैं।

सामान्य रूप से मापन का अर्थ अंकों के रूप में वर्णित है। मापन का [illegible] मात्रात्मक [illegible] ही है। इसी तरह घटना विश्लेषण तथा व्याख्या का वर्णन अंकों के द्वारा करते हैं। अंकों का [illegible] करना भिन्न भिन्न स्तरों तथा प्रयुक्त नियमों द्वारा होता है। शैक्षिक [illegible] शैक्षिक मापन कहते हैं।

मापन की परिभाषाएँ
(DEFINITIONS OF MEASUREMENT)

मापन की परिभाषा विद्वानों ने अनेक दृष्टिकोण से दी है। कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं-

(i) गिलफोर्ड के अनुसार, "मापन वस्तुओं या घटनाओं को तर्कपूर्ण ढंग से संख्या प्रदान [illegible] की क्रिया है।"

"Measurement is defined as assigning numbers to objects or events according to logical accepted rules"

—J. P. Guilford

(ii) माइकल तथा कार्नीस के अनुसार, "मापन यह बताता है कि कोई वस्तु कितनी मात्रा [illegible] या वह कितनी कम या ज्यादा है या कितनी अधिक या कम है।"

"Measurement of any kind is a matter of determining 'how much' or 'how little' or 'how great' or 'how small' 'how much more' the 'how much less than'."

—Micheal and Karnes

(iii) **स्टीवेन्स** के अनुसार, "मापन किन्हीं निश्चित स्वीकृत नियमों के अनुसार वस्तुओं को अंक प्रदान करने की क्रिया है।"

"Measurement is the process of assigning numbers to objects according to certain agreed rules."

—M. S. Stevens

(iv) **ब्रेडफील्ड तथा मोरडॉक** के अनुसार, **"किसी तथ्य के विभिन्न आयामों का प्रतीक प्रदान** [illegible] मापन कहलाता है।"

[illegible] — Bradfield and Mordock

मापन का ऐतिहासिक एवं दार्शनिक अभिविन्यास
(HISTORICAL AND PHILOSOPHICAL ORIENTATION OF MEASUREMENT)

Introduction

यद्यपि मानव जाति के द्वारा मापन क्रिया एवं विभिन्न मापन इकाइयों का प्रयोग किसी न किसी रूप में अत्यन्त प्राचीन काल से किया जाता है परन्तु एक स्वतन्त्र विज्ञान के रूप में तथा व्यवस्थित अध्ययन के दृष्टिकोण से मापन का इतिहास वस्तुतः एक सौ वर्ष पुराना कहा जा सकता है। प्रायः सन् 1850 तक मनोविज्ञान का स्वरूप मुख्य रूप से चिन्तन प्रधान दार्शनिक एवं अप्रयोगात्मक रहा। तात्कालिक विचारकों की यह धारणा थी कि व्यक्ति के व्यावहारिक पहलुओं तथा मानसिक क्रियाओं को मात्रात्मक रूप से नहीं मापा जा सकता। विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों एवं इनकी ऐसी क्रियाओं जिनका सम्बन्ध स्पष्ट रूप से [illegible] व्यवहार से था का प्रयोगात्मक अध्ययन एवं मापन विभिन्न दैहिकशास्त्रियों एवं भौतिकशास्त्रियों द्वारा किया गया। इन्होंने मनोदैहिक विधियों एवं सरल प्रारम्भिक प्रत्युत्तरों की गति के आधार पर व्यक्ति की योग्यता का मापन किया। बाद में धीरे धीरे मनोविज्ञान भौतिक विज्ञान एवं जैविक विज्ञानों से प्रभावित हुआ, जिसके फलस्वरूप सन् 1900 तक मनोविज्ञान स्वयं एक स्वतन्त्र विज्ञान के रूप में प्रकट होने लगा। स्वतन्त्र विज्ञान के रूप में मनोविज्ञान ने दार्शनिक विचारों का विरोध किया एवं जैविक विज्ञान से प्रेरणा लेते हुए प्रयोगात्मक पद्धति को महत्व देना प्रारम्भ किया। प्रयोगात्मक पद्धति के साथ साथ मनोविज्ञान में मानवीय व्यवहार एवं मानसिक क्रियाओं के मापन का प्रारम्भ हुआ। मनोविज्ञान मापन के विकास पर निम्नलिखित तीन तत्त्वों या समस्याओं का विशेष प्रभाव पड़ा।

मापन जीवन की एक आवश्यकता
(MEASUREMENT A NECESSITY OF LIFE)

आधुनिक ज्ञान विज्ञान के विभिन्न विशिष्ट क्षेत्रों से लेकर जनसाधारण के दैनिक जीवन के विभिन्न सामान्य क्षेत्रों तक, अन्य व्यावहारिक आवश्यकताओं की भाँति मापन क्रिया की व्यावहारिक आवश्यकता को भी समान रूप से स्वीकृत किया जाता है। अत्यन्त प्राचीन काल से ही मनुष्य विभिन्न [illegible] भौतिक पदार्थों अथवा समय आदि अमूर्त विषयों के मापन हेतु विभिन्न प्रकार की इकाइयों का प्रयोग करता आ रहा है। आधुनिक प्रगति के साथ साथ स्थूल पदार्थों एवं विषयों के अतिरिक्त सूक्ष्म तथा अमूर्त मानवीय व्यवहार, भावनाओं एवं सामाजिक सम्बन्धों के विभिन्न क्षेत्रों में मापन क्रिया का प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। जन्म से मृत्यु तक मनुष्य प्रायः अपने जीवन एवं व्यवहार के विभिन्न पहलुओं में [illegible] मापन क्रिया का प्रयोग करता है। बच्चे के जन्म का समय अंकित करना, [illegible] अधिक मात्रा में अथवा मापांकित बोतल के द्वारा उसे दूध पिलाना, [illegible] बौद्धिक योग्यता आदि, शारीरिक विकास का मापन, रुचि, प्रवृत्ति, अवधान, [illegible] व्यक्तित्व के विभिन्न तत्त्वों के मापन से [illegible] सहनशीलता, स्वभाव, सामाजिकता, ईमानदारी आदि [illegible] अत्यन्त सूक्ष्म एवं जटिल प्रक्रियाओं [illegible] आकाशीय ग्रह नक्षत्रों की गति, अन्तरिक्ष यात्रा सम्बन्धी विभिन्न [illegible] मापन तक जीवन, व्यवहार, ज्ञान, विज्ञान आदि के प्रायः समस्त क्षेत्रों में मापन-क्रिया का प्रयोग किया जाता है। समय नापने के लिए घण्टा, मिनट, सेकण्ड, मिलीसेकण्ड; भार नापने के लिए किलोग्राम, ग्राम; दूरी मापने के लिए किलोमीटर, मिलीमीटर, सेण्टीमीटर; [illegible] किलोमीटर, मिलीमीटर, सेण्टीमीटर, ताप मापने के लिए डिग्री, भौगोलिक स्थिति मापने [illegible] अक्षांश-देशान्तर; विद्युतीय शक्ति मापने के लिए वोल्ट; शक्ति मापने के लिए [illegible]

धन मापने के लिए रुपये, पैसे, पौण्ड, शिलिंग, दीनार, डालर आदि मापन इकाइयों का प्रयोग किया जाता है। यहाँ तक कि व्यक्ति का चरित्र एवं आचरण भी विभिन्न आदर्शों (न्यायिक सिद्धान्तों) की तुलना में माप जाता है।

मापन की समस्याएँ
(PROBLEMS OF MEASUREMENT)

(i) दैहिक एवं प्रयोगात्मक मनोविज्ञान सम्बन्धी समस्याएँ—उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जर्मनी एवं अन्य देशों के दैहिकशास्त्रियों एवं मनोवैज्ञानिकों का ध्यान प्रयोगात्मक एवं दैहिक मनोविज्ञान के क्षेत्र में सक्रिय रूप से अनुसन्धान करने के प्रति आकर्षित हुआ। उनकी रुचि इन्द्रियों की संक्रिया (Operations) के प्रति जाग्रत हुई उन्होंने दृष्टि, श्रवण आदि विभिन्न इन्द्रियात्मक संवेदनाओं का विस्तृत अध्ययन किया तथा सरल क्रियात्मक प्रत्युत्तरों की गति मापने सम्बन्धी अध्ययन किये। इन प्रभावों के फलस्वरूप ही सन् 1879 में वुण्ट ने सर्वप्रथम मनोविज्ञान की प्रयोगशाला की स्थापना की। प्रारम्भ में प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के अन्तर्गत केवल उन्हीं प्रक्रियाओं का मापन सम्भव था, जिनका सम्बन्ध दैहिकीशास्त्रियों से था उदाहरणार्थ; दृष्टि, श्रवण, भावना, प्रत्युत्तर गति आदि का मापन। किन्तु धीरे-धीरे विद्वानों का ध्यान मनोवैज्ञानिक विषयों (जैसे—प्रत्यक्षीकरण, सीखने की मात्रा, जटिल मानसिक क्रियाओं के समय आदि) के मापन की ओर आकर्षित होने लगा। इस दिशा में मनोभौतिकी का क्षेत्र अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, जिसने मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक मापन को प्रोत्साहित किया। आगे चलकर इन्हीं दैहिक एवं प्रयोगात्मक समस्याओं सम्बन्धी अध्ययनों ने मनोवैज्ञानिक मापन की दिशा में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया।

(ii) डार्विन का विकासवाद एवं वैयक्तिक भिन्नताओं सम्बन्धी समस्याएँ—दूसरी ओर डार्विन की विकासवाद सम्बन्धी विचारधारा से मापन की समस्याओं को विशेष प्रोत्साहन मिला। सन् 1859 में **डार्विन** ने अपने ग्रन्थ 'Origin of Species' में अपने जीवशास्त्रीय सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, जिसका मूल आधार था कि एक ही जाति के सदस्यों में विचलन होता है अर्थात् एक ही जाति के व्यक्तियों में वैयक्तिक भिन्नताएँ पायी जाती हैं। तत्पश्चात् **डार्विन** के कार्यों को इंग्लैण्ड में विशेष प्रोत्साहन मिला एवं मानवीय सम्बन्धों में उसका व्यापकतापूर्वक उपयोग किया जाने लगा। **डार्विन** के कार्यों से प्रभावित होकर **गाल्टन, कैटिल** प्रभृति मनोवैज्ञानिकों की रुचि व्यक्तिक भिन्नताओं के अध्ययन की ओर जाग्रत हुई। उन्होंने भौतिक एवं मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के आधार पर वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन एवं कई मानसिक परीक्षणों का निर्माण किया। इसके अतिरिक्त अपने अध्ययनों में उन्होंने सांख्यिकीय विधियों की आवश्यकता का अनुभव भी किया। अतएव, मनोवैज्ञानिक मापन को आगे गति एवं विस्तार देने में वैयक्तिक भिन्नताओं सम्बन्धी विचारधारा ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

(iii) असमायोजित एवं विसामान्य (Deviated) व्यक्तियों के उपचार सम्बन्धी समस्याएँ—असमायोजित, अविकसित एवं विसामान्य व्यक्तियों के उपचारात्मक अध्ययनों ने भी मनोवैज्ञानिक मापन की समस्या को जन्म दिया। विसामान्य व्यक्तियों अर्थात् सामान्य व्यावहारिक जीवन में सफलतापूर्वक कार्य करने में असमर्थ-अल्प बुद्धि, बुद्धि-दौर्बल्य, हीन बुद्धि एवं अनुपयुक्त व्यक्तियों के मानसिक उपचार हेतु अनुसन्धान कार्यों का प्रारम्भ हुआ और इन असमायोजित या अविकसित व्यक्तियों की उपचारात्मक समस्याओं ने मापन के विकास में सराहनीय योगदान दिया जिसके फलस्वरूप बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही बुद्धि-मापन के प्रयास किये जाने लगे।

बीसवीं शताब्दी में मापन का विकास

उन्नीसवीं शताब्दी में दैहिक एवं प्रयोगात्मक मनोविज्ञान सम्बन्धी समस्याओं, वैयक्तिक भिन्नताओं के अध्ययन एवं विसामान्य व्यक्तियों के समायोजन की समस्याओं ने मनोवैज्ञानिक मापन की आधारशिला रखी जिसके फलस्वरूप बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में ही विभिन्न मानसिक-क्रियाओं के मापन

हेतु विभिन्न मानसिक एवं भौतिक परीक्षणों का निर्माण होने लगा तथा मापन के क्षेत्र में तेजी से विकास होने लगा।

मापन का दार्शनिक दृष्टिकोण

शिक्षा एवं मनोविज्ञान के अन्तर्गत मानव के विभिन्न व्यवहारों एवं समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। कभी हम व्यक्ति को एक स्वतन्त्र इकाई के रूप में ग्रहण करते हुए उनकी व्यक्तिगत समस्या का अध्ययन करते हैं, जैसे—गणित के अध्ययन में श्याम की अपेक्षा राम को अधिक कठिनाई का अनुभव क्यों होता है ? इसके विपरीत, कभी हम व्यक्तियों का एक विशिष्ट समूह सदस्य के रूप में अध्ययन करते हैं, जैसे—अमुक कक्षा में वर्ग 'क' के छात्र इतिहास के अध्ययन में वर्ग 'ख' के छात्रों की अपेक्षा अधिक होशियार हैं। इसके अतिरिक्त, कभी हम व्यक्तियों का अध्ययन मानव-जाति के सामान्य प्रतिनिधियों के रूप में करते हैं। उदाहरणार्थ, हम यह ज्ञात करने का प्रयास करते हैं कि क्या औसत सामान्य बौद्धिक योग्यता वाले व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक सामान्य बौद्धिक योग्यता वाले बालक, संवेगात्मक रूप में अपेक्षाकृत अधिक या कम संवेदनशील होते हैं। अतएव विभिन्न दार्शनिक दृष्टिकोणों से मानव-व्यवहार के अध्ययन ने मापन दिशा में अमूल्य सामग्री प्रदान की।

मानसिक एवं भौतिक मापन
(MENTAL AND PHYSICAL MEASUREMENT)

मनोवैज्ञानिक मापन को मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—मानसिक मापन एवं भौतिक मापन। मानसिक मापन के अन्तर्गत विभिन्न मानसिक क्रियाओं एवं शीलगुणों; जैसे—बुद्धि, अभिक्षमता, उपलब्धि, रुचि, योग्यता आदि का मापन किया जाता है जबकि भौतिक मापन में भौतिक गुणों एवं विशेषताओं; जैसे—भार, लम्बाई, ऊँचाई, दूरी आदि का मापन करते हैं। यद्यपि मानसिक तथा भौतिक दोनों मापनों में विशेष नियमों के अनुसार वस्तुओं को अंक प्रदान किये जाते हैं, फिर भी प्रकृति से ही दोनों में परस्पर भिन्नताएँ दृष्टिगोचर होती हैं।

(i) उद्गम के दृष्टिकोण से, मानसिक मापन का प्रारम्भ बुद्धि-दौर्बल्य की समस्या के द्वारा तथा भौतिक मापन का प्रारम्भ प्रयोगात्मक मनोविज्ञान के परिणामस्वरूप माना जा सकता है।

(ii) मानसिक मापन की प्रकृति सापेक्षिक (Relative) प्रकार की तथा भौतिक मापन की प्रकृति निरपेक्ष (Absolute) प्रकार की होती है अर्थात् मानसिक मापन में अंकों का स्वयं कोई अस्तित्व नहीं होता जबकि भौतिक मापन में अंक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। उदाहरणार्थ, यदि मानसिक मापन के अन्तर्गत हम कहें कि अमुक व्यक्ति ने किसी बुद्धि परीक्षण में 50 अंक प्राप्त किये हैं तब इसके द्वारा हमें किसी वास्तविक तथ्य की सूचना प्राप्त नहीं होती क्योंकि इस 50 अंक का स्वयं अपना कोई अस्तित्व नहीं है। इसके विपरीत, यदि भौतिक मापन के अन्तर्गत यह कहें कि क, ख से 20 किलोमीटर दूर है या इस कपड़े की लम्बाई 6 मीटर है या उस व्यक्ति का भार 50 किलो है आदि, तब यहाँ पर ये अंक स्वयं अपनी महत्ता को व्यक्त करते हैं। अतएव यह स्पष्ट है कि मानसिक मापन में कोई निश्चितता नहीं होती जबकि भौतिक मापन की एक निश्चितता होती है। हम भौतिक मापन में यह कह सकते हैं कि एक 30 मीटर लम्बी डोरी 15 मीटर लम्बी डोरी या 10 मीटर लम्बी डोरी की अपेक्षा दुगुनी या तिगुनी लम्बी है। किन्तु मानसिक मापन में यह कदापि नहीं कहा जा सकता। यदि मनोविज्ञान विषय में साधना को 70 अंक मिले तथा मधु को 35 अंक मिले, इससे हमारा यह तात्पर्य नहीं कि साधना के मधु से 35 अंक अधिक तथा मधु के साधना से 35 अंक कम हैं।

(iii) शून्य बिन्दु के आधार पर भी मानसिक एवं भौतिक मापन में अन्तर किया जा सकता है। भौतिक मापन अथवा भौतिक मापनी के अन्तर्गत एक यदृच्छ शून्य बिन्दु (Arbitrary zero point) होता है जबकि मानसिक मापन में ऐसा कोई भी यदृच्छ शून्य बिन्दु नहीं होता जहाँ से मापन कार्य प्रारम्भ किया जा सके।

Scanned with CamScanner

(iv) मानसिक एवं भौतिक मापनों में अन्तर मात्रा का होता है अन्य किसी प्रकार का नहीं। मानसिक मापन भौतिक मापकों की अपेक्षाकृत अधिक परिवर्तनीय होते हैं। उदाहरणार्थ, यदि एक मेज की लम्बाई आज मापें तथा एक वर्ष पश्चात् फिर मापें तो हम बिल्कुल भी परिवर्तन नहीं पायेंगे, किन्तु यदि एक बालक की बुद्धि को जाँच आज करें तथा एक वर्ष पश्चात् फिर से उसकी बुद्धि का मापन करें तो हम महत्वपूर्ण अन्तर पायेंगे। इसी प्रकार से अनेक व्यक्तित्व पहलू ऐसे हैं जो समय के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं।

(v) भौतिक मापनों को अपेक्षाकृत मानसिक मापनों का विवेचन करना कठिन होता है। कई भौतिक मापन तो इतने सरल स्वभाव के होते हैं कि उनके विवेचन करने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता। उदाहरणार्थ, यदि हम यह कहें कि रस्सी 6 इंच लम्बी है, यहाँ लम्बाई का मापन आसानी से समझा जा सकता है तथा इसके विवेचन की कोई आवश्यकता नहीं होती। यद्यपि, भौतिक मापन के समान ही कुछ मानसिक मापन भी विवेचन की दृष्टि से सरल होते हैं, जैसे—यदि एक विद्यार्थी गणित में अच्छी कुशलता नहीं रखता है तो उसकी हीनता को आसानी से इंगित किया जा सकता है। फिर भी, कुछ इस प्रकार के मानसिक मापन मुख्यतया व्यक्तित्व विशेषताओं के मापन ऐसे हैं, जिनमें प्रत्युत्तरों का अर्थ बिल्कुल निश्चित नहीं होता। उदाहरणार्थ, यदि किसी स्याही के धब्बे वाले परीक्षण पर कोई परीक्षार्थी यह कहे कि धब्बे का कोई विशेष स्थान तितली के समान है, तो वह स्पष्ट रूप से यह नहीं बताता कि प्रत्युत्तर विद्यार्थी के विषय में क्या संकेत करता है।

मूल्यांकन
(EVALUATION)

जब शिक्षक उद्देश्यों के लिए अधिगम परिस्थितियों का सावधानीपूर्वक निर्धारण कर लेता है तब मूल्यांकन के लिए परीक्षा का निर्माण किया जाता है। इस परीक्षा द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि इन उद्देश्य की प्राप्ति कहाँ तक हो सकी है। **मेगर (Magar)** के अनुसार, इस पद के अन्तर्गत शिक्षक शिक्षण विधियों, प्रविधियों, अनुदेशन तथा अन्य शिक्षण सहायक सामग्री की उपयोगिता का मूल्यांकन करता है, जिसमें उनमें सुधार तथा विकास के लिए शिक्षक को प्रोत्साहन मिलता है, जिसके आधार पर वह उत्तम साधनों तथा स्रोतों का प्रयोग अधिगम उन्नति के लिए करता है। मूल्यांकन के अन्तर्गत किसी गुण, योग्यता अथवा विशेषता का मूल्य निर्धारित किया जाता है, अर्थात् मूल्यांकन द्वारा परिमाणात्मक या गुणात्मक दोनों ही प्रकार की सूचनाएँ प्राप्त होती हैं जिनके आधार पर बालक की योग्यता एवं उपलब्धियों का आंकलन किया जाता है।

मूल्यांकन का अर्थ
(MEANING OF EVALUATION)

मूल्यांकन का शाब्दिक अर्थ है—'मूल्य का अंकन।' हम जानते हैं कि मापन द्वारा केवल किसी वस्तु, प्राणी अथवा क्रिया की किसी विशेषता मानक शब्दों चिह्नों अथवा इकाई अंकों में प्रकट किया जाता है। मूल्यांकन में मापन के इन परिणामों की व्याख्या की जाती है और यह व्याख्या कुछ सामाजिक, सांस्कृतिक अथवा वैज्ञानिक मानदण्डों के आधार पर की जाती है और इस व्याख्या द्वारा वस्तु, प्राणी अथवा क्रिया की यथा विशेषता की सापेक्षिक स्थिति स्पष्ट की जाती है।

मूल्यांकन की परिभाषाएँ
(DEFINITIONS OF EVALUATION)

रेमर्स एवं गेज के अनुसार, "मूल्यांकन के अन्दर व्यक्ति या समाज या दोनों की दृष्टि से अच्छा है या 'वांछनीय है' को मानकर चला जाता है।"

"Evaluation assumes a purpose or an idea of what is 'good' or 'desirable' from the stand point of the individual or society or both." —**Remmers and Gage**

गुड्स के अनुसार, "मूल्यांकन एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे सही ढंग से किसी वस्तु का मापन किया जा सकता है।"

"Evaluation is a process of ascertaining or judging the value or amount of some thing by careful appraisal" —**Goods**

स्टफ्लीबीम और **सहयोगी** के अनुसार, "मूल्यांकन निर्णय विकल्पों की आलोचना से सम्बन्धित उपयोगी सूचना के वर्णन करने, प्राप्त करने तथा प्रदान करने की प्रक्रिया है।"

"Evaluation is the process of delineating, obtaining and providing useful information for decision alternatives" —**Stufflebeam** and **Others**

क्विलेन व हन्ना के अनुसार, "विद्यालय द्वारा बालक के व्यवहार में लाए गए परिवर्तनों के सम्बन्ध में प्रमाणों के संकलन और उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया को मूल्यांकन कहते हैं।"

"Evaluation is the process of gathering and interpreting evidences on changes in the behaviour of pupils as they progress through school" —**Quillen** and **Hanna**

शैक्षिक मूल्यांकन की प्रक्रिया
(PROCESS OF EDUCATIONAL EVALUATION)

मूल्यांकन एक सतत् एवं क्रमबद्ध प्रक्रिया है जिसके पद निश्चित होते हैं तथा जिनका अनुसरण करके इसको पूरा किया जाता है। मुख्यतः मूल्यांकन प्रक्रिया में निम्नलिखित सोपान हैं—

(1) मूल्यांकन प्रविधियों का चयन (Selection of evaluation techniques)

(2) उद्देश्य का विश्लेषण (व्यवहार परिवर्तन के सन्दर्भ में) (Analysis of objectives; In terms of behavioural change)

(3) उद्देश्यों का चयन एवं निर्धारण करना (Selection and formulation of objectives)

(4) परिणामों की व्याख्या एवं सामान्यीकरण करना (Explanation and generalisation of results)

(5) प्रविधियों का प्रयोग एवं परिणाम निकालना (Use of techniques and making result)।

उपर्युक्त पदों के अनुसार क्रमशः आगे बढ़ते रहते हैं और परिणाम निकालने में सक्षम हो जाते हैं, तत्पश्चात् प्राप्त परिणामों की व्याख्या करके सामान्यीकरण कर लेते हैं। किसी भी निर्णय पर पहुँचने से पहले हमें निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए—

(i) प्राप्त अंकों का औसत क्या है?

(ii) उसने अपनी योग्यतानुसार कहाँ तक अंक प्राप्त किए हैं?

(iii) परीक्षण में अधिकतम अंक क्या है?

(iv) अमुक छात्र की क्षमता सीमा क्या है?

(v) बालकों द्वारा प्राप्त निम्नतम तथा उच्चतम अंक क्या हैं?

डॉ. पटेल ने निम्नांकित चार बिन्दुओं द्वारा मूल्यांकन की प्रक्रिया को स्पष्ट किया है—

(1) शैक्षिक उद्देश्य (Educational objectives)

(2) पाठ्यक्रम (Curriculum)

(3) अधिगम क्रियाएँ (Learning Activities)

(4) मूल्यांकन पद्धतियाँ (Evaluation procedures)।

Scanned with CamScanner

मूल्यांकन के सिद्धान्त
(PRINCIPLES OF EVALUATION)

मूल्यांकन के मुख्य सिद्धान्त निम्नांकित हैं—

(1) मूल्यांकन प्रक्रिया में निर्णय एवं मूल्य दोनों की अत्यन्त आवश्यकता है।

(2) मूल्यांकन शिक्षक प्रक्रिया के विभिन्न पक्षों को समुन्नत करता है।

(3) मूल्यांकन शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्य करता है।

(4) मूल्यांकन एक साधन है, न कि साध्य। मूल्यांकन को अन्त (End) नहीं समझना चाहिए। यह शिक्षा प्रक्रिया में आगे आने वाले प्रत्ययों या विषय-सामग्री की प्राप्ति का साधन होता है।

(5) मूल्यांकन करते समय मूल्यांकन की प्रत्येक विद्या एवं उपकरणों का प्रयोग करते समय उनकी उपयोगिता का ध्यान रखना चाहिए।

मूल्यांकन की आवश्यकता (Need of Evaluation)

शिक्षा के आदान-प्रदान का एक उद्देश्य होता है। शिक्षा में मूल्यांकन से यह ज्ञात हो जाता है कि शिक्षार्थी ने क्या प्राप्त किया और उससे वह कहाँ तक लाभान्वित हुआ है। उसे अपने शिक्षण द्वारा कहाँ तक सफलता मिली है।

शिक्षार्थी की उपलब्धियों को जानने के लिए मूल्यांकन की आवश्यकता तो होती है। मूल्यांकन की आवश्यकता छात्रों, अध्यापकों तथा अभिभावकों तीनों की दृष्टि से महत्त्व रखती है। छात्र को अपनी प्रगति तथा योग्यता का पता चलता रहता है जिससे आत्मबोध तथा आत्मविश्वास का विकास होता है। इसके द्वारा छात्र को अध्ययन तथा परिश्रम करने की प्रेरणा मिलती है। अध्यापक को अपनी शिक्षण-विधि तथा शिक्षा-योजना आदि में सुधार करने का अवसर मिलता है। अभिभावकों को मूल्यांकन द्वारा अपने बालकों की प्रगति का ज्ञान होता रहता है। इसका महत्त्व तथा उपयोगिता से सम्बन्धित प्रमुख बातें निम्नलिखित हैं—

(1) छात्रों का वर्गीकरण करने में सहायता मिलती है।

(2) छात्रों को आत्म मूल्यांकन का अवसर मिलता है।

(3) छात्रों की विशिष्ट योग्यताओं, क्षमताओं या कमजोरियों का भी ज्ञान होता है।

(4) मूल्यांकन द्वारा छात्रों को व्यक्तित्व शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन देने में सुविधा होती है।

(5) वैयक्तिक भिन्नता को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रत निर्माण तथा अन्य शैक्षिक कार्यक्रम के आयोजन में सहायता मिलती है।

मूल्यांकन की विशेषताएँ (Characteristics of Evaluation)

मूल्यांकन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(1) मूल्यांकन की प्रक्रिया निरन्तर चलती है।

(2) मूल्यांकन में अनेक परीक्षाओं का समावेश होता है।

(3) मूल्यांकन का कार्य यह मापन करना है कि किसी बालक की निश्चित उद्देश्य की ओर क्यों प्रगति हुई है।

(4) मूल्यांकन में श्रम, धन और समय की अधिक आवश्यकता होती है।

(5) मूल्यांकन की प्रक्रिया में वे सभी व्यक्ति भाग लेते है, जिनके द्वारा यह संचालित की जाती है।

(6) मूल्यांकन में सार्थकता के साथ भविष्यवाणी भी की जा सकती है।

(7) मूल्यांकन निदानात्मक होता है। इसके द्वारा बालक की वर्तमान दशा में सुधार किया जाता है तथा समस्याओं के कारण का पता चलता है।

(8) मूल्यांकन की प्रक्रिया यह निश्चित करती है, कि आगामी समय के लिए नियोजन करने हेतु क्या किया जा चुका है।

(9) यह शिक्षा प्रणाली का अभिन्न एवं आवश्यक अंग है।

(10) मूल्यांकन अगले स्तर के लिए आधार प्रस्तुत करता है तथा व्यापक रूप से सूक्ष्मत: प्रगति का भी ज्ञान प्राप्त करता है।

शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन के उद्देश्य, कार्य, उपयोगिता अथवा महत्त्व
(AIMS, FUNCTIONS, UTITITY OR IMPORTANCE OF MEASUREMENT AND EVALUATION IN EDUCATION)

मापन व मूल्यांकन के न अपने कोई उद्देश्य होते हैं और न कार्य, जिस क्षेत्र में इनका प्रयोग जिन उद्देश्यों से किया जाता है उस क्षेत्र में उनके वही उद्देश्य होते हैं और उन उद्देश्यों की पूर्ति करना इनका कार्य होता है। हमारा अध्ययन क्षेत्र केवल शिक्षा है इसलिए हम यहाँ केवल शिक्षा के क्षेत्र में मापन एवं मूल्यांकन के उद्देश्य, कार्य उपयोगिता तथा महत्त्व के विषय में विचार करेंगे। हम कई स्थानों पर स्पष्ट कर चुके हैं—किसी कार्य के सम्पादन के जो उद्देश्य होते हैं, उन उद्देश्यों को प्राप्त करना ही उसके कार्य होते हैं, इन कार्यों का सम्पादन ही उसकी उपयोगिता होती है।

यह उपयोगिता ही इसका महत्त्व होती है। एक उदाहरण द्वारा इस कथन को स्पष्ट किए देते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में मापन तथा मूल्यांकन का एक उद्देश्य छात्रों की बुद्धि, रुचि, अभिरुचि और अभिवृत्ति के आधार पर उनका शैक्षिक एवं व्यवसायिक निर्देशन करना है। कार्य की दृष्टि से इसी कथन को हम इस प्रकार कहेंगे शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन का एक कार्य बच्चों की बुद्धि, रुचि, अभिरुचि तथा अभिवृत्ति के आधार उनका शैक्षिक तथा व्यावसायिक मार्गदर्शन करना है। उपयोगिता यह है कि इसके द्वारा छात्रों को उनकी बुद्धि, रुचि, अभिरुचि एवं अभिवृत्ति के आधार पर शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन दिया जाता है और महत्त्व की दृष्टि से इसी कथन को इस प्रकार कहेंगे शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन का बड़ा महत्त्व है, इसके द्वारा छात्रों की बुद्धि का मापन किया जाता है। उनकी रुचि, अभिरुचि तथा अभिवृत्तियों का पता लगाया जाता है और इसके आधार पर उन्हें शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन दिया जाता है। साफ जाहिर है कि शिक्षा के क्षेत्र में मापन एवं मूल्यांकन के जो उद्देश्य हैं वही उसके कार्य हैं, वही उसकी उपयोगिता है और उन्हीं के कारण उसका क्षेत्र में महत्त्व है। बस इसकी अभिव्यक्ति शैली में अन्तर है, शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन के उद्देश्य, कार्य एवं उपयोगिता तथा महत्त्व को हम निम्न रूप से क्रमबद्ध कर सकते हैं—

(1) प्रवेश के समय प्रवेशार्थियों की योग्यता का मापन, उनकी रुचि और रुझान का पता लगाना और उस सबके आधार पर उन्हें प्रवेश देना।

(2) समय पर छात्रों की शैक्षिक प्रगति में बाधक तत्त्वों की जानकारी करना और उनका उपचार करना।

(3) प्रवेश के बाद उनकी बुद्धि एवं व्यक्तित्व का मापन करना तथा उसके आधार पर उन्हें वर्ग विशेषों में विभाजित करना और समय-समय पर व्यक्तित्व निर्माण में सहयोग करना।

(4) समय-समय पर छात्रों की कठिनाइयों का पता लगाना और उनका निवारण करना।

(5) सामान्य शिक्षा प्राप्त करने के बाद छात्रों की बुद्धि, रुचि, रुझान और योग्यता का पता लगाना और उसके आधार पर उन्हें शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन देना।

Scanned with CamScanner

(6) समय समय पर छात्रों की शैक्षिक उपलब्धियों का मापन एवं मूल्यांकन करना और ... पृष्ठपोषण प्रदान करना।

(7) समय समय पर अध्यापकों के छात्रों के प्रति व्यवहार के छात्रों पर प्रभाव का पता लगा... सुधार के लिए सुझाव देना तथा क्रियात्मक अनुसंधान के लिए मार्ग प्रशस्त करना।

(8) समय समय पर शिक्षा प्रशासकों तथा अन्य कर्मचारियों और अभिभावकों की क्रियाओं ... शैक्षिक महत्व की परख करना तथा उन्हें सुधार के लिए सुझाव देना।

(9) शिक्षण में विभिन्न शिक्षण साधनों के प्रयोग से होने वाले प्रभाव का अध्ययन करना उन... कहाँ किस रूप में प्रयोग उपयुक्त होता है इसका पता लगाना तथा सुधार के लिए सुझाव देना।

(10) शिक्षक उद्देश्यों की व्याख्या करना, उनकी उपयोगिता की परख करना उसमें समुचितु... परिवर्तन हेतु सुझाव देना।

(11) समय समय पर छात्रों पर शिक्षण के प्रभाव (शैक्षिक उपलब्धियों अथवा व्यवहार परिवर्त... का पता लगाना और उसके आधार पर छात्रों का मार्गदर्शन करना तथा उन्हें सीखने के लिए अभिप्रे... करना।

(12) 10-15 वर्ष के अन्तराल में शिक्षा नीति का मूल्यांकन करना उसमें सुधार के सुझाव देन...

(13) शैक्षिक शोध को गतिशील रखना।

(14) शैक्षिक शोधों के लिए आँकड़ों का संकलन करना।

(15) शिक्षा की तत्कालीन समस्याओं को समझना, उसके समाधान के उपाय और क्रियात्म... अनुसन्धान के लिए प्रेरित करना।

(16) समय समय पर प्रधानाचार्य के अध्यापकों एवं छात्रों के प्रति व्यवहार का शैक्षिक प्रक्रि... पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना, सुधार के लिए सुझाव देना और क्रियात्मक अनुसन्धान ... लिए प्रेरित करना।

(17) सत्रांत में छात्रों की उपलब्धि परीक्षा के आधार पर पास-फेल करना, श्रेणी प्रदान करना... कक्षोन्नति देना तथा प्रमाण पत्र देना।

(18) विभिन्न स्तर पर शिक्षा के पाठ्यक्रम शैक्षिक उद्देश्यों की प्रगति में प्रभाव का पता लगाना... सुधार के लिए सुझाव देना और अनुसन्धान के लिए मार्ग प्रशस्त करना।

(19) समय समय पर प्रयोग की जाने वाली शिक्षण विधियों के सीखने पर प्रभाव का अध्ययन... करना, उपयोगी, अनुपयोगी विधियों का पता लगाना, सुधार के लिए सुझाव देना, अनुसन्धान के लिए क्षेत्र स्पष्ट करना।

(20) शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में पाठ्य पुस्तकों की उपयोगिता का पता लगाना, उसमें संशोधन हेतु सुझाव देना, अनुसन्धान के लिए मार्ग प्रशस्त करना।

(21) शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहपाठ्यचारी क्रियाओं के प्रभाव का आंकलन करना और उसके सही प्रयोग हेतु सुझाव देना।

मूल्यांकन का क्षेत्र (Scope of Evaluation)

मूल्यांकन का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है—**आर. एस. वर्मा** के अनुसार, "मूल्यांकन के क्षेत्र से हमारा तात्पर्य उन क्षेत्रों से है, जिनमें व्यवहारगत परिवर्तन हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में, किसका मूल्यांकन किया जाए, प्रश्न का उत्तर ही मूल्यांकन का क्षेत्र निर्धारित करता है। मूल्यांकन द्वारा हम व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों का पता लगाते हैं। ये आयाम संवेगात्मक, सामाजिक, नैतिक, शारीरिक तथा बौद्धिक क्षेत्रों से सम्बन्धित हो सकते हैं।" मूल्यांकन का सम्बन्ध केवल छात्रों की बौद्धिक उपलब्धि से न होकर उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व से है।

रेमर्स तथा गेज के अनुसार, "मूल्यांकन की प्रक्रिया व्यापकता—छात्र के समस्त व्यक्तित्व पर अपने प्रसार का उल्लेख करती है न कि केवल उसकी बौद्धिक उपलब्धि पर।" मूल्यांकन के क्षेत्र के अन्तर्गत छात्र के व्यक्तित्व के निम्न अंग हैं—

(1) ज्ञान (Knowledge)—मूल्यांकन में इस बात का अध्ययन किया जाता है कि छात्र ने विषय-वस्तु के सम्बन्ध में कितना ज्ञान अर्जित किया जाता है।

(2) कुशलताएँ (Skills)—कुशलताओं का सम्बन्ध पाठ्य विषय से सम्बन्धित कुशलताओं से है।

(3) रुचियाँ (Interests)—इनका सम्बन्ध किसी वस्तु विषय या क्रिया को पसन्द करने या न करने से है। अभिरुचि परीक्षणों का आयोजन इसी उद्देश्य से किया जाता है।

(4) बोध या अवबोध (Comprehension)—बोध से तात्पर्य है कि छात्र सीखी हुई सामग्री की कितनी प्रकार से व्याख्या करने की क्षमता रखता है।

(5) योग्यताएँ (Abilities)—छात्रों की योग्यताओं का ज्ञान करना, योग्यताएँ सामान्य तथा विशिष्ट दोनों प्रकार की होती हैं।

(6) सूचना (Information)—छात्र ने ज्ञान के सम्बन्ध में कितनी सूचना का संकलन किया है।

(7) प्रवृत्तियाँ, अभिवृत्तियाँ तथा मूल्य (Tendencies, Attitude and Value)—यह देखना कि छात्र की अपने विषय में, अपने मित्रों से, अपने विद्यालय में क्या प्रवृत्तियाँ तथा मूल्य हैं?

(8) बुद्धि (Intelligence)—यह ज्ञात करना कि कुछ छात्र क्यों भूल करते हैं तथा गलतियों की पुनरावृत्ति क्यों करते हैं?

(9) शारीरिक स्वास्थ्य (Physical Health)—शारीरिक स्वास्थ्य का मापन करना मूल्यांकन के क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। इसके लिए 'प्रश्नावली' 'स्वास्थ्य इतिहास' तथा निरीक्षण पद्धतियों का प्रयोग किया जाता है। वास्तव में शारीरिक स्वास्थ्य भी एक महत्वपूर्ण तत्व है, जिनका मापन किए बिना कोई भी मूल्यांकन अधूरा रह जाएगा।

(10) छात्रों की त्रुटियाँ (Mistakes of Students)—मूल्यांकन के द्वारा छात्र की जाँच हो जाती है कि वह त्रुटियाँ क्यों कर रहा है। त्रुटियों का ज्ञान हो जाने पर उनके निराकरण के प्रयास किए जाते हैं।

मूल्यांकन की विधियाँ (Techniques of Evaluation)

मूल्यांकन की प्रमुख विधियों को निम्न रूप में प्रस्तुत किया गया है—

(i) साक्षात्कार (Interview)—इस विधि में मापनकर्ता एवं मूल्यांकनकर्ता उस व्यक्ति अथवा छात्र से सीधा सम्पर्क करता है जिसकी विशेषता उस पर किसी क्रिया के प्रभाव का पता लगाना होता है। इसके बाद उससे तत्सम्बन्धी प्रश्न पूछता है और उसके उत्तरों तथा क्रियाओं को समझता है। यह विधि अवलोकन विधि से इस बात से भिन्न है। यह विधि भी व्यक्तिनिष्ठ विधि है परन्तु फिर भी शिक्षा नीति शिक्षा योजना, शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यचर्या एवं शिक्षण विधियों की उपयोगिता तथा शिक्षा प्रशासकों एवं अध्यापकों के व्यवहार का पता लगाने में सहायता प्रदान करती है। इसमें मापनकर्ता एवं विषयी दोनों के बीच अन्तःक्रिया होती है। विषयी मापन क्रियाओं के प्रति अनुक्रिया करता है।

(ii) अवलोकन या निरीक्षण—अवलोकन से तात्पर्य किसी वस्तु, प्राणी अथवा क्रियाओं की विशेषताओं को आँखों से देखकर और मन-मस्तिष्क से समझकर मानक शब्दों में प्रकट करने से होता है। अवलोकन व्यक्ति के व्यवहार का मापन करने की प्राचीन विधि है।

Scanned with CamScanner

अवलोकन व्यक्ति की अपनी दृष्टि और अपनी सूझ-बूझ पर निर्भर करता है। यह मनुष्य व्यक्तिनिष्ठ विधि है। इसके परिणामों पर पूर्ण रूप से निर्भर नहीं रहा जा सकता। किन्तु छोटे बच्चे जो मौखिक एवं लिखित परीक्षा के प्रति जागरूक नहीं होते उनकी आदतों, संवेगात्मक स्थि बौद्धिक परिपक्वता, रुचियों के विकास, अभिवृत्तियों में परिवर्तन, सामाजिक समायोजन की सीमा उनके व्यक्तित्व का पता लगाने के लिए इसका प्रयोग अति आवश्यक होता है।

(iii) लिखित मूल्यांकन—अधिकतर विद्यालयों में लिखित परीक्षाओं का आयोजन किया है। ये परीक्षाएँ निबन्धात्मक तथा वस्तुनिष्ठ दोनों की प्रकार की होती हैं, इन परीक्षाओं के अन्त कार्य सौंपना, प्रतिवेदन अंकित करना एवं कागज पेन्सिल की परीक्षाएँ आती हैं। इससे बालकों प्रत्यास्मरण, विषय सामग्री के संगठन, विश्लेषण एंव संश्लेषण की योग्यता का पता चलता है। परीक्षाएँ प्रमाणीकृत भी हो सकती हैं और अध्यापक द्वारा निर्मित भी हो सकती हैं। शिक्षक कक्षा परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए वांछित व्यवहारों का मापन कर सकता है। मूल्यांकन के लिए रूप अधिक प्रचलित हैं—निम्बन्धात्मक तथा वस्तुनिष्ठ।

(iv) मौखिक मूल्यांकन—इस प्रकार की परीक्षा में मौखिक प्रश्न, वाद-विवाद, विचार-विम के द्वारा हम सूचनात्मक ज्ञान एवं अध्ययन की योग्यता की जाँच करते हैं। छात्रों के वैयक्तिक गु की जानकारी के लिए मौखिक परीक्षा बहुत उपयोगी है।

(v) प्रयोगिक मूल्यांकन—प्रयोगिक परीक्षा का प्रयोग, प्रयोगिक विषयों जैसे— विज्ञान, भूगो तथा कृषि आदि में किया जाता है। ऐसी परीक्षाओं से बालकों में प्रयोगिक शक्ति का अनुमान लगाय जा सकता है।

(vi) श्रेणी मापनी (Rating Scale)—इस विधि को निर्धारण मापनी और निर्धारण विधि भी कहते हैं। इसमें समस्या विशेष से सम्बन्धित अनेक कथन होते हैं, निर्धारक को अपनी दृष्टि से उन्हें श्रेणीबद्ध करना होता है। इसलिए इसे श्रेणी मापनी भी कहते हैं। यह निम्नांकित प्रकार की होती है-

(अ) चैक लिस्ट (Check List)—चैक लिस्ट में किसी समस्या से सम्बन्धित अनेक तथ्य दि होते हैं। निर्धारक को अपनी दृष्टि से उपयुक्त पर चिह्न लगाना होता है। चैक लिस्ट का प्रयोग शिक्ष नीति तथा शिक्षा योजना आदि एवं छात्रों के गुण-दोष का पता लगाने एवं व्यक्तित्व मापने के लि किया जाता है।

(ब) आंकिक मापनी (Numerical Scale)—इस विधि के अन्तर्गत किसी समस्या से सम्बन्धि 3, 5 अथवा 7 तथ्य दिए होते हैं। छात्रों को प्रत्येक तथ्य को उसकी सार्थकता के आधार पर अंक (1, 2, 3), (1, 2, 3, 4, 5) तथा (1, 2, 3, 4, 5, 6, 7) देने होते हैं। इसका प्रयोग शिक्षा एवं छात्र की समस्याओं एवं व्यक्तित्व मापन के लिए किया जाता है।

(स) क्रमिक मापनी (Ordering Scale)—इसके अन्तर्गत किसी समस्या या गुण से सम्बन्धि प्रत्येक तथ्य को अंक प्रदान करने के लिए स्थान पर उसके गुणों को एक साथ प्रस्तुत किया जाता है और निर्धारक से उन्हें क्रमबद्ध कराया जाता है।

इसका प्रयोग किसी छात्र में यथा गुणों की सापेक्षिक स्थिति का पता लगाने एवं उसके व्यक्तित्व मापन या मूल्यांकन के लिए किया जाता है।

(द) ग्राफिक मापनी (Graphic Scale)—इसमें किसी समस्या से सम्बन्धित प्रत्येक कथन को अंक प्रदान करने के स्थान पर उसके लिए एक क्षैतिज रेखा प्रस्तुत की जाती है, इसे सातत्य भी कहते है। छात्र इन कथनों से सम्बन्धित अपने विचार का क्षैतिज रेखा के किसी बिन्दु पर प्रकट करते हैं। निर्धारक क्षैतिज रेखा पर लगाए गए बिन्दुओं की दूरी के आधार पर उनकी सम्पत्ति का मापन करता है।

(य) बाध्य चयन मापनी (Forced Choice Scale)—इसमें प्रत्येक प्रश्न के दो या दो से अधिक उत्तर दिए होते हैं। छात्र को इन उत्तरों में से ही किसी एक उत्तर का चयन करना पड़ता है। इसलिए इसे बाध्य चयन मापनी कहते हैं। इसका प्रयोग किसी छात्र के गुण होने या न होने के बारे में जानकारी प्राप्त होती है तथा इसका प्रयोग छात्र के व्यक्तित्व मापन के लिए किया जाता है।

(vii) अभिलेख (Records)—छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों की जानकारी के लिए अभिलेखों का भी सहारा लिया जाता है। छात्रों की प्रगति का अभिलेख कई रूपों में रखा जाता है।

(अ) छात्रों की डायरियाँ (Pupil's Diaries)—प्रत्येक छात्र के पास अपनी-अपनी डायरियाँ होती हैं जिसमें वे अपनी दैनिक दिनचर्या लिखते हैं और अपनी रुचि अथवा अरुचि की विशेष घटनाओं को लिखते हैं। इनमें वे कविताएँ, उदाहरण तथा गाने आदि लिखने के लिए स्वतन्त्र होते हैं। इन डायरियों के द्वारा छात्रों की रुचि और अभिरुचि का पता लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त इनकी दृष्टिगत एवं सामाजिक समस्याओं का भी पता लगाया जा सकता है। इससे अध्यापक के व्यवहार का छात्रों पर पड़ने वाले प्रभाव का भी पता लगाया जा सकता है। बच्चे उसमें जो कुछ भी लिखेंगे उसी से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त होगी।

(ब) संचित अभिलेख पत्र (Cumulative Records)—संचित अभिलेख पत्र द्वारा छात्रों की विभिन्न क्षेत्रों में की गई प्रगति का क्रमिक विवरण होता है। इसमें छात्रों की परिवार सम्बन्धी सूचनाएँ, उनके स्वास्थ्य सम्बन्धी सूचनाएँ, उनकी शैक्षिक प्रगति, उनके सहपाठ्यचारी क्रियाओं में भाग लेने का विवरण एवं खेल-कूद सम्बन्धी लेखा-जोखा दिया जाता है। किसी छात्र के विद्यालय में प्रवेश लेने के समय ही उसके बारे में ये सभी सूचनाएँ इस प्रपत्र में भरी जाती हैं। इसे किसी छात्र की विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली प्रगति अथवा अवनति का उसकी रुचियों तथा उसके व्यवहार का पूरा-पूरा ज्ञान प्राप्त होता है।

(स) घटनावृत्त (Anecdotal Records)—घटना स्थल से अभिप्राय उन अभिलेखों से होता है जो अध्यापक किसी छात्र के विषय में तैयार करते हैं। इस प्रकार के अभिलेखों में छात्र से सम्बन्धित विशेष घटनाओं का वर्णन किया जाता है, जिनके द्वारा उसके संवेगात्मक व्यवहार की जानकारी ज्ञात होती है। इन अभिलेखों के द्वारा छात्रों के सामाजिक व्यवहार और व्यक्तित्व के अन्य पक्षों के विषय में जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

(द) छात्रों द्वारा निर्मित वस्तुएँ (Pupil's Products)—छात्रों के द्वारा बनाई हुई वस्तुओं से भी उनके कौशल और रुचियों का पता चलता है। जैसे-किसी छात्र के द्वारा निर्मित चित्रों को देखकर हमें केवल इतना पता चलता है कि चित्र बनाने का कौशल किस प्रकार का है किन्तु उनके प्रकार को देखने से उसकी रुचियों के बारे में भी जानकारी होती है। रुचियों का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है। इन वस्तुओं को देखकर हम उन व्यापक क्षेत्र में बच्चों की रुचियों के क्षेत्र का सरलता से पता लगा लेते हैं।

(viii) प्रक्षेपीय तकनीक (Projective Technique)—प्रक्षेपण से अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जो व्यक्ति किसी वस्तु अथवा क्रिया के प्रति अचेतन स्तर पर करता है। साफ जाहिर है कि इस तकनीक से व्यक्ति के अचेतन पक्ष का मापन किया जाता है। इस विधि का व्यक्तित्व मापन में विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है। इसके निम्न रूप हैं—

(i) क्रम तकनीक (Ordering Technique)
(ii) रोर्शा स्याही धब्बा परीक्षण (Rorschnack Ink Blot Test)
(iii) साहचर्य तकनीक (Association Technique)

Scanned with CamScanner

(iv) अभिव्यक्ति तकनीक (Expression Technique)
(v) रचना तकनीक (Construction Technique)
(vi) पूर्ति तकनीक (Completion Technique)।

(ix) परीक्षण (Tests)—परीक्षण से अभिप्राय किसी छात्र या छात्रों के समूह की मानसिक क्षमताओं, शैक्षिक उपलब्धियों एवं शैक्षिक कठिनाइयों का पता लगाने की मौखिक अथवा लिखित प्रश्नावलियों एवं उपकरणों से है। शिक्षा के क्षेत्र में प्रयोग होने वाले मुख्य परीक्षण हैं—उपलब्धि परीक्षण (Achievement Tests), बुद्धि परीक्षण (Intelligence Tests), अभिक्षमता परीक्षण (Aptitude Tests) और व्यक्तित्व परीक्षण (Personality Tests)।

इकाई योजना एवं मूल्यांकन—मूल्यांकन कार्य को शुद्ध तथा विश्वसनीय बनाने के लिए शिक्षक वार्षिक तथा इकाई योजना का निर्माण करता है, इकाई योजना का अभिप्राय छोटी से छोटी निश्चित विषय-वस्तु से है जिसका मूल्यांकन एक निश्चित समय शिक्षण के उपरान्त किया जाता है। इकाई योजना में शिक्षक इकाई परीक्षण की सहायता से विद्यार्थियों के ज्ञान का परीक्षण करता है। शिक्षक के द्वारा परीक्षण का आयोजन किया जाता है। इकाई योजना संक्षिप्त इकाई योजना होती है। ऐसा नहीं है कि इसके मूल्यांकन के लिए गिने-चुने प्रश्नों का चयन कर लिया जाए ताकि यह एक पूर्ण विचारित प्रश्नों की एक व्यापक श्रृंखला है जिसके माध्यम से विद्यार्थियों का मूल्यांकन होता है। इकाई योजना तथा उसके मूल्यांकन की विधि बनाना अध्यापक पर ही निर्भर करती है, अर्थात् अध्यापक द्वारा बनाई जाती है। इसका मानवीकरण सम्भव नहीं होता है। इसका निर्माण औपचारिक ढंग से किया जाता है। इकाई योजना का मूल्यांकन करने के लिए निम्न पदों को अपनाया जाता है—

(1) परीक्षण योजना—परीक्षण पाठ्यवस्तु का निर्माण तथा उद्देश्यों का निर्धारण पाठ्यवस्तु तथा उसके उद्देश्यों को अधिभार प्रदान करना, अनेक प्रकार के प्रश्नों की संख्या का निर्धारण करना, परीक्षण के विषय में निर्णय लेना ।

(2) परीक्षण की रचना करना—विभिन्न प्रश्नों का संकलन तथा निर्माण करना, परीक्षार्थियों के लिए परीक्षा उपयोगी निर्देश देना, प्रश्नों का सही ढंग से सम्पादन करना, परीक्षण का सम्पादन करना।

(3) परीक्षण को कार्य रूप देना—परीक्षण का प्रश्नों के अनुसार विश्लेषण कराना, परीक्षण कार्य की आलोचना करना तथा शिक्षक का अपनी योग्यता और प्रशिक्षण के आधार पर इकाई योजना का मूल्यांकन करना।

व्यक्तिगत मूल्यांकन—प्रत्येक अध्यापक विद्यार्थी की प्रगति के लिए सभी विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का मूल्यांकन करता है। कक्षा में प्रत्येक बालक ने किस विषय में कितनी प्रगति की है तथा उसकी स्थिति क्या है इस बात का अध्यापक मूल्यांकन द्वारा पता लगाता है। इस मूल्यांकन को व्यक्तिगत मूल्यांकन कहते हैं।

इस मूल्यांकन द्वारा अध्यापक को अपनी शिक्षण विधियों तथा शिक्षण की उन्नति का ज्ञान होता रहता है। वह समय-समय पर अपनी शिक्षण विधियों तथा शिक्षण तकनीक में परिवर्तन करता है। एक कुशल अध्यापक स्व मूल्यांकन के उचित विकास के लिए कक्षा की शिक्षण पद्धति में भी परिवर्तन कर लेता है तथा अपने छात्रों का मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों प्रकार से मूल्यांकन करने का प्रयास करता है। अध्यापक छात्रों की प्रगति के लिए मौखिक तथा लिखित परीक्षाओं का सहारा लेता है। अध्यापक गुणात्मक मूल्यांकन के लिए अवलोकन, सामाजमिति, स्व सूचना, साक्षात्कार तथा प्रक्षेपण जैसी युक्तियों का सहारा लेता है। कक्षागत मूल्यांकन तथा स्व मूल्यांकन अध्यापक शिक्षण हेतु आवश्यक तत्व हैं।

Scanned with CamScanner

7. आकलन के महत्त्व तथा सिद्धांतों का वर्णन कीजिए।
(Describe the importance and principles of assessment.)

उत्तर–आज की शैक्षिक आवश्यकताओं के संदर्भ में, विद्यालयों के अनुकूल विकास और उन्नति के लिए आवश्यक सभी पहलुओं के नियमित मूल्यांकन के लिए आकलन की उचित व्यवस्था को क्रियान्वित करने की आवश्यकता है।

आकलन सीखने का एक साधन है। यह अधिगम प्रक्रिया का एक ऐसा अंग है, जो किसी भी शिक्षा को यह समझने में सहायता प्रदान कता है कि उसका शिक्षण कार्य किस प्रकार का होना चाहिए।

आकलन का महत्त्व *(Importance of Assessment)*

आकलन के महत्त्व को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है–

1. निदानात्मक (Prognostic or Diagnostic)–आकलन का निदानात्मक उद्देश्य छात्रों की खोज करना तथा उनका निराकरण करना है। निदानात्मक परीक्षण एक परीक्षा है जो छात्रों की उपलब्धि नापकर उनकी दुर्बलता को ज्ञात करती है, जिससे कि उपचारात्मक कार्यवाही हेतु उपयुक्त आधार प्राप्त हो सके।

2. प्रतिपुष्टि प्रदान करना (Providing Feedback)–आकलन का उद्देश्य प्रतिपुष्टि प्रदान करना है। रचनात्मक मूल्यांकन के आधार पर जहाँ विभिन्न प्रकार के परीक्षण समय अन्तराल पर दिए जाते हैं इससे विद्यार्थियों की क्षीणता व सामर्थ्य का क्षेत्र ज्ञात किया जा सकता है और उसे सुधारने के लिए आवश्यक सुझाव दिया जा सकता है।

3. उन्नति, नियोजन, प्रमाणपत्र प्रदान करना (Providing Promotion, Placement and Certification)–आकलन मूल्यांकन का उद्देश्य उन्नति नियोजन तथा प्रमाण-पत्र प्रदान करना

Scanned with CamScanner

है। आकलन से यह पता चलता है कि बच्चे ने कितनी उन्नति की है। आकलन या मूल्यांकन छा नियोजन में मदद करता है। मूल्यांकन से बच्चे की उपलब्धि का पता चलता है तथा बच्चे को उस उप का प्रमाण-पत्र भी प्रदान किया जाता है।

4. ग्रेडिंग प्रदान करना (Providing Grading)–मूल्यांकन/आकलन का उद्देश्य ग्रेडिंग करना भी होता है। ग्रेडिंग प्रणाली में विद्यार्थियों को उनकी शैक्षणिक उपलब्धि से सम्बन्धित मूल्य परीणामों को व्यक्त करने के लिए उन्हें पास, फेल करने या पूर्णांकों में से कितने प्रतिशत अंक प्राप्त हैं, ऐसा बताने की अपेक्षा अक्षर ग्रेड A, B, C, D इत्यादि दिया जाता है।

5. निदानात्मक (Diagnostic)–मूल्यांकन का उद्देश्य निदान प्रदान करना भी है। शैक्षिक निदा अभिप्राय विशेष शिक्षण और अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों का पता लगाने के लिए तैयार की गई तकनी प्रविधियों का उपयोग तथा यदि सम्भव हो तो इनके कारणों को निर्धारित करना है। निदानात्मक परीक्ष उपलब्धि परीक्षण का ही एक रूप हैं जिसके अन्तर्गत विशिष्ट वस्तु अथवा अधिगम अनुभव के अर्जित ज्ञ की विशिष्टताओं एवं कमियों का मूल्यांकन किया जाता है।

6. विद्यार्थियों की उपलब्धि का परीक्षण करना (To test achievement of pupil)–मूल्यांक का उद्देश्य उपलब्धि परीक्षण करने से है। इसके बिना हम नहीं जान सकते कि विद्यार्थियों ने सम्बन्धित विष में वाँछित कुशलता प्राप्त कर ली है या नहीं।

7. प्रगति की रिपोर्ट करना (To report progress)–परीक्षा के परिणामों के आधार पर ह विद्यार्थियों के माता-पिता को उनकी प्रगति-रिपोर्ट भेजी जा सकती है। परिणामों के माध्यम से ही समा शिक्षा की सफलताओं एवं असफलताओं का ठीक अनुमान लगाया जा सकता है। इनसें विद्यार्थियों को भ अपनी वास्तविक स्थिति का ज्ञान होता है, साथ ही कमियों को दूर किया जा सकता है।

8. पाठ्यक्रम में सुधार (Reform in curriculum)–मूल्यांकन का आधार शिक्षा के लक्ष्य होते हैं और इन लक्ष्यों का आधार बच्चे की रुचियाँ, समाज की आवश्यकताएँ तथा शिक्षा मनोविज्ञान है। समाज की आवश्यकताएँ हमेशा एक सी नहीं रहतीं। वे समय-समय पर बदलती रहती हैं। सच तो यह है कि वैज्ञानिक आविष्कारों तथा तकनीकी प्रगति के कारण समस्त संसार ही तेजी से बदल रहा है। अतः शिक्षा के उद्देश्य भी समाज की आवश्यकताओं के अनुसार समय-समय पर बदलते रहते हैं। मूल्यांकन इस बात की माँग करता है कि इन उद्देश्यों में परिवर्तन के साथ-साथ शिक्षाक्रम में भी परिवर्तन किया जाए। उसके कुछ अंश निकाल दिए जाते हैं और कुछ नए अंश अथवा विषय उनमें सम्मिलित कर लिए जाते हैं। इस प्रकार मूल्यांकन शिक्षा क्रम में वाँछित सुधार करने के लिए प्रेरणा देता है।

9. शिक्षण-विधियों का सुधार (Improvement in methods of teaching)–शिक्षा के लक्ष्यों, शिक्षात्मक अनुभवों तथा मूल्यांकन में घनिष्ठ सम्बन्ध है। मूल्यांकन से यह पता चलता है कि शिक्षा के लक्ष्यों की प्राप्ति में प्रगति कहाँ तक हो पाई है। इससे यह भी पता चलता है कि अध्यापक की शिक्षण-विधि में कौन-कौन-से गुण अथवा दोष हैं। इस जानकारी के आधार पर अध्यापक अपनी शिक्षण विधि के दोषों में सुधार कर सकता है। अतः मूल्यांकन कार्य की फिर से योजना बनाने, नयी शिक्षण-विधियों, साधनों तथा तकनीकों का प्रयोग करने में सहायता प्रदान करता है।

10. लक्ष्यों से स्पष्ट करना (To clarify objectives)–मूल्यांकन का लक्ष्य शिक्षा के उद्देश्यों को स्पष्ट करने में सहायता करना है। मूल्यांकन द्वारा अध्यापकों को कई विषयों के विभिन्न प्रकरणों का साफ-साफ बोध हो जाता है। वे उपयोगिता के प्रकाश में प्रत्येक प्रकरण *(Topic)* के लक्ष्यों को समझने की कोशिश करते हैं।

11. निर्देशन प्रदान करना (To provide guidance)–मूल्यांकन का लक्ष्य व्यक्तिगत योग्यताओं, रुचियों, अभिरुचियों, उपलब्धियों तथा व्यक्तित्त्व के अन्य तत्त्वों के विभिन्नीकरण में सहायता करना है। मूल्यांकन के आधार पर विद्यार्थियों को शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान किया जा सकता है।

Scanned with CamScanner

12. विद्यार्थियों के व्यक्तित्त्व को आंकना (To assess personality of the pupils)–वास्तव में मूल्यांकन का सबसे महत्त्वपूर्ण लक्ष्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्त्व का मापन करना है अर्थात् उनकी सोच, बुद्धि, रुचियों, अभिरुचियों तथा उनके बौद्धिक, नैतिक, सामाजिक, भावात्मक विकास का मापन व्यक्तित्त्व के सन्तुलित विकास को निश्चित करने के लिए सही मूल्यांकन करके शिक्षा-कार्यक्रमों को बदला भी जा सकता है।

13. अध्यापक की कुशलता का परीक्षण करने में सहायक (Helps in testing the efficiency of the teacher)–शिक्षण कार्य को कुशलतापूर्वक पूरा करने के लिए अध्यापक विभिन्न शिक्षण विधियों तथा शिक्षण सामग्री का प्रयोग करता है। यदि परिणाम अच्छे नहीं होते तो इससे यह प्रतीत होता है कि शिक्षण विधि में परिवर्तन की आवश्यकता है। अध्यापक मूल्यांकन की सहायता से स्वयं का परीक्षण कर सकता है।

14. अधिक अच्छे शिक्षण में सहायता (Helps in good teaching)–विद्यार्थियों में नियमित रूप से काम करने की आदत इस बात पर निर्भर करती है कि उनके काम का मूल्यांकन ठीक ढंग से और नियमित रूप से होता है अथवा नहीं। पहले वर्गोन्नति केवल लिखित परीक्षाओं में सफलता के आधार पर ही की जाती थी। अतः विद्यार्थी तथ्यों को रटकर उनको परीक्षा में लिख देते थे। परन्तु आजकल मूल्यांकन विद्यार्थियों की प्रगति की जाँच विभिन्न साधनों द्वारा करने वाली अधिक विस्तृत तथा उपयुक्त, विस्तृत निरन्तर प्रक्रिया है। अतः सारा ध्यान और सारी शक्तिज्ञान प्राप्ति के लक्ष्य पर नहीं लगाई जा सकती। मूल्यांकन के ठीक ढंग से होने पर विद्यार्थी वाँछित अभिरुचियों, कुशलताओं, स्वभाव तथा गुण ग्राह्यता तथा सूझ-बूझ का विकास करने का पूरा-पूरा यत्न करते हैं।

15. शिक्षा की योजना का आधार (Basis of planning of education)–मूल्यांकन की मदद से यह ज्ञान होता है कि हमने विषय के उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त कर लिया है। यह आगे शैक्षिक योजनाएँ बनाने में सहायक होगी तथा ऐसे कौन-से क्षेत्र हैं जिनमें परिवर्तन की आवश्यकता है।

16. मार्गदर्शन के लिए आधार प्रस्तुत करना (It serves as a basis for guidance)–मूल्यांकन हमारी यह जानने में सहायता करता है कि शिक्षा के लक्ष्यों और उद्देश्यों की ओर विद्यार्थियों ने कितनी प्रगति की है। इससे हम उनकी कठिनाइयों, न्यूनताओं, क्षमताओं तथा उपलब्धियों का पता लगा सकते हैं। यह जानकारी हमारी शिक्षण विधि के सुधार द्वारा उन दोषों तथा त्रुटियों में सुधार करने के लिए मार्गदर्शन करती है। विद्यार्थी-अध्यापक के मार्गदर्शन में ही अधिक अच्छी प्रकार की शिक्षा प्राप्त कर सकता है। अतः मार्गदर्शन मूल्यांकन प्रक्रिया का आवश्यक अंग है।

17. अनुसन्धान के लिए सामग्री प्रदान करना (To provide data for research)–परीक्षाएँ अनुसन्धान कार्य के लिए पर्याप्त सामग्री प्रदान करती हैं। इसी आधार पर शिक्षा और परीक्षा-पद्धति में कई प्रकार के सुधार किए जा रहे हैं।

18. दाखिले का आधार (Basis of admission)–विभिन्न परीक्षणों की मदद से विद्यार्थी की विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्धि का पता लगाया जा सकता है और उसी के आधार पर उसे अगली कक्षा में दाखिला दिया जाता है।

19. शिक्षा में सफलता प्राप्त करना (To attain success in teaching)–मूल्यांकन का एक और लक्ष्य शिक्षा में सफलता प्राप्ति को सम्भव बनाना है। मूल्यांकन द्वारा हम यह बात जान सकते हैं कि शिक्षा के लक्ष्य कहाँ तक प्राप्त हुए हैं। इसके द्वारा हम शिक्षण विधियों की सफलता का भी आंकलन करते हैं। शिक्षा में उन विधियों को जारी रखते हैं, जो विद्यार्थियों को परीक्षा में सफलता की ओर ले जाती हैं और ही उन विधियों में सुधार किए जाते हैं जिनके कारण विद्यार्थियों को सफलता नहीं मिली है।

20. वजीफे देने में सहायक (Help in giving scholarships)–मूल्यांकन विद्यार्थी की प्रगति के बारे में निर्णय लेने में तथा उन्हें अभिप्रेरित करने में सहायक होता है। कभी-कभी कुछ शैक्षिक संस्थाएँ तथा बोर्ड विद्यार्थियों को वजीफे देते हैं और केवल मूल्यांकन से ही यह जानकारी मिलती है कि ये किसे देने चाहिए।

Scanned with CamScanner

21. सीखने को प्रभावित करना (To influence learning)–परीक्षाएँ विद्यार्थियों को कोर्स दोहराने, विषय-वस्तु को याद रखने, प्रश्नों का उत्तर देने के लिए विषय-वस्तु को संगठित करने और ज्ञान का व्यावहारिक प्रयोग करने के अवसर प्रदान करती हैं।

डाऊनी के अनुसार मूल्यांकन के उद्देश्य *(Purposes of Evaluation according to Downi)*

प्रो.एन.एम.डाऊनी *(Prof. N.M. Downi)* ने मूल्यांकन के निम्नलिखित उद्देश्यों का उल्लेख किया है–

1. *(i)* ग्रेडिंग, *(ii)* माता-पिता को रिपोर्ट देने तथा, *(iii)* विद्यार्थियों की पदोन्नति करने के लिए सूचना प्रदान करना *(To provide information for grading reporting to parents and promoting students.)*
2. विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करना *(To motivate the students)*
3. शिक्षा संस्था की कार्य-प्रणाली में सुधार करना *(To improve the functioning of educational institution)*
4. दाखिले के लिए छात्रों को चुनना *(To select students for admission)*
5. शिक्षण विधियों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करना *(To evaluate the effectivencess of teaching method)*
6. प्रभावशाली शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन के लिए सूचना एकत्र करना *(To collect information for effective educational and vocational guidance.)*

आकलन के सिद्धांत *(Principles of Assessment)*

आकलन के सिद्धांतों का वर्णन इस प्रकार है–

1. **आकलन विश्वसनीय तथा सतत् होना चाहिए (Assessment should be Reliable and Consistant)**–आकलन विश्वसनीय होना चाहिए। इसके लिए अंक-ग्रेड तथा इन कार्यों की अवस्थिति के लिए स्पष्ट तथा सतत् प्रक्रियाओं की आवश्यकता होती है।
2. **आकलन के बारे में सूचना स्पष्ट होनी चाहिए (Information About Assessment should be Transparent)**–आकलन कार्यों तथा प्रक्रियाओं के बारे में सूचना स्पष्ट होनी चाहिए तथा यह सूचना विद्यार्थियों, स्टॉफ सदस्यों तथा जाँचकर्ता सभी को उपलब्ध होनी चाहिए।
3. **आकलन वैध होना चाहिए (Assessment should be Valid)**–आकलन वैध होना चाहिए। वैधता यह सुनिश्चित करती है कि आकलन कार्य पर्याप्त स्तर पर अधिगम परिणाम प्राप्त करने के लिए विद्यार्थियों का आकलन करता है।
4. **आकलन समावेशी तथा निष्पक्ष होना चाहिए (Assessment should be Inclusive and Equitable)**–आकलन समावेशी तथा निष्पक्ष होना चाहिए। आकलन में सभी बच्चों को शामिल किया जाना चाहिए तथा किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए।
5. **प्रत्येक आकलन कार्यक्रम में निर्माणात्मक तथा संकलनात्मक आकलन शामिल होना चाहिए (Formative and Summative Assessment should be Included in each Programme)**–आकलन से संबंधित सभी कार्यक्रमों में निर्माणात्मक तथा संकलनात्मक आकलन को शामिल किया जाना चाहिए। निर्माणात्मक मूल्यांकन तथा संकलनात्मक मूल्यांकन दोनों साथ-साथ चलते हैं।
6. **आकलन विषय से संबंधित होना चाहिए (Assessment should be Related to Discipline or Subject)**–आकलन कार्य की विषय की प्रकृति को प्रदर्शित करना चाहिए तथा विद्यार्थियों को अपने कौशल तथा सामर्थ्य को विकसित करने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

Scanned with CamScanner

ब्लूम द्वारा अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का वर्गीकरण
(Bloom's Taxonomy of Instructional Objectives)

13. शिक्षण अधिगम प्रक्रिया पर आधारित शैक्षिक लक्ष्य, शैक्षिक उद्देश्य तथा अनुदेशनात्मक स्तर के उद्देश्यों से क्या तात्पर्य है? इनमें क्या अन्तर है?

अथवा

"शैक्षिक उद्देश्यों की टैक्सोनोमी" से क्या अभिप्राय है? कुछ प्रसिद्ध टैक्सोनीमियों का वर्णन कीजिए।

अथवा

ब्लूम तथा उसके सहयोगियों द्वारा प्रस्तुत ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्ष के शैक्षिक या अनुदेशनात्मक उद्देश्यों की टैक्सोनीमियों का वर्णन कीजिए।

उत्तर–शैक्षिक लक्ष्य, शैक्षिक उद्देश्य तथा अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का अर्थ (Meaning of Educational Aims, Educational objectives and Instructional objectives)– शैक्षिक लक्ष्य उस अन्तिम स्थिति को प्रकट करते हैं जिसे हम प्राप्त करना चाहते हैं। प्रायः वे इतने व्यापक होते हैं जिस तक पहुँचना सम्भव भी हो सकता है तथा असंभव भी। उदाहरण के तौर पर बच्चे का नैतिक या आध्यात्मिक विकास का उद्देश्य लीजिए। ये उद्देश्य इतने अस्पष्ट होते हैं कि उपलब्ध शैक्षिक ढाँचे और कक्षा की परिस्थितियों में उनकी प्राप्ति कठिन ही नहीं, असम्भव भी हो सकती है।

इसके विपरीत अनुदेशनात्मक उद्देश्य बहुत ही संकुचित व विशिष्ट होते हैं। ये उद्देश्य निश्चित, संक्षिप्त स्पष्ट व्यावहारिक व प्राप्त करने योग्य होते हैं। ये पूर्व निर्धारित होते हैं तथा इनका निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि निश्चित अवधि वाले एक निर्धारित समय में सम्पन्न किये गए सामान्य शिक्षण द्वारा सुगमता से उनकी प्राप्ति हो सकती है। अनुदेशनात्मक उद्देश्य शिक्षण व अधिगम के वाँछित परिणाम होते हैं। इसी कारण इसे शिक्षण तथा उद्देश्यों का नाम भी दिया जाता है। इनका उल्लेख सदा अपेक्षित छात्र व्यवहार या वाँछित व्यवहार परिवर्तन के रूप में किया जाता है। इन उद्देश्यों का मापन भी सुगमता से किया जा सकता है। कक्षा में सम्पन्न अनुदेशनात्मक कार्य के पश्चात् विद्यार्थी जिस प्रकार के अपेक्षित व्यवहार का प्रदर्शन कर सकेंगे इस व्यवहार का मापन योग्य उचित शब्दावली में व्यक्त करना ही अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का प्रयोजन है।

शैक्षिक उद्देश्य, शैक्षिक लक्ष्य एवं शिक्षण उद्देश्य में अंतर (Difference among Educational aims, educational objectives and Instructional objectives)– शैक्षिक उद्देश्य, शैक्षिक लक्ष्य एवं शिक्षण उद्देश्य के बीच की स्थिति है। ये शैक्षिक लक्ष्यों में अधिक विशिष्ट, सीमित एवं सुनिश्चित होते हैं परन्तु शिक्षण उद्देश्य से कम विशिष्ट और अधिक विस्तृत होते हैं। शैक्षिक उद्देश्य शिक्षा के सामान्य प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं। किसी भी विषय के शिक्षण उद्देश्य शैक्षिक उद्देश्यों पर ही आधारित होते हैं। इस प्रकार शिक्षण उद्देश्य, शैक्षिक उद्देश्यों पर आधारित होते हैं और शैक्षिक उद्देश्य, शैक्षिक लक्ष्यों पर निर्भर करते हैं।

उद्देश्यों के इन व्यापक और सीमित दृष्टिकोण और उनके प्रभाव क्षेत्र को निम्नांकित रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

Scanned with CamScanner

इस दृष्टिकोण के अनुसार शैक्षिक लक्ष्य वह विशाल सागर है, जिसके गर्भ (womb) में अनेक शैक्षिक उद्देश्य समाए हुए हैं और आगे चलकर अनुदेशनात्मक या शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों के अन्तर्गत समाविष्ट हो जाते हैं।

शैक्षिक एवं अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का वर्गीकरण
(Taxonomy of Educational and Instructional objectives)

शिक्षण कार्य के विशिष्ट परिणामों की व्याख्या करने वाले शिक्षण व अधिगम उद्देश्य एक व्यापक वर्ग, जिसे शैक्षिक उद्देश्य कहा जाता है, में समाविष्ट हो जाते हैं। इन शैक्षिक उद्देश्यों का सीधा सम्बन्ध बच्चे के व्यवहार के ज्ञानात्मक (cognitive-knowing), भावात्मक (Affective feeling) व क्रियात्मक (Psycho-motor-doing) तीनों पक्षों (Domains) से है। इस प्रकार से कक्षा के कार्यों के फलस्वरूप विशिष्ट और संक्षिप्त शिक्षण-अधिगम परिणामों के रूप में शैक्षिक उद्देश्यों का विश्लेषण किया जा सकता है।

अनुदेशनात्मक एवं शैक्षिक उद्देश्यों (Instructional and educational objectives) का वर्गीकरण करने की दिशा में अनेक विद्वानों द्वारा प्रयास किए गए हैं परन्तु बी. एस. ब्लूम (B.S.Bloom) तथा उनके सहयोगियों द्वारा 1956 ई. में किया गया प्रयास सराहनीय है, जिसने अपनी रचना "शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण" (Taxonomy of Educational objectives) में इसका वर्णन किया है। टेक्सोनोमी (Taxonomy) का अर्थ वर्गीकरण करने की एक प्रणाली है, जिसके द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों को बहुत ही सहज एवं स्पष्ट बना दिया है।

अनुदेशनात्मक एवं शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण इस आधार पर किया गया है कि शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया किसी पाठ्य-पुस्तक या अधिगम अनुभव द्वारा विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन लाने का एक प्रयास है। व्यवहार के तीन पक्ष हैं—ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive-knowing domain), भावात्मक पक्ष (Affective-feeling domain), तथा क्रियात्मक पक्ष (Psychomotor-doing domain)। ब्लूम ने इन तीनों पक्षों के आधार पर अनुदेशनात्मक या शैक्षिक उद्देश्यों का वर्गीकरण निम्न प्रकार से किया है–

(i) ज्ञानात्मक उद्देश्य (Cognitive objectives)
(ii) भावात्मक उद्देश्य (Affective objectives)
(iii) क्रियात्मक उद्देश्य (Psychomotor Conative objectives)

प्रथम ज्ञानात्मक पक्ष का वर्गीकरण ब्लूम तथा अन्यों ने 1956 ई. में, दूसरे भावात्मक पक्ष का वर्गीकरण ब्लूम तथा उसके सहयोगी क्रथवाल व मरीआ (Krath wohl and Maria-1964) में तथा तीसरे क्रियात्मक पक्ष का वर्गीकरण सिम्पसन (Simpson-1966) तथा हेरो (Harrow-1972) ने प्रस्तुत किया। इन सभी पक्षों का संक्षिप्त वर्गीकरण इस प्रकार है–

ज्ञानात्मक पक्ष के शैक्षिक एवं अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का वर्गीकरण
(Taxonomy of Educational and Instructional objectives in the Cognitive Domain)

ब्लूम ने ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों को 'सरल से कठिन' (*Simple to complex*) तथा शिक्षण-अधिगम के निम्न स्तर से आरम्भ करके ऊँचे से ऊँचे स्तर तक ले जाने के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए छः वर्गों में विभाजित किया है।

ये वर्ग इस प्रकार हैं–

(i) ज्ञान (knowledge)
(ii) बोध (Understanding or Comprehension)
(iii) प्रयोग (Application)
(iv) विश्लेषण (Analysis)
(v) संश्लेषण (Synthesis)
(vi) मूल्यांकन (Evaluation)

(1) ज्ञान (Knowledge) (सबसे निम्न स्तर) :
(अ) विशिष्टताओं का ज्ञान (Knowledge of specifics)
(i) पदों का ज्ञान (Knowledge of Terminol...

Scanned with CamScanner

(ii) विशिष्ट तथ्यों का ज्ञान (Knowledge of specific facts)

(ब) विशिष्ट ज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करने के उपायों एवं परम्पराओं का ज्ञान (Knowledge of ways and means of dealing with specific)

(i) परम्पराओं का ज्ञान (Knowledge of Conventions)

(ii) प्रचलन तथा तारतम्य का ज्ञान (Knowledge of trends and sequences)

(iii) वर्गीकरण एवं वर्गों का ज्ञान (Knowledge of classifications and Categories)

(iv) कसौटियों का ज्ञान (Knowledge of criteria)

(v) विधियों का ज्ञान (Knowledge of methodology)

(स) ज्ञान के किसी क्षेत्र के सार्वभौमिक तथा अमूर्त प्रत्ययों का ज्ञान (Knowledge of universals and abstractions in a field)

(i) प्रनियमों तथा सामान्यीकरण का ज्ञान (Knowledge of Principles and generalisations)

(2) बोध (Comprehension) (ज्ञान के बाद दूसरे क्रम का निम्न स्तर)

(i) अनुवाद (Translation)

(ii) अर्थापन (Interpretation)

(iii) बहिर्वेशन (Extrapolation)

(3) प्रयोग (Application) (तीसरे क्रम का निम्न स्तर)

(4) विश्लेषण (Analysis) (उच्च स्तर)

(i) तत्त्वों का विश्लेषण (Analysis of elements)

(ii) सम्बन्धों का विश्लेषण (Analysis of Relationship)

(iii) संगठनात्मक प्रनियमों का विश्लेषण (Analysis of organisational principles)

(5) संश्लेषण (Synthesis) (उच्चतर स्तर)

(i) एक नवीन संप्रेषण का उत्पादन (Production of unique communication)

(ii) किसी प्रस्तावित कार्यवाही के लिए योजना बनाना (Production of a plan or a proposed set of operations)

(iii) अमूर्त सम्बन्धों के समुच्चय का निर्माण (Derivation of a set of abstract relations)

(6) मूल्यांकन (Evaluation)

(i) आन्तरिक साक्ष्यों के आधार पर मूल्य निर्धारण (Judgement in terms of internal evidence)

(ii) बाह्य कसौटियों के आधार पर मूल्य निर्धारण (Judgement in terms of external criteria)

दूसरे शब्दों में ब्लूम द्वारा प्रस्तुत किये गये ज्ञानात्मक पक्ष के उपर्युक्त वर्गीकरण को हम इस प्रकार से स्पष्ट कर सकते हैं–

(1) ज्ञान (Knowledge)–इस वर्ग में विद्यार्थियों को पाठ्यवस्तु के विशिष्ट तथ्यों, पदों, परम्पराओं, प्रचलनों, वर्गों, कसौटियों, प्रनियमों, सामान्यीकरणों, सिद्धान्तों, एवं संरचनाओं का प्रतिभिज्ञान (*Recognition*) तथा प्रत्यास्मरण (*Recall*) कराने का प्रयास किया जाता है तथा कक्षा में इसके लिए समुचित परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती हैं।

(2) बोध (Comprehension)–ज्ञान वर्ग में जिन तथ्यों, पदों, परम्पराओं, वर्गों तथा प्रनियमों आदि का प्रयोग किया जाता है, जिससे विद्यार्थी उस प्राप्त ज्ञान को अपने शब्दों में अनुवाद करके व्यक्त कर सकें तथा बाह्य गणना तथा उल्लेख कर सकें। ज्ञान के बिना बोध नहीं हो सकता। अतः ज्ञान वर्ग इस वर्ग के लिए आवश्यक आधार है।

Scanned with CamScanner

(3) प्रयोग (Application)–किसी भी तथ्य नियम के सिद्धान्त को सामान्यीकरण करने, उनकी कमजोरियों का निदान करने तथा पाठ्यवस्तु का प्रयोग करने के लिए यह आवश्यक है कि पहले उस वस्तु का ज्ञान व बोध होना चाहिए। तब ही विद्यार्थी उचित ढंग से अपनी योग्यतानुसार व्यक्तिगत परिस्थितियों में उस ज्ञान का प्रयोग कर सकेंगे। अतः ज्ञान व बोध वर्ग इस वर्ग के आधार हैं।

(4) विश्लेषण (Analysis)–इस वर्ग में विद्यार्थियों को तथ्यों, नियमों या सिद्धान्तों आदि का विश्लेषण, उनके सम्बन्धों का विश्लेषण तथा उनका व्यवस्थित सिद्धान्तों के रूप में विश्लेषण करना होता है। अधिगम की गई वस्तु के तत्त्वों को इस प्रकार अलग-अलग करने और उनका सम्बन्ध स्थापित करने के लिए ज्ञान, बोध व प्रयोग के उद्देश्यों की प्राप्ति आवश्यक है।

(5) संश्लेषण (Synthesis)–विद्यार्थी पहले चार वर्गों के उद्देश्यों की प्राप्ति के पश्चात् ही सीखी गई पाठ्यवस्तु के तथ्यों, नियमों, सिद्धान्तों आदि के तत्त्वों को एक नवीन रूप में व्यवस्थित करके एक नया संप्रेषण, योजना या प्रारूप तैयार किया जाता है।

(6) मूल्यांकन (Evaluation)–किसी भी शिक्षण कार्य की सफलता इस बात पर निहित है कि विद्यार्थी यह निर्णय ले सकें कि उन्होंने जो भी अधिगम किया है वह मूल्य की दृष्टि से उपयोगी है या नहीं। अतः इस स्तर पर आन्तरिक साक्ष्यों व बाह्य कसौटियों के आधार पर बच्चों में पाठ्य-वस्तु के तथ्यों, सिद्धान्तों और नियमों आदि के बारे में निर्णय लेने की योग्यता विकसित होती है।

भावात्मक पक्ष के शैक्षिक एवं अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का वर्गीकरण (Taxonomy of Educational and Instructional Objectives in the Affective Domain)–ब्लूम तथा उसके सहयोगियों कथवाल और मरिया ने 1964 ई० में भावात्मक पक्ष के उद्देश्यों का जो निम्न स्तर से उच्च स्तर पर जाते हुए जिस रूप में प्रस्तुत किया है वे निम्न हैं–

भावात्मक पक्ष के उद्देश्यों का वर्गीकरण *(Taxonomy of Objectives in Affective Domain)*

(1) आग्रहण पर ध्यान देना (Receiving or attending)–यह सबसे निम्न स्तर का उद्देश्य है।
   - (i) चेतना (Awareness)
   - (ii) ग्रहण करने की तत्परता (Willingness to receive)
   - (iii) नियन्त्रित या चयनात्मक अवधान (Controlled or Selected attention)

(2) अनुक्रिया (Responding)
   - (i) अनुक्रिया करने की सम्मति देना (Acquie Sence in Responding)
   - (ii) अनुक्रिया करने की तत्परता (Willingness to respond)
   - (iii) अनुक्रिया करने में संतुष्टि (Satisfaction in response)

(3) आंकलन (Valuing)
   - (i) किसी मूल्य की स्वीकृति (Acceptance of value)
   - (ii) किसी मूल्य के लिए अधिक लगाव या अभिरुचि (Preference for a value)
   - (iii) प्रतिबद्धता (Commitment)

(4) संगठन (Organisation)
   - (i) एक मूल्य प्रणाली को धारण करना (Conceptualisation of a value)
   - (ii) एक मूल्य प्रणाली का संगठन करना (Organisation of a value system)

(5) मूल्य प्रणाली का चरित्रीकरण अथवा विशेषीकरण (Characterisation by a value or value complex)
   - (i) सामान्यीकृत समुच्चय (Generalised set)
   - (ii) चरित्रीकरण या विशेषीकरण (Characterisation)

Scanned with CamScanner

इस प्रकार कहा जा सकता है कि Bloom तथा उसके सहयोगियों Krath Wohl तथा Maria ने भावात्मक पक्ष के शैक्षिक उद्देश्यों को पाँच भागों में विभाजित किया है, जिनको निम्न ढंग से स्पष्ट किया जा सकता है–

(1) आग्रहण या ध्यान देना (Receiving or Attending)–यह भावात्मक पक्ष का पहला स्तर है। भावात्मक विकास की दृष्टि से सबसे पहले मानव मूल्यों की अनुभूति करानी होती है। अनुभूति के लिए किसी न किसी प्रकार के उद्दीपन (Stimulus) का होना अत्यन्त आवश्यक है। इस उद्दीपन के प्रति विद्यार्थियों को आवश्यक रूप से आकृष्ट होना चाहिए और उसके प्रति अनुक्रिया (Response) करने की इच्छा उत्पन्न होनी चाहिए। इसलिए इस वर्ग में अध्यापक का काम विद्यार्थियों को प्रस्तुत विषय-वस्तु के प्रति पर्याप्त रूप से आकर्षित करना तथा इस प्रकार से अभिप्रेरित करना है कि विद्यार्थियों में मानवीय मूल्यों को भली-भाँति ग्रहण करने के लिए पर्याप्त इच्छा जाग्रत हो जाए। इच्छा जाग्रत होने और ध्यानाकर्षित होने की यह स्थिति विद्यार्थियों में उचित समय तक बनी रहे, इस कार्य हेतु पर्याप्त चेष्टा करना ही अध्यापक का कर्त्तव्य होता है।

(2) अनुक्रिया (Responding)–भावात्मक विकास का दूसरा स्तर विद्यार्थियों की उचित अनुक्रिया से सम्बन्धित है। इस वर्ग के लिए आग्रहण वर्ग एक आधार का काम करता है। विद्यार्थियों में मूल्यों को उचित रूप से ग्रहण करने की इच्छा जब जाग्रत हो जाती है और जब वह शैक्षिक गतिविधियों में सुरुचिपूर्वक भाग लेना प्रारम्भ कर देता है तभी उसके द्वारा की हुई अनुक्रियाओं की पहचान हो सकती है। विद्यार्थी अनुक्रिया करने में समर्थ हों, इसके लिए उन्हें अनुक्रिया करने के लिए तैयार किया जाना चाहिए, उनमें अनुक्रिया करने की इच्छा जाग्रत करनी चाहिए और वे अनुक्रिया करने में पर्याप्त सन्तुष्टि का अनुभव करें, इसके लिए आवश्यक प्रयत्न करने चाहिए। इस प्रकार से यह वर्ग विद्यार्थियों में आत्माभिव्यक्ति (Self-expression), आत्म-विकास (Self-development) और उससे प्राप्त सन्तुष्टि को विकसित करने में सहायता करता है।

(3) आंकलन (Valuing)–इस वर्ग की क्रियाएँ अपने दोनों वर्गों की क्रियाएँ व उनके परिणामों पर आधारित हैं। जब कोई विद्यार्थी किसी वस्तु या विचार के प्रति पर्याप्त रूप से आकर्षित होकर उसके प्रति अपनी अनुक्रिया व्यक्त करता है, तो उसकी यह अनुक्रिया, उस वस्तु या विचार उतने ही मूल्यवान होते हैं जितना कि उन्हें वह अपने प्रयोजन पूर्ति का साधन समझता है।

(4) संगठन (Organisation)–जैसे-जैसे विद्यार्थी किसी वस्तु या विचार के मूल्य को ध्यान में रखकर उसके प्रति अपनी व्यवहार सम्बन्धी अनुक्रियाएँ करना सीख जाता है, वैसे-वैसे इस दिशा में आगे बढ़ते हुए जब वह कई प्रकार के व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्यों को ग्रहण करता है तो कई परिस्थितियों में उसे ऐसा आभास होता है कि ये मूल्य अन्तर्विरोधी हैं। उनके इस टकराव को रोकने के लिए तथा इन मूल्यों को भली-भाँति अर्जित करने के लिए मूल्यों के स्वरूप और संप्रत्यय का ज्ञान कराना आवश्यक हो जाता है। इस ज्ञान के बाद ही इनका व्यवस्थापन और संगठन करना होता है।

(5) मूल्यों का चरित्रीकरण या विशेषीकरण (Value complex)–भावात्मक पक्ष के विकास के इस स्तर तक पहुँचने के लिए इसके पहले चारों वर्गों के उद्देश्यों की प्राप्ति आवश्यक है। यहाँ आकर विद्यार्थी के व्यक्तिगत व सामाजिक मूल्यों के समन्वय से उत्पन्न जिस मूल्य प्रणाली अथवा चरित्र की भूमिका बन चुकी होती है, उसे विशेष रूप प्रदान करने का प्रयत्न किया जाता है। चरित्र सम्बन्धी यह स्तर व्यक्ति का वह अपेक्षाकृत स्थायी तथा वैयक्तिक रूप होता है, जिसके आधार पर उसके व्यक्तित्त्व की पहचान होती है।

क्रियात्मक पक्ष के शैक्षिक अनुदेशनात्मक उद्देश्यों का वर्गीकरण *(Taxonomy of Education and Instructional objectives in the conative or psychomotor Domain)*

बालक को अपने भौतिक तथा सामाजिक वातावरण के साथ समायोजन करना बड़ा आवश्यक है। इस सही ढंग से समायोजन करने के लिए बालक का क्रियात्मक या मनोशारीरिक पक्ष से सम्बन्धित उद्देश्यों को वर्गीकृत करने का सबसे पहला प्रयत्न **सिम्पसन** (*Simpson*) ने 1966 ई. में किया। बाद में **हैरो**

Scanned with CamScanner

(*Harrow*) ने 1972 ई. में इससे आगे कुछ विकास किया। हैरो ने इन उद्देश्यों को छः वर्गों में विभा किया है, जिसका विस्तृत अध्ययन अगले अध्याय 'उद्देश्यों को व्यावहारिक शब्दावली में लिखना' (*Writi objectives in Behaviour terms*) में किया जाएगा। यहाँ वर्गीकृत अंगों का आवश्यक वर्णन दि जा रहा है–

1. सहज क्रियात्मक अंग संचालन (Reflex movements)–व्यवहार के क्रियात्मक पक्ष यह वर्ग सबसे निम्न स्तर का है। ये क्रियाएँ किसी वस्तु के सम्पर्क में आते ही बिना किसी इच्छा के अ आप ही होने लगती हैं। स्वचलित स्नायुतन्त्र व मस्तिष्क के द्वारा संचालित व नियन्त्रित होती हैं। इसलिए क्रियाएँ जन्म से मृत्यु तक विकसित होती रहती हैं। इनके बिना जीवन असम्भव है। जब बच्चा अपने चा ओर फैले किसी उद्दीपन के सम्पर्क में आता है तो कोई न कोई प्रतिक्रिया अनजाने में ही व्यक्त करता जैसे हाथ पर चींटी गिरते ही हाथ झटक देता है। इस प्रकार से मानव के सभी प्रकार के व्यवहार इन सह क्रियाओं पर आधारित हैं। अतः इस वर्ग में विद्यार्थी की इन सहज क्रियाओं को और भी सहज बनाने क प्रयास किया जाता है।

2. आधारभूत अंग संचालन (Basic Fundamental movements)–प्रथम वर्ग की सहज क्रियाओं के आधार पर ही बालक में स्वाभाविक आधारभूत अंग संचालन सम्बन्धी क्रियाएँ विकसित होती हैं। किसी प्रकार का आदेश मिलते ही बच्चा इस प्रकार का अंग संचालन करने लगता है। परन्तु वह इन क्रियाओं पर अधिक देर तक नियन्त्रण नहीं कर सकता है जैसे उछलना, कूदना, मनुष्य के भावी जीवन में सुदृढ़ एवं सशक्त अंग संचालन की क्षमता विकसित करने के लिए इस प्रकार की क्रियाओं का प्रशिक्षण आवश्यक है।

3. शारीरिक योग्यताएँ (Physical Abilities)–शारीरिक अंगों के उचित संचालन से ही शारीरिक योग्यता विकसित होती है तथा शारीरिक योग्यता से ही अंग संचालन में सहायता मिलती है। अतः अंग संचालन सम्बन्धी क्रियाओं में और भी परिपक्वता लाने के लिए बालक की शक्ति और सामर्थ्य को विकसित करने का प्रयास करना ही इस वर्ग का उद्देश्य है।

4. प्रत्यक्षीकरण योग्यताएँ (Perceptual Abilities)–इन योग्यताओं को अर्जित करने के लिए पेशीय क्रियाएँ व शारीरिक योग्यताएँ आधार का काम करती हैं। प्रत्यक्षीकरण योग्यताएँ बच्चे की कर्मेन्द्रियों व ज्ञानेन्द्रियों के सामंजस्य पर निर्भर करती हैं। बच्चा जान-बूझ कर, अपनी इच्छानुसार इन योग्यताओं को अर्जित करने का प्रयास करता है। इन कौशलों की सहायता से बच्चा वातावरण में फैले उद्दीपनों को पहचानते तथा समझते हुए उनके साथ समायोजन करने में सफल होता है। साथ ही अपनी पाँचों इन्द्रियों से प्राप्त ज्ञान में विभेद करने की योग्यता अर्जित करता है जैसे छू कर (*By touching*), देखकर (*By seeing*), सुनकर (*By hearing*), सूँघकर (*By smelling*), पहचानना तथा अन्तर बताना। इन्हीं योग्यताओं की सहायता से बाद में उच्च कोटि की पेशीय क्रियाएँ विकसित होती हैं।

5. कौशलयुक्त अंग संचालन (Skilled movements)–पहले चारों वर्गों में अर्जित योग्यताओं तथा क्रियाओं के आधार पर कौशलयुक्त अंग संचालन सम्बन्धी क्रियाएँ विकसित होती हैं। इनके लिए बच्चों को पूर्ण प्रशिक्षण लेना होता है। तभी वह इस प्रकार के कौशलयुक्त जटिल अंग संचालन की क्रियाएँ कर सकता है। पहले इन क्रियाओं को जान-बूझकर सीखना पड़ता है, फिर इनका अभ्यास करना पड़ता है और तब अच्छी तरह से सीख लेने के पश्चात् विद्यार्थी बिना किसी प्रयास के इन क्रियाओं को पूर्ण कौशल के साथ प्रदर्शित करने में समर्थ हो जाता, जैसे तैरना या नृत्य कौशल आदि।

6. सांकेतिक संप्रेषण (Non-Discussive Communications)–सांकेतिक संप्रेषण वह व्यवहार है, जिनके द्वारा विद्यार्थी बिना कहे ही अपने भावों को पूर्ण कौशल के साथ अभिव्यक्त कर सके। मनोपेशीय क्रियाएँ इस कार्य हेतु आवश्यक आधार का काम करती हैं। अतः पहले पूर्व कौशल अर्जित कर लेने के पश्चात् विद्यार्थी में इतनी योग्यता आ जाती है कि वह सामान्य मेखाकृति से लेकर पूर्ण रूप से कौशलयुक्त व्यवहार एवं अभिनय के द्वारा अपने भावों का संप्रेषण कर सकता है।

◆◆◆

Scanned with CamScanner

1.7 अधिगम के लिए मूल्यांकन में अध्यापक एक सुविधाकर्ता के रूप में (Teacher as Facilitator in Assessment for Learning)

14. अधिगम के लिए मूल्यांकन से आप क्या समझते हैं? अधिगम के लिए मूल्यांकन में अध्यापक की भूमिका का एक सुविधाकर्ता के रूप में वर्णन कीजिए।
(What do you know about assessment for learning? Describe the role of teacher as a facilitator in assessment for learning.)

उत्तर–अधिगम के लिए मूल्यांकन को निर्माणात्मक मूल्यांकन कहा जाता है। निर्माणात्मक मूल्यांकन तब होता है जब विद्यार्थी उन वर्षों में से गुजर रहे होते हैं जब उन के रूप का निर्माण होता है। इसका निहित अर्थ है–अनुदेशन के दौरान विद्यार्थियों का मूल्यांकन। शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों को भली-भांति निश्चित करने के बाद जब पाठ पढ़ाना शुरू कर दिया जाता है और विद्यार्थी अधिगम अनुभवों की प्राप्ति का कार्य प्रारंभ कर देते हैं तो समय-समय पर यह निश्चित करना कि विद्यार्थियों द्वारा अधिगम अनुभवों की उपलब्धि किस रूप में एवं किस सीमा तक हो रही है, तथा शिक्षण-अधिगम उद्देश्यों की प्राप्ति में अध्यापक और विद्यार्थी दोनों किस सीमा तक सफल हो रहे हैं, निर्माणात्मक मूल्यांकन के कार्यक्षेत्र में आता है। इसमें पाठ्यक्रम की छोटी एवं स्वतन्त्र इकाइयों को आधार बनाया जाता है। *(Formative evaluation takes place during formulative years of the students. It implies evaluation of pupils during units of the curriculum.)* इस प्रकार के मूल्यांकन में विद्यार्थियों/अध्यापकों के कार्य की जाँच कर उसमें गुण-दोष निकालना नहीं, बल्कि उन्हें अपने कार्य में सुधार लाने तथा प्रगति पथ पर अग्रसर होने के लिए आवश्यक सूचनाएँ तथा मार्गदर्शन प्रदान करना होता है। इस दृष्टि से निर्माणात्मक मूल्यांकन को एक ऐसे मूल्यांकन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। जिसमें ऐसी मूल्यांकन तकनीकों का प्रयोग होता है, जिनके द्वारा शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया से जुड़े हुए तत्त्वों तथा क्रियाओं की अच्छाई और कमजोरियों को सतत से प्रकाश में लाकर उनमें अपेक्षित सुधार लाने की भूमिका निभाई जाती है।

निर्माणात्मक मूल्यांकन विद्यार्थी एवं अध्यापक दोनों को अधिगम की सफलता एवं असफलता के सम्बन्ध में निरन्तर पृष्ठपोषण (Feedback) प्रदान करता रहता है।

(i) विद्यार्थी का पृष्ठपोषण (Feedback to the students) उसके सफल अधिगम को पुनर्बलन प्रदान करता है। यह उसकी उन विशिष्ट गलतियों की पहचान करता है जिन्हें तत्काल शुद्ध करने की आवश्यकता होती है।

(ii) अध्यापक का पृष्ठपोषण (Feedback to the teacher) उसे अपना अनुदेशन सुधारने की सूचना प्रदान करता है और उसे व्यक्तिगत एवं दलीय उपचारात्मक कार्य की ओर अग्रसर करता है।

यह मूल्यांकन इस दृष्टि से निदानात्मकता पर पूरा जोर देता है। जैसे–पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों तथा तकनीक, अध्यापक व्यवहार, विद्यार्थी द्वारा किए जाने वाले प्रयत्न, शिक्षण-अधिगम वातावरण तथा परिस्थितियाँ किस में किस सुधार की आवश्यकता है। इस बात का निदान करना इस प्रकार के मूल्यांकन की प्रमुख विशेषता मानी जा सकती है।

मूल्यांकन शिक्षा के क्षेत्र में बहुत उपयोगी है। कोई छात्र कितना जानता है? उसकी कक्षा में क्या उपलब्धि है? शिक्षण विधि क्या होती है? शिक्षण को छात्रों के अनुसार कैसे समायोजित किया जाए? इन सभी प्रश्नों के उत्तर मूल्यांकन से ही मिलते हैं। छात्रों को अपनी उपलब्धि और कमजोरी का ज्ञान कराना है तो उन्हें मूल्यांकन प्रक्रिया से गुजारना ही पड़ेगा।

Scanned with CamScanner

छात्र, शिक्षण सामग्री और शिक्षक आपसी तालमेल से शिक्षण-अधिगम कार्य को पूरा करते हैं। मूल्यांकन प्रक्रिया में किसी कौशल को प्राप्त करने के लिये तीनों में सामन्जस्य बनाना बहुत आवश्यक होता है। यदि हमारे पास शिक्षण सामग्री छात्रों के उच्च और निम्न स्तर की होगी तो हम चाहे कितना भी अच्छा पढ़ा लें, छात्रों के लिये उसका प्रभाव नगण्य होगा। हमारे पास शिक्षण सामग्री तो अच्छी है, लेकिन यह सामग्री हम छात्रों तक उचित रूप में प्रस्तुत न कर पायें तो भी इसका कोई असर नहीं होगा। शिक्षण सामग्री का छात्रों तक प्रभावशाली ढंग से पहुँचना बहुत आवश्यक होता है। यह अध्यापक की अक्षमता की पहचान है। इस स्तर पर मूल्यांकन अभिक्रिया शिक्षक को यह सुझाव देगी कि उसे अपने शिक्षण को प्रभावी एवं सरल बनाने के लिये किन शिक्षण प्रतिमानों (Teaching Models), शिक्षण युक्तियों (Teaching Strategies) तथा शिक्षण प्रविधियों (Teaching Techniques) का प्रयोग करना चाहिए? शिक्षण प्रक्रिया में छात्रों का भी काफी योगदान होता है। यदि कोई छात्र शिक्षण कार्य में रुचि नहीं ले रहा है तो चाहे हम उसे कितने ही प्रभावशाली ढंग से पढ़ा लें, कितनी भी अच्छी शिक्षण सामग्री क्यों न हो, ऐसी अवस्था में मूल्यांकन अध्यापक को यह निर्देश देगा कि छात्रों को प्रेरित (Motivate) किया जाए जिससे वह शिक्षण प्रक्रिया में रुचि लें। मूल्यांकन के द्वारा अध्यापक जहाँ अपने शिक्षण का मूल्यांकन करता है वहीं दूसरी ओर छात्रों की उपलब्धि का मूल्यांकन करता है। इस प्रक्रिया में यदि अध्यापक यह अनुभव करे कि छात्रों की उपलब्धि अच्छी नहीं हैं तो वह ऐसी परीक्षा प्रणाली उपयोग में लायेगा जो परम्परागत परीक्षा प्रणाली से भिन्न हो तथा छात्रों के विभिन्न व्यक्तित्व, आयोगों व विषयगत उपलब्धि का मापन वस्तुनिष्ठ ढंग से कर सके। यदि वह अपनी शिक्षण विधि से सन्तुष्ट नहीं है तो वह दूसरे ढंग अपनायेगा, जिससे वह अपेक्षित उद्देश्यों को प्राप्त कर सके। पाठ्यक्रम तो हमें यह बताता है कि हमें कितने शिक्षण उद्देश्य प्राप्त करने हैं और किन-किन क्षेत्र में प्राप्त करने हैं। मान लो हम विज्ञान विषय पर कुछ पढ़ाना चाहते हैं। हमने कक्षा में छात्रों के सम्मुख विषय को बहुत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया, लेकिन फिर भी विद्यार्थियों की उपलब्धि का स्तर संतोषजनक नहीं रहा। ऐसे हालात में मूल्यांकन अभिक्रिया हमें यह सुझाव देगी कि कक्षा विशेष के लिये इस विषय पर नैदानिक परीक्षा (Diagnostic Test) की रचना की जाए। नैदानिक परीक्षा इसलिये ली जाती है, जिससे किसी विशेष समस्या के विशेष कारणों को ढूंढा जा सके तथा उसके उपचार हेतु कुछ समाधान सोचा जा सके। इसे उपचारात्मक शिक्षण (Remedial Teaching) कहा जाता है। मान लीजिए हम इतिहास में कुछ ऐतिहासिक तिथियों को समझा रहे हैं, हमारे सामने इस प्रत्यय को समझाने में समस्याएं आती हैं। जैसे एक तिथि को किसी दूसरी तिथि या घटना से जोड़ना या किसी स्थान या व्यक्ति विशेष का नाम भूल जाना। नैदानिक परीक्षणों के माध्यम से हम इन समस्याओं को समाधान आसानी से सुलझा सकते हैं साथ ही शिक्षण-अधिगम से सम्बन्धित अन्य परीक्षणों की जटिल समस्याओं को हल कर सकते हैं।

मूल्यांकन प्रक्रिया से हम यह जानने का प्रयत्न करते हैं कि हमने शिक्षण उद्देश्य की प्राप्ति में कहाँ तक सफलता प्राप्त की है। **डेविस (Davis)** के अनुसार छात्रों में मूल्यांकन के फलस्वरूप जो परिवर्तन पाये जाते हैं वे निम्न हैं–

1. मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा छात्रों की उपलब्धियों का मापन करके यह ज्ञात करना कि अपेक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति हुई है या नहीं।
2. यह मालूम करना कि कौन-सा उद्देश्य रह गया?
3. शिक्षण उद्देश्य की प्राप्ति को वरीयता क्रम देना।
4. सर्वोत्तम शिक्षण विधि का उपयोग करना।

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को सुचारु बनाने के लिये हमें बालक की क्या रुचियाँ हैं, अभिरुचियाँ हैं, क्षमताएं हैं, आवश्यकताएं हैं, तथा विद्यालय के प्रवेश के समय उसके बौद्धिक विकास का स्तर क्या था? इन सभी बातों का समावेश करते हुए शिक्षक को बालक के व्यक्तित्व का समुचित विकास करना चाहिए।

◆◆◆

Scanned with CamScanner

7 वर्तमान परीक्षा पद्धति : आलोचना एवं सुधार

(EXAMINATION : CRITICISM AND IMPROVEMENT)

"Examinations are as old as the knowledge of man. The teacher desires to know the results of his teachings, the student is keen to know his achievements of learning and the parents wish to know the educational progress of their wards. All this is possible through examination."

—**The Rajasthan Board Journal of Education**

"There are no misfit children, there are misfit schools, misfit texts and studies and misfit examinations." —**F.Bark**

"An examination is a mile stone on the road to knowledge."

"An examination should be to find out what the pupil knows rather than what he does not know." —**W.M. Ryburn**

"A teacher who evaluates more extensively and more thorougly will teach more." —**Rajasthan Board of Sec.Edu.**

"Examinations are not real incentives to real learning." —**Anon**

"Examinations dominate and distort the curriculum. Certain subjects or parts of subjects are over emphasized, while others are neglected. Questions are spotted." —**H.G. Stead**

भारत में परीक्षा पद्धति का सूत्रपात

(Origin of Examination System in India)

भारत में वर्तमान परीक्षा का इतिहास लगभग सौ वर्ष पुराना है। प्राचीन काल में अधिकांश मौखिक परीक्षा का ही उल्लेख मिलता है। परीक्षा के रूप में केवल एक अध्यापक बाहर से आकर छात्रों को अपने सम्मुख बैठाकर उनसे मौखिक प्रश्न पूछता था और उस के आधार पर छात्र को सुयोग्य अथवा अयोग्य घोषित कर देता था। सन् 1850 तक हमारे देश में लगभग ऐसी ही स्थिति रही। लिखित परीक्षाएं मौखिक परीक्षाओं से बाद में आयीं। विदेशों में सन् 1702 में सबसे पहले लिखित परीक्षा इंग्लैंड की कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी (Cambridge University) ने ली। धीरे-धीरे छात्रों की संख्या में वृद्धि के कारण मौखिक परीक्षाओं का प्रयोग असुविधाजनक एवं असम्भव-सा प्रतीत होने लगा। परिणामतः लिखित परीक्षाओं का दौर प्रारम्भ हो गया। लेकिन भारत में वर्तमान परीक्षा पद्धति के प्रादुर्भाव का श्रेय वुड के घोषणा-पत्र (Wood Despatch) को दिया जाता है। सन् 1854 के वुड के घोषणा-पत्र के अनुसार देश में तीन विश्वविद्यालयों कलकत्ता, मद्रास तथा बम्बई की स्थापना की गयी तथा इन विश्वविद्यालयों के संयुक्त प्रयासों के आधार पर सन् 1857 में वर्तमान परीक्षा पद्धति का सूत्रपात हुआ। चीन में परीक्षा प्रणाली का प्रयोग लगभग 2200 ईसा पूर्व माना जाता है।

पिछले सौ वर्षों या उससे अधिक में परीक्षा के बहुत से पहलुओं में आशातीत परिवर्तन हुए हैं जिसका एक मात्र कारण सामूहिक परीक्षा प्रणाली (mass examination system) है। साथ ही, शिक्षा के विस्तार में तीव्र गति से वृद्धि होने के कारण विद्यार्थियों की संख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। आज शिक्षा का सामाजिक मूल्य बढ़ा है। **दवे (Dave)** लिखते हैं—"व्हाइट कॉलर जॉब्स तथा प्रतिष्ठित उच्च पदों की प्राप्ति में परीक्षा-फलों के योगदान ने परीक्षा पद्धति के बारे में आम जनता में नई चेतना जाग्रत की है। आर्थिक-सामाजिक जागरूकता को ऊँचा उठाने में भी परीक्षा प्रणाली एक महत्वपूर्ण उपकरण का काम करती है।"

Scanned with CamScanner

(The use of examination results and certificates for the selection of personal for white collar jobs and high status employment created a new social consciousness among the people regarding the system of examination as a whole. Public examinations, virtually, become a powerful tool in accomplishing upward socio-economic mobility.)

हमारे यहाँ परीक्षा (Public examination) में इस प्रकार की स्वतंत्रता है कि अधिक से अधिक छात्रों को परीक्षा में सम्मिलित होने के अवसर दिये जाते हैं। यही कारण है कि आज हम परीक्षा को ही सब कुछ समझने लगे हैं। शिक्षा की सामाजिक उपादेयता इसीलिए गौण (secondary) हो गई है। परीक्षाओं का आधिक्य होने की वजह से ही न केवल परीक्षा पद्धति में दोष उत्पन्न हो गये हैं वरन् इससे हमारे सम्पूर्ण शैक्षिक ढाँचे को जटिल समस्याओं से उबरने में कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। यही नहीं विभिन्न आयोगों, समितियों एवं अनुसन्धानों के माध्यम से भी प्रचलित परीक्षा पद्धति की समय-समय पर कटु आलोचनाएँ करके उसके दोषों की ओर संकेत किया गया है। फिर भी प्रभावपूर्ण शिक्षा व्यवस्था की दृष्टि से यदाकदा शैक्षिक प्रगति का मूल्यांकन करके इन दोषों का निराकरण करना अत्यन्त आवश्यक है (To teach without testing is unthinkable. Appraisal of outcomes is an essential feedback of teaching.)

कहने का तात्पर्य यह है कि शिक्षा की प्रगति को बनाये रखने के लिए परीक्षा पद्धति में सुधार करना भी उतना ही आवश्यक है। यह विकल्प सोचना कि परीक्षा प्रणाली को ही समाप्त कर दिया जाय उचित नहीं, बल्कि हमारा ध्येय परीक्षा प्रणाली की कमजोरियों एवं दोषों को दूर करना होना चाहिए।

प्रचलित परीक्षा पद्धति की आलोचना
(Criticism of the Existing Pattern of Examination)

परीक्षा प्रणाली में सुधार निःसन्देह आज की हमारी शिक्षा प्रणाली से जुड़ी अनेक समस्याओं की जड़ है। राधाकृष्णन कमीशन ने तो यहां तक कह दिया है कि अगर हमसे कोई उच्च शिक्षा में सुधार के सम्बन्ध में सिफारिश करने को कहे तो हम मात्र परीक्षा में सुधार की बात कहेंगे। कमीशन ने आगे चेतावनी देते हुए कहा कि अगर समय रहते हमने इस दिशा में कुछ ठोस कदम नहीं उठाये तो हमारी सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली बिखर जायेगी।

हमारी वर्तमान परीक्षा प्रणाली अनेक दोषों से पूर्ण है। सम्पूर्ण शिक्षा मात्र परीक्षा केन्द्रित (examination centred) होकर रह गई है। स्कूलों में साप्ताहिक, मासिक, त्रैमासिक, अर्द्धवार्षिक, वार्षिक और न जाने कितने प्रकार की परीक्षाओं का अम्बार लगा रहता है जिससे कि स्कूल, कॉलिजों के शैक्षिक सत्र का एक बडा भाग मात्र इन परीक्षाओं की तैयारी में ही व्यर्थ चला जाता है।

इसी तथ्य को **डॉ० ब्लूम** ने अपने शब्दों में इस प्रकार लिखा है—

"In India Educational system consisting of curriculum, syllabus, text books, methods of teaching is just for the preparation of examination. Examinations are test of memorisation." **—Dr. B.S. Bloom**

आज प्रचलित परीक्षा प्रणाली की सर्वत्र कटु आलोचना की जा रही है। लोग परीक्षा की वैधता को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। यह एक आश्चर्यजनक बात है कि स्कूल स्तर पर अधिकांश छात्र क्यों फेल हो जाते हैं ? इसके कारण छात्रों में विषय सम्बन्धी ज्ञान का अभाव ही नहीं

Scanned with CamScanner

अपितु परीक्षा लेने के बहुत से दोषपूर्ण तरीके हैं। आज परीक्षाएं हमारी सम्पूर्ण शैक्षिक वातावरण पर छाई हुई हैं जिनका अनुचित प्रभाव कक्षा परिस्थितियों पर ही नहीं वरन् उन छात्रों की उपलब्धि पर भी पड़ता है। अध्यापक छात्र को पढ़ाने के स्थान पर अपने पाठ्यक्रम की समाप्ति पर अधिक ध्यान देता है, साथ ही, विद्यार्थी का उद्देश्य भी ज्ञान प्राप्त करने के स्थान पर मात्र परीक्षा पास कर लेना हो गया है। सैद्धान्तिक प्रश्न पत्रों (theory papers) में अधिक अंक लाना छात्र आवश्यक नहीं समझता जबकि प्रयोगात्मक (practicals) में अधिकतम अंक प्राप्त करने के लिए वह किसी भी हथकंडे को अपनाने में हिचकिचाहट महसूस नहीं करता, क्योंकि ऐसा करना वह अपने लिये अपेक्षाकृत सरल समझता है। इस कार्य में अध्यापक स्वयं भी दोषी है। वह अपने दायित्व को निभाने में परिश्रम, लगन, उत्साह, रूचि एवं वस्तुनिष्ठता से काम नहीं लेता। परीक्षा से पूर्व उसकी शिक्षण प्रक्रिया सुव्यस्थित एवं प्रभावी नहीं होती। मात्र परीक्षा से कुछ दिन पूर्व वह महत्वपूर्ण प्रश्नों का चयन पाठ्य पुस्तकों अथवा गत वर्षों के अन्सोल्वड पेपर्स से करके अपने विद्यार्थियों को रटने के लिए कह देता है और अपने आप को दायित्व से उऋण समझने लगता है। यह उसकी बहुत बड़ी भूल होती है और छात्र इस भ्रामक स्थिति में अच्छी उपलब्धि नहीं कर पाता। परीक्षा पद्धति का एक मुख्य यान्त्रिक दोष यह है कि हम केवल कुछ गिने चुने प्रश्नों का मूल्यांकन करके (लगभग पाँच) छात्र की भाविष्यिक सफलता का अनुमान लगा लेते हैं, जबकि इस पूरी मूल्यांकन प्रक्रिया में पेपर सेट करने से लेकर अंक प्रदान करने तक मात्र संयोगवश सफलता अथवा संयोग त्रुटि (chance success or chance factor) के अतिरिक्त कुछ नहीं होता है। प्रश्न-पत्र में अत्यधिक छूट दी जाने की वजह से परीक्षा की वैधता (validity) घट जाती है क्योंकि कुछ प्रश्न इतने सरल होते हैं कि उन्हें कमजोर से कमजोर छात्र भी हल कर देते हैं जबकि कुछ प्रश्न इतने जटिल होते हैं कि इनका उत्तर मेधावी छात्र भी नहीं दे पाता। इस प्रकार प्रश्न-पत्र की कठिनाई स्तर समान नहीं रह पाती। इसके अतिरिक्त परीक्षक उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन भी अपने व्यक्तिगत आधार पर करता है। यही कारण है कि यदि एक परीक्षक किसी परीक्षार्थी को विशेष योग्यता अंक प्रदान करता है तो दूसरा परीक्षक उसे फेल भी कर देता है। **टेलर (Taylor)** ने कहा है कि कुछ परीक्षक परीक्षार्थी को न्यूनतम उत्तीर्णांक (border pass mark) देकर या उससे कुछ कम अंक देकर अपनी शान समझते हैं। कुछ परीक्षक अपने स्वयं के मानक स्थापित कर लेते हैं और उनका मूल्यांकन प्रश्न पत्र सम्बन्धी कमियों से प्रभावित हुए बिना हेलो प्रभाव (Halo effect) पर आधारित रहता है। परिणामस्वरूप परीक्षा की विश्वसनीयता भी निम्न स्तर की हो जाती है।

परीक्षा परिणामों को अत्यधिक महत्व देना उचित नहीं है। कुछ विद्यालयों में छात्रों के परीक्षा फलों को ही अध्यापक की योग्यता का मापदण्ड मान लिया जाता है। यह परम्परा **हन्टर आयोग** (1882) ने डाली जिसने सिफारिश की थी कि अध्यापकों के वेतन का निर्धारण उनके द्वारा पढ़ाये गये विद्यार्थियों के परीक्षाफल के आधार पर किया जाय। आज भी बहुत से विद्यालय निरीक्षक तथा प्रबन्ध समितियाँ इसी परम्परा का अनुसरण कर रहे हैं। अभिभावक गण तथा समाज भी इस मान्यता को आज अधिक महत्व दे रहे हैं।

आज की परीक्षा प्रणाली अमनोवैज्ञानिक है। छात्र परीक्षा देने में खुशी का अनुभव करने के स्थान पर उसे एक बोझ एवं भय समझता है। इसीलिए परीक्षा को भिन्न-भिन्न नामों से सम्बोधित किया जाता है, जैसे—'Fever of Examination', 'Nightmare', 'Three hours gamble,' 'Blood suckers' आदि-आदि। आज की परीक्षाओं को एक नाटक अथवा स्वांग (Farce) के अतिरिक्त कुछ नहीं समझा जाता। अधिकांश लोगों की यह धारणा बन गई है कि परीक्षाएं हमारे उपयोग की कम हैं बल्कि अहित ज्यादा करती हैं। ये वास्तविक ज्ञान की परीक्षा न होकर अन्धकार एवं उथले ज्ञान की ही जाँच करने में सक्षम होती हैं। **रायबर्न** के शब्दों में, "इसमें कोई

Scanned with CamScanner

शक नहीं कि परीक्षाएं हमारे रचनात्मक कार्यों की दुश्मन हैं।" (It goes without saying that examinations are enemies of creative work.) —Ryburn

हम मात्र परीक्षाओं के घेरे में हैं। परीक्षा का विचार आते ही हमें अपनी मेरुदण्ड (Spinal cord) ठंडी होती-सी जान पड़ती है। परीक्षा के दिनों में विद्यार्थी के मस्तिष्क में परीक्षा का भूत सवार हो जाता है और वह भूत को पाठ्यक्रम को रटकर या अन्य युक्तियां अपनाकर भगाने के प्रयास में लगा रहता है। यह बडे ही दुर्भाग्य की बात है कि परीक्षा के बारे में लोगों में स्वस्थ दृष्टिकोण क्यों नहीं जागृत हो पा रहा है ? शायद इसका एक मात्र कारण यह है कि परीक्षा छात्र में से अभीष्ट (Best) नहीं ढूँढ पाती। ऐसे अनेकों प्रश्नों का उत्तर "परीक्षा पद्धति की समाप्ति" न होकर हमें यह स्वीकार करना चाहिये कि यह एक आवश्यक बुराई होते हुए भी सब कुछ (be-all and the end-all) नहीं होनी चाहिये। फिर हम ऐसी कोई नई प्रक्रिया क्यों नहीं अपना पाते जिससे छात्र की वर्ष भर की निरन्तर प्रगति का बोध हमें वर्ष के अन्त में सन्तोषजनक रूप से हो सके ? दोषारोपण करना सरल है, हल नितान्त मुश्किल। परीक्षाओं की घोर निन्दा करते हुए कहा जाता है कि आज की परीक्षाओं में विद्यार्थी तथा शिक्षक दोनों का एक मात्र उद्देश्य परीक्षा पास करना होता है जिससे उनकी प्रतिभा का पूर्ण विकास नहीं हो पाता है। फलतः परीक्षायें हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली को जर्जर तथा निष्क्रिय बनाने में सफल हुई हैं। सन् 1902 के **विश्वविद्यालय आयोग** ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है—

The conclusion is irresistible that education in India dominated by external control and tutelage in the form of fragmentary and unscientific examinations has resulted mostly in the perpetuation of mediocrity and retardation of genuine facts which are necessarily concomitants if not inevitable consequences of the prevailing system.

कुछ आलोचक तो यहाँ तक कहते हैं कि परीक्षायें एक अविश्वास के दर्शन (Philosophy of doubt) पर आधारित है अतः इनका त्याग करना ही उचित है। **श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी** ने सन् 1937 में मद्रास के बीसवें प्रान्तीय शिक्षा सम्मेलन के अध्यक्ष पद से बोलते हुए कहा था—

"People are anxious to know my views, there is no difficulty in my saying that examinations are no good at all. Unfortunately, the very philosophy of examinations is inadequate and inadmissible, as distrust is the key-note of the policy. Because a test is a fundamental attack on truth, it is a sign of distrust. You are truthful enough to hand over numerous boys to a teacher and a head master. Everybody will agree that the certificate of the head master and the staff who have personal touch with the boy is more reliable than the result of an examination. You are bound to trust them. If you trust them for other things, you must trust them for this also."

इतना ही नहीं विभिन्न आयोगों ने भी समय-समय पर वर्तमान परीक्षा पद्धति पर तीखे प्रहार किये हैं। **भारतीय विश्वविद्यालय आयोग (1902)** ने कहा है कि, "विश्वविद्यालय शिक्षा को परीक्षाओं से कम महत्व दिया जाता है और परीक्षाओं को शिक्षा से कहीं अधिक महत्व दिया जाता है।"

(".....the greatest evil from which the system of University Education suffers in India is that teaching is subordinated to examination and not examination to teaching.")

Scanned with CamScanner

विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (University Education Commission) 1948-49 ने कहा है कि, "भारतीय शिक्षा व्यवस्था में परीक्षा प्रणाली ही सबसे दूषित तथ्य है।" (The whole system of education is examination ridden. The frequency of examination and the manner of conducting them exercise an adverse effect upon the aims and methods of education. They suffer from a failure to define with any degree of exactness of the purpose.)

आयोग ने पुनः लिखा है—"For nearly half a century the examinations are neither valid nor complete. They are inadequate, unreliable and capricious."

—University Education Commission

लगभग पचास वर्षों से हमारी परीक्षाएं न तो वैध ही हैं और न ही पूर्ण। वे अपर्याप्त, अविश्वसनीय तथा सनकी हैं— **(विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग)**

माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Education Commission) 1952-53 ने भी प्रचलित शिक्षा प्रणाली की तीव्र आलोचना की। आयोग ने परीक्षा प्रणाली को पुस्तकीय, यान्त्रिक परम्परागत, एकक तथा संकुचित बताया।

(".....bookish and mechanical, stereotyped and rigidly uniform and did not cater to the different aptitudes of the pupils".)

आयोग ने पुनः लिखा है—"All circumstances conspire today to put undue emphasis on examinations especially external ones. But, they are influencing entire field of education to such an extent that it is going to be paralysed. They dictate curriculum and methods of teaching. Teachers as well as students assess their progress in terms of success in the examination."

आज सभी परिस्थितियाँ परीक्षाओं (विशेषकर बाह्य परीक्षाओं) पर बहुत अधिक बल देने के कारण षड़यन्त्र मात्र हैं। लेकिन ये सम्पूर्ण शिक्षा के क्षेत्र को इस सीमा तक प्रभावित किये हुए हैं कि लगता है सम्पूर्ण शिक्षा को लकवा मार जायेगा। परीक्षाएँ हमारे पाठ्यक्रम एवं शिक्षण विधियों को सुनिश्चित करने में निर्देश देती हैं। अध्यापक एवं छात्र दोनों ही अपनी सफलता का मानदण्ड परीक्षा में प्राप्त सफलता को मानते हैं।

वर्धा समिति ने भी परीक्षा पद्धति की आलोचना करते हुए अपने विचार इसी रूप में व्यक्त किये हैं—"परीक्षाएँ परीक्षार्थी की योग्यता के मापक के रूप में न तो वैध ही हैं और न ही पूर्ण। ये अपर्याप्त, अविश्सनीय तथा सनकी प्रतीत होती हैं।"

(As a measure of worth of an individual examinations are neither valid nor complete. They are inadequate, unreliable and capricious.

—Wardha Committee)

इन सभी आलोचनाओं के बावजूद भी हम परीक्षाओं का पूरी तरह बहिष्कार नहीं कर सकते।

अतः जब हम इनका बहिष्कार नहीं कर सकते तो क्यों न इस प्रणाली में संशोधन किये जायें। अधिक उचित होगा यदि हम छात्रों की परीक्षा लेने के स्थान पर उनका अनवरत् मूल्यांकन करें। अर्थात्, परीक्षा प्रणाली को बनाये रखने का औचित्य दो प्रकार से है : प्रथम, एक निश्चित समय के बाद हम यह जानना चाहते हैं कि छात्र ने कितना सीखा है ? दूसरे, छात्र स्वयं भी अपने विचारों को दूसरों के सामने प्रस्तुत करने एवं प्रभावपूर्ण ढंग से तर्क तथा व्याख्या करने की कला सीखता है। प्रचलित परीक्षाएँ दो प्रकार की हैं—

1. निबन्धात्मक परीक्षाएँ (Essay or Traditional Type)
2. वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ (Objective or New Type)

Scanned with CamScanner

निबन्धात्मक परीक्षाएँ
(Traditional Examination)

निबन्धात्मक परीक्षाओं से हम सभी भली-भाँति परिचित हैं क्योंकि प्रायः सभी स्कूल एवं कॉलिजों में इनका ही प्रयोग होता है। इन परीक्षाओ की नींव अत्यन्त गहरी है इसीलिए इन परीक्षाओं को रूढ़िवादी परीक्षाओं के नाम से भी पुकारा जाता है। निबन्धात्मक परीक्षाओं में परीक्षार्थी किसी भी प्रश्न का उत्तर विस्तार से देता है, उत्तर की कोई सीमा निर्धारित नहीं की जाती तथा परीक्षार्थी अपने मौलिक विचारों को अभिव्यक्त करने में पूर्ण स्वतन्त्र होता है। यद्यपि इन परीक्षाओं के माध्यम से परीक्षार्थी की विभिन्न मानसिक योग्यताओं, जैसे—रूचियों, क्षमताओं, अभिवृत्तियों कौशलों आदि का सही मूल्यांकन सम्भव है, फिर भी, ये परीक्षायें मूलतः इस बात पर विशेष महत्व देती हैं कि परीक्षार्थी सुन्दर लेख एवं भाषा शैली के आधार पर तथ्यों को फिर से किस कुशलता के साथ प्रस्तुत कर पाता है।

निबन्धात्मक परीक्षाओं के कई प्रकार हैं। यह परीक्षक के उद्देश्य पर निर्भर करता है कि वह किस प्रकार की परीक्षा प्रयोग में लाये।

निबन्धात्मक परीक्षाओं के गुण :

(Merits of Traditional Type Examination)

निबन्धात्मक परीक्षाओं की सामान्य आलोचना के सन्दर्भ में यद्यपि यह कहना कोई महत्व नहीं रखता कि यदि इन परीक्षाओं को सावधानीपूर्वक पूर्व नियोजित ढंग से प्रयोग में लाया जाय तो प्रभावी परिणाम प्राप्त हो सकते हैं, फिर भी, इन परीक्षाओं में कुछ महत्वपूर्ण विशेषताएँ अवश्य हैं, जो निम्न हैं—

1. अधिगम के बहुत से पहलू ऐसे हैं जिनका मूल्यांकन केवल निबन्धात्मक परीक्षाएँ ही कर सकती हैं, अन्य परीक्षाएँ नहीं।
2. ये परीक्षाएँ उच्च मानसिक प्रक्रियाओं के मापन का एक सशक्त साधन हैं।
3. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी को विचारों की अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतन्त्रता होती है।
4. इन परीक्षाओं से ज्ञान के गुणात्मक पक्षों, जैसे—शाब्दिक अभिव्यक्ति, भाषा पर अधिकार, साहित्यिक शैली, विचारों का प्रस्तुतीकरण आदि का उचित मूल्यांकन सम्भव है।
5. इन परीक्षाओं के प्रश्नों की रचना करना सरल कार्य है।
6. इन परीक्षाओं से अपेक्षित अध्ययन विधियों को विकसित करने में सहायता मिलती है।
7. ये परीक्षाएँ मितव्ययी (economical) हैं।
8. इन परीक्षाओं में नकल (cheating) की सम्भावना कम रहती है।
9. यह परीक्षा प्रणाली सभी विषयों के लिये उपयुक्त है।
10. ये परीक्षाएं विषय सम्बन्धी तथ्यों की ही जाँच नहीं करतीं वरन् तथ्यों को अनेक दूसरी परिस्थितियों में प्रयोग करने की क्षमता की भी जाँच करती हैं।
11. इन परीक्षाओं की सहायता से परीक्षार्थी के व्यक्तित्व सम्बन्धी विभिन्न पहलुओं का महत्वपूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सकता है।
12. ये परीक्षाएँ अध्ययन की आदत (study habits) का विकास करती हैं।
13. परीक्षार्थियों की एक बहुत बड़ी संख्या की परीक्षा एक साथ ले सकने के कारण समय और शक्ति दोनों की बचत हो जाती है।
14. यदि इन परीक्षाओं की रचना, प्रशासन एवं फलाँकन प्रक्रिया में सुधार हो जाय तो ये परीक्षाएँ उतनी ही विश्वसनीय एवं वैध हो सकती हैं जितनी की वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ।

Scanned with CamScanner

निबन्धात्मक परीक्षाओं की सीमाएं :

(Limitations of Traditional Examination)

1. इन परीक्षाओं में जिन प्रश्नों का चयन किया जाता है वे सम्पूर्ण पाठ्यक्रम का प्रतिनिधित्व नहीं कर पाते।
2. ये परीक्षाएँ सुन्दर लेख एवं परीक्षा युक्तियों (exam. tactics) पर अधिक जोर देती हैं फलतः कभी-कभी परीक्षार्थी परीक्षक को धोखा देने में भी सफल हो जाता है।
3. ये परीक्षाएँ रटने (cramming) पर बहुत अधिक बल देती हैं।
4. इन परीक्षाओं के माध्यम से प्रतिभा का विकास धूमिल हो जाता है।
5. ये परीक्षाएँ परीक्षार्थी को बहुत कम समय पढ़ने के लिए प्रेरित करती हैं। परीक्षार्थी महत्वपूर्ण प्रश्नों (question-spotting) की खोज में व्यस्त रहता है तथा परीक्षा से कुछ सप्ताह पूर्व ही परिश्रम करके उत्तीर्ण हो जाते हैं।
6. इन परीक्षाओं में अवसर तत्व (chance-factor) का अत्यधिक हाथ होता है।
7. इन परीक्षाओं ने शिक्षा एवं शिक्षण दोनों को परीक्षा प्रधान बना दिया है। अध्यापक एवं परीक्षार्थी दोनों की सफलता परीक्षा के परिणाम पर निर्भर करती है। परीक्षाएँ शिक्षा के साधन के स्थान पर साध्य बन गई हैं।
8. इस प्रकार की परीक्षा में बहुत से प्रश्न बहुधा संदिग्ध एवं अस्पष्ट होते हैं जिनका उत्तर परीक्षार्थी अपनी अटकल से कुछ भी दे सकता है।
9. निबन्धात्मक परीक्षाओं का अंकन आत्मनिष्ठ होता है। प्रत्येक परीक्षक का मूल्यांकन का अपना अलग तरीका होता है। एक परीक्षक मात्र कुछ पंक्तियों को देखकर अंक देता है तो दूसरा एक-एक शब्द पढ़कर। वह वही चाहता है तो उसके मस्तिष्क में होता है।
10. इन परीक्षाओं की विश्वसनीयता एवं वैधता निम्न स्तर की होती है।

निबन्धात्मक परीक्षण की विश्वसनीयता का मखौल उड़ाते हुए **वरनन (P.E. Vernan)** ने अपनी पुस्तक 'Measurement of Abilities' (1940) में दो निम्न रोचक अध्ययनों का उल्लेख किया है। **स्टार्च तथा इलीयट (Starch & Elliott-1913)** के अनुसार एक ज्यामिति परीक्षा की उत्तर पुस्तिका 116 हाई स्कूल के परीक्षकों से जंचवायी गयी। प्राप्तांकों का विस्तार 28% से 92% तक था। दो परीक्षकों ने 90% से अधिक, 18 ने 80% से 90% तक, 18 ने 30% से 60% तक तथा दो ने 30% से कम अंक प्रदान किये। **वुड (Wood-1921)** का अध्ययन और भी अधिक रोचक उपाख्यात है। एक प्रश्न पत्र छः परीक्षकों ने जाँचा। एक परीक्षक ने अपने स्वयं संदर्शन के लिए आदर्श उत्तर **(model answers)** तैयार किए और उन्हें एक परीक्षार्थी की उत्तर पुस्तिका में रखकर भूल गया। जब उन्हीं आदर्श प्रश्नों का मूल्यांकन कराया गया तो शेष पाँचों परीक्षकों ने 40% से 90% तक अंक प्रदान किये। **डॉ० हारपर (Dr. Harper)** ने अपने प्रसिद्ध अध्ययन 'Ninty Marking Ten' के अनुसार एक परीक्षक ने जिस परीक्षार्थी को विशेष योग्यता के अंक (Distinction Marks) दिये उसे सात परीक्षकों ने अनुत्तीर्ण किया, आठ ने प्रथम श्रेणी तथा इस प्रकार अंकों का विस्तार 22% से 76% तक था।

11. इन परीक्षाओं में, विशेषकर बोर्ड की परीक्षाओं में, अंकन के बाद उत्तर पुस्तिकाएँ नहीं दिखाई जाती अतः विद्यार्थी यह नहीं जान पाता कि उसे किस आधार पर अंक दिये गये हैं।

Scanned with CamScanner

12. ये परीक्षाएँ अधिक समय लेती हैं। परीक्षार्थी लिखते-लिखते थक जाता है, साथ ही सभी स्थानों पर निरीक्षण (supervision) भी एक-सा नहीं होता।
13. इन परीक्षाओं का निदानात्मक महत्व नहीं है। प्रश्नों का उत्तर विस्तृत होने से परीक्षार्थी की कमजोरियों का पता लगाना आसान कार्य नहीं है। अनेक परीक्षार्थी प्रश्न का उत्तर न जानते हुए भी इधर-उधर की गप्पें लड़ाकर कुछ न कुछ लिख ही देते हैं इससे पूरी परीक्षा का उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है।
14. परीक्षकों के व्यक्तिगत मूल्यांकन (standard) के कारण परीक्षार्थी के एक विषय के अंक दूसरे विषय के प्राप्तांकों से काफी भिन्न होते हैं।
15. परीक्षक प्रश्न का अच्छा उत्तर प्राप्त होने पर अच्छे अंक देता है लेकिन यदि उससे अगले प्रश्न का उत्तर अत्यन्त असंतोषजनक पाता है तो इस प्रश्न पर अंक तो कम देता ही है साथ ही पूर्व प्रश्न पर दिये गये अंकों को भी कम करने की सोचता है।
16. प्रश्नों को ठीक क्रम से उत्तर न देने पर भी उसे कुछ झुँझलाहट महसूस होती है।
17. यदि किसी प्रश्न के तीन खण्ड हैं और परीक्षार्थी ने उन्हें एक ही स्थान पर क्रम से उत्तर न देकर अलग-अलग पृष्ठों पर अनुचित क्रम से लिखा है तब भी परीक्षक का मूड खराब हो जाता है।
18. परीक्षक एक ऐसे उत्तर पर जो संक्षिप्त भले ही हो लेकिन स्पष्ट, सुन्दर व क्रमबद्ध तरीके से लिखा गया है अच्छे अंक देता है अपेक्षाकृत एक अधिक सही व्यापक उत्तर के जो स्पष्ट व स्वच्छ क्रमबद्ध तरीके से न लिखा गया हो।
19. दीर्घ उत्तर वाले प्रश्नों के मध्य वस्तुनिष्ठ प्रश्न के उत्तर में यदि परीक्षार्थी काँट-छाँट करता है तो परीक्षक ऐसे प्रश्न पर अंक तो पूरे दे देता है लेकिन काँट-छाँट के सन्देह को दूर करने के लिये दूसरे दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों पर कम अंक देता है।
20. कुछ परीक्षक तो उत्तरपुस्तिका के कवर पेज की रिक्तियों व हस्तलेख से ही परीक्षार्थी की योग्यता का अनुमान लगा लेते हैं व इस पूर्वाग्रह का प्रभाव उनकी अंकन प्रक्रिया पर पड़ता है।
21. कुछ परीक्षक उत्तर पुस्तिका की आन्तरिक साज सज्जा से प्रभावित हुये बिना भी नहीं रह पाते।
22. कुछ परीक्षक प्रश्नों का मूल्यांकन पेज संख्या गिनकर करते हैं चाहे उत्तर वैध भले ही न हो।
23. परीक्षार्थी द्वारा व्यर्थ में ही पेज छोड़ देने व उत्तर पुस्तिका का ठीक से प्रयोग न करने पर भी कुछ परीक्षकों का मूड खराब हो जाता है।
24. इस परीक्षा प्रणाली का एक प्रमुख दोष यह भी है कि इसमें परीक्षक अंकन का आधार दूसरे अच्छे परीक्षार्थियों के द्वारा प्राप्त अंकों को मानकर चलता है।
25. समयावधि कम हो और उत्तर पुस्तिकायें बहुत अधिक हों तो भी परीक्षक लापरवाही के साथ मूल्यांकन करता है। कुछ परीक्षक तो अपने पूर्व विद्यार्थियों तक से यह कार्य सम्पन्न करा लेते हैं।
26. प्रश्नपत्रों का प्रारूप भी प्रतिवर्ष समान नहीं रह पाता। कुछ परीक्षक जान-बूझकर अत्यन्त कठिन प्रश्न पत्र बनाते हैं तो दूसरे परीक्षक अत्यन्त सरल। प्रश्न पत्रों का कठिनाई स्तर विश्वविद्यालय स्तर पर ही भिन्न नहीं होता वरन् प्रतिवर्ष बदलता रहता है।

Scanned with CamScanner

वस्तुनिष्ठ परीक्षाएँ अथवा नवीन परीक्षा प्रणाली
(Objective Type Examination Or New Type Test)

निबन्धात्मक परीक्षाओं के दोषों को दूर करने के लिए सबसे पहले अमेरिका में नवीन प्रकार की परीक्षाओं का प्रचलन हुआ। **बैलार्ड (Ballard)** महोदय के प्रयत्नों के फलस्वरूप यूरोप में भी लोगों का ध्यान नई प्रकार की परीक्षाओं की ओर गया। हमारे देश में शिक्षा विशेषज्ञों ने कहा कि परीक्षा प्रणाली को समाप्त करना तो असम्भव है लेकिन परीक्षा प्रणाली ऐसी हो जो प्रश्न पत्रों की रचना, प्रशासन एवं अंकन की दृष्टि से उत्तम हो। प्रश्न पत्रों में प्रश्नों की संख्या अधिक होनी चाहिये ऐसा करने से बालक के सम्पूर्ण पाठ्यक्रम की जाँच हो सकेगी। इसके अतिरिक्त रटने को भी प्रोत्साहन नहीं मिलेगा और नकल करने की भी गुंजाइश न रहेगी। इन विशेषताओं से पूर्ण यह नवीन परीक्षा प्रणाली विदेशों में प्रयोग में लायी जाती है। हमारे यहाँ भी अब इस प्रकार के प्रश्न, प्रश्न-पत्रों में आने लगे हैं।

वस्तुनिष्ठ परीक्षा से तात्पर्य ऐसे परीक्षणों से है जिनकी रचना अध्यापक अपने अनुभवों के आधार पर शिक्षण उद्देश्यों, अपेक्षित व्यवहारिय परिवर्तनों एवं आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु करता है। इस प्रणाली के अनुसार प्रश्न-पत्र में प्रश्न तो पर्याप्त संख्या में होते हैं लेकिन उनका उत्तर एक या दो शब्दों में ही देना होता है या मात्र निशान लगाना होता है। इन परीक्षाओं का बढ़ता हुआ महत्व प्रवेश परीक्षाओं एवं अन्य प्रतियोगी परीक्षाओं में देखा जा सकता है। शोध कार्यों ने भी निबन्धात्मक परीक्षाओं की अविश्वसनीयता की पुष्टि की है। कुछ लोग भ्रमवश यह समझते हैं कि निबन्धात्मक परीक्षाओं एवं वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं में विरोध (anti-thesis) है। लेकिन यहाँ यह स्मरण कराना आवश्यक है कि आधुनिकतम अनुसन्धान परिणामों के आधार पर यह कहना अधिक उचित होगा कि एक अच्छे प्रश्न-पत्र में दोनों ही प्रकार की परीक्षाओं के प्रश्नों को स्थान दिया जाना चाहिये।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के गुण :

(Merits of Objective Type Examination)

1. नवीन प्रकार की परीक्षा प्रणाली की अंकन प्रक्रिया वस्तुनिष्ठ होती है। परीक्षक की मनः स्थिति (mood) एवं विचारों का अंकन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
2. पाठ्यक्रम की दृष्टि से ये परीक्षाएं अत्यन्त व्यापक होती हैं।
3. अंकन में समय कम लगता है।
4. ये परीक्षाएं अध्यापक को किसी छात्र-विशेष के साथ पक्षपात करने का अवसर प्रदान नहीं करतीं।
5. इन परीक्षाओं के माध्यम से अधिगम सम्बन्धी कमजोरियों का निदान आसानी से लगाया जा सकता है।
6. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी ऊबता नहीं बल्कि परीक्षा एक दिलचस्प पहेली बन कर रह जाती है।
7. वस्तुनिष्ठ परीक्षाएं पूर्णतया वैध होती हैं।
8. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी को अंकन की वस्तुनिष्ठता की जाँच कर लेने के अवसर मिलते हैं। वह दूसरे परीक्षार्थी की उत्तर पुस्तिका से मिलान करके अपने अंकों की सन्तुष्टि कर लेता है।
9. इन परीक्षाओं से शिक्षण के उच्च स्तरीय उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है।
10. ये परीक्षाएँ प्रमापीकृत (standardized) की जा सकती हैं।
11. ये परीक्षाएँ विद्यार्थियों की अमनोवैज्ञानिक रटन विद्या को बढ़ावा नहीं देतीं।

Scanned with CamScanner

12. इन परीक्षाओं की विभेदकारिता क्षमता (discriminating power) उच्च स्तर की होती है।
13. ये परीक्षाएँ अटकल से काम लेने वाली प्रवृत्ति को बढ़ावा नहीं देतीं।
14. इन परीक्षाओं में प्रश्न-पत्रों को हल करने में परीक्षार्थी को अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ता।
15. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी केवल सुन्दर लेख एवं भाषा शैली के आधार पर ही अधिक अंक प्राप्त नहीं कर सकता।
16. इन परीक्षाओं से समय की पर्याप्त बचत होती है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं की सीमाएं :

(Limitations of Objective Type Examination)

1. ये परीक्षाएँ छात्र उपलब्धि के विभिन्न पहलुओं, जैसे—सौन्दर्यात्मक पक्ष, रचनात्मक कल्पना, साहित्यिक शैली, विचारों की अभिव्यक्ति आदि का मापन नहीं कर सकतीं।
2. एक ही प्रश्न के कई भ्रामक उत्तर देना छात्रों के अपरिपक्व मस्तिष्क पर अनुकूल प्रभाव नहीं डालते। यह शैक्षिक दृष्टि से पूर्णतया अमनोवैज्ञानिक है।
3. निबन्धात्मक परीक्षाओं की तुलना में इन परीक्षाओं पर अधिक व्यय आता है।
4. इन परीक्षाओं के एक बार प्रमापीकृत हो जाने से सब लोगों को इनका ज्ञान हो जाता है, परिणामस्वरूप भविष्य में इनका प्रयोग अधिक वैध नहीं रह पाता।
5. इन परीक्षाओं में परीक्षार्थी बहुत से प्रश्नों का उत्तर मात्र अनुमान से ही दे देता है जिससे छात्रों में धोखा देने की प्रवृत्ति (cheating) का विकास होता है।
6. वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं के निर्माण के लिए निर्माता को विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है।
7. इन परीक्षाओं के माध्यम से विचारों की मौलिक अभिव्यक्ति सम्भव नहीं।
8. इन परीक्षाओं से विद्यार्थियों के उथले ज्ञान का मूल्यांकन होता है।
9. ये परीक्षाएँ शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया में एकरूपता लाने का प्रयास करती हैं।
10. निबन्धात्मक परीक्षाओं की भाँति इन परीक्षाओं में भी प्रश्न-पत्रों की रचना करते समय परीक्षक की मनोवृत्ति, विचार एवं भावनाओं का प्रभाव पड़ता है।
11. इस परीक्षा से परीक्षार्थी के व्यक्तित्व पर प्रकाश नहीं पड़ता।
12. इन परीक्षाओं ने साँख्यिकी के प्रयोग पर अनावश्यक रूप से बल दिया है।

वर्तमान परीक्षा प्रणाली पर **डॉ० बी० एस० ब्लूम (B.S. Bloom)** ने भी बड़े तीखे प्रहार किये हैं। उनके अनुसार मुख्य दोष निम्न हैं—

1. कक्षा में जो कुछ भी कार्य किया जाता है वह विषय के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर नहीं किया जाता है।
2. बहुत से अनावश्यक तथ्य केवल परीक्षा में उत्तीर्ण होने के लिए ही रट लिये जाते हैं।
3. प्रश्न पत्रों में मौलिकता (originality) का पूर्ण अभाव रहता है।
4. उत्तर पुस्तिकाओं का अंकन करने में परीक्षक की आत्मनिष्ठता (subjectivity) हावी रहती है।
5. बाह्य परीक्षाएँ छात्र उपलब्धि का असन्तोषप्रद एवं अपर्याप्त मापक हैं।
6. विभिन्न विषयों के परिणामों के आधार पर निष्कर्ष निकालने की परम्परा अत्यन्त दूषित है। इससे असफल छात्रों का प्रतिशत बहुत ऊँचा हो जाता है।

Scanned with CamScanner

7. पाठ्यक्रम दूषित है। इसमें केवल विषय के कुछ शीर्षकों का उल्लेख मात्र होता है, साथ ही, निर्दिष्ट उद्देश्यों का भी अभाव रहता है। फलतः परीक्षा उद्देश्य आधारित (objective based) नहीं हो पाती।
8. प्रश्न पत्रों में कुछ महत्वपूर्ण तथा प्रिय (favourite) प्रश्नों को अनावश्यक रूप में दोहराया जाता है। इससे छात्र हर वर्ष अपना अध्ययन इन्हीं प्रश्नों तक केन्द्रित रखते हैं।

"Favourite questions are repeated, slight changes are made in the wordings of questions in successive years, there are great similarities in the questions used in different states, most of the questions appeared to be a sort that might be thought about on the last day or a short time before the examination material was due. Rarely, did I encounter questions which suggested that the paper-setter had given careful thought to the matter over an extended period of time. In short, the questions were routine and stereotyped as though every one was quite weary with the system and was merely going through the formalities required by it."

—DR. B.S. Bloom 'Evaluation in Secondary Schools'.

9. प्रश्न पत्रों में कठिनाई स्तर (Difficulty Index) का कोई ध्यान नहीं रहता।
10. गणित जैसे विषय की उपलब्धियों का मूल्यांकन वर्ष में गिनी-चुनी परीक्षाओं से सम्भव नहीं है।
11. परीक्षाओं में औपचारिकता का पुट नहीं होना चाहिये। विषय सम्बन्धी अध्यापक को ही सम्बन्धित प्रश्न-पत्र का निर्माण करने को कहा जाय।
12. मूल्यांकन की वर्तमान प्रणाली बालक के पाठ्यक्रम के अतिरिक्त कार्यों एवं सफलताओं की पूर्ण रूप से उपेक्षा करती है।

निबन्धात्मक एवं वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का तुलनात्मक अध्ययन

(DISTINCTION BETWEEN ESSAY TYPE AND OBJECTIVE TYPE EXAMINATION)

विशेष बिन्दु	निबन्धात्मक परीक्षा	वस्तुनिष्ठ परीक्षा
1. प्रश्न रचना (Construction of Items)	प्रश्नों की रचना करना सरल कार्य है। इसमें प्रश्नों की संख्या कम होती है। वे सामान्य (general) प्रकार के होते हैं। इनके उत्तर लम्बे (extend answers) होते हैं।	प्रश्नों की रचना करना अपेक्षतया कठिन कार्य है। यह अधिक तथा विशिष्ट (specific)होते हैं। उत्तर छोटे (brief) होते हैं।
2. विषय वस्तु (Content coverage)	सीमित पाठ्यवस्तु का मूल्यांकन होता है।	पाठ्यवस्तु के व्यापक रूप का मूल्यांकन सम्भव होता है।

Scanned with CamScanner

3. उद्देश्य प्राप्ति (Achievement of objectives)	अवबोध (understanding) उद्देश्य की प्राप्ति सफलतापूर्वक हो जाती है। ज्ञान की परीक्षा सामान्यतः हो सकती है।	ज्ञान (knowledge) उद्देश्य की प्राप्ति सफलतापूर्वक हो जाती है। अवबोध की परीक्षा भी सामान्यतः हो सकती है।
4. सार्थकता (Significance)	ये परीक्षाएं उपलब्धि परीक्षा, चयन एवं वर्गीकरण के लिए अधिक उपयुक्त हैं।	ये परीक्षाएं निष्पत्ति परीक्षा, निदान, बुद्धि एवं प्रवणता (aptitude) परीक्षाओं आदि के लिए उपयुक्त हैं।
5. अभिव्यक्ति तथा चयन (Expression & Selection)	परीक्षार्थी प्रश्न का उत्तर अपने शब्दों में देने में पूर्ण स्वतन्त्र है।	परीक्षार्थी को दिये गये विकल्पों में से सही उत्तर का चयन करना होता है।
6. प्रतिदर्श (Sample)	ये परीक्षाएं प्रश्नों के एक छोटे न्यादर्श (small sample) पर आधारित होती हैं।	ये परीक्षाएं प्रश्नों के एक बड़े न्यादर्श (large sample) पर आधारित होती हैं।
7. लेखन कला (Writing skill)	परीक्षार्थी के सुन्दर लेख एवं अभिव्यक्ति कौशल का प्रभाव उसके अंकों पर पड़ता है। इसमें परीक्षार्थी सोचता है और लिखता है।	लेखन कला का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसमें परीक्षार्थी पढ़ता है तथा सोचता है।
8. परीक्षक मनः स्थिति (Examiner's mood)	इन परीक्षाओं का निर्माण जितना आसान है मूल्यांकन उतना ही कठिन। परीक्षक की मनोवृत्ति छायी रहती है।	परीक्षा निर्माण जितना कठिन है मूल्यांकन उतना ही सरल। परीक्षक की मनोवृत्ति प्रश्न-पत्र निर्माण में बाधक हो सकती है मूल्यांकन प्रक्रिया में नहीं।
9. परीक्षार्थी एवं परीक्षक की स्वतन्त्रता (Freedom to both)	दोनों स्वतन्त्र हैं। परीक्षार्थी प्रश्नोत्तर देने में और परीक्षक अंक प्रदान करने में।	दोनों की स्वतन्त्रता पर अंकुश रक्खा जाता है। परीक्षार्थी मात्र विकल्प चुनने में स्वतन्त्र है।
10. विश्वसनीयता एवं वैधता (Reliability and Validity)	इन परीक्षाओं की विश्वसनीयता एवं वैधता दोनों निम्न स्तर की होती हैं।	इन परीक्षाओं की विश्वसनीयता एवं वैधता दोनों उच्च स्तर की होती हैं।
11. मानक (Norms)	परीक्षा के मानक स्थापित नहीं किये जा सकते।	इन परीक्षाओं के प्रामाणिक मानक स्थापित किये जा सकते हैं।

Scanned with CamScanner

12. अंकन (Scoring)	परीक्षक का विषय पर पूर्ण अधिकार (subject mastery) होने पर ही अंकन ठीक प्रकार से सम्भव है।	अंकन प्रक्रिया सरल है। अंकन कुंजी (scoring key) बन जाने से कोई भी अंकन कर सकता है।
13. प्रशासन (Administration of test)	प्रशासन सरल होता है। कोई विशिष्ट निर्देश देने की आवश्यकता नहीं पड़ती।	प्रशासन अपेक्षतया अधिक कठिन होता है। विशिष्ट निर्देशों को देने में प्रशिक्षण एवं सावधानी दोनों आवश्यक हैं।
14. अंक वितरण (Distribution of marks)	परीक्षक स्वयं अंक सीमा निर्धारित करता है। अच्छे स्तर के लिए वह 60-80% तथा असंतोषजनक उत्तर के लिए 10-25% अंक निर्धारित कर लेता है।	परीक्षण स्वयं अंक सीमा निर्धारित करता है। परीक्षक को कोई छूट नहीं दी जाती।

Scanned with CamScanner

रूपदेय परीक्षण तथा योगदेय परीक्षण (Formative and Summative Tests) – आधुनिक युग मूल्यांकन का युग है। शैक्षिक मापन के क्षेत्र में 20 वीं शताब्दी के प्रारम्भ में तीन प्रमुख प्रगतियां दृष्टिगोचर हुई हैं—परीक्षण, मापन तथा मूल्यांकन। शिक्षा शास्त्रियों का ध्यान सर्वप्रथम बुद्धि तथा उपलब्धि के परीक्षण की ओर गया। 19 वीं शताब्दी की परीक्षाएं प्रायः आत्मनिष्ठ होती थीं जो दोषपूर्ण थीं। इन्हीं दोषों को दूर करने के लिये वस्तुनिष्ट परीक्षाओं का निर्माण प्रारम्भ हुआ। यह विचारधारा प्रतिक्रियावादी थी तथा प्रयास भी। जब वस्तुनिष्ठ परीक्षाओं का प्रचलन यूरोप तथा अमरीका में उच्चतम सीमा तक पहुंच गया तब उनका ध्यान शिक्षा सम्बन्धी कुछ ऐसे परिणामों के मापन की ओर गया जिन्हें वस्तुनिष्ठ साधनों से मापना कठिन और असम्भव हो रहा था। शिक्षा में यह प्रगति मापन की प्रगति के नाम से जानी गई। फलतः नवीन प्रकार के परीक्षणों का विकास तथा उपयोग उत्तरोत्तर बढ़ता ही चला गया तथा यही कारण है कि कसौटी सम्बन्धित परीक्षणों को शिक्षण-अधिगम के मापन की दृष्टि से निम्न दो विशिष्ट रूपों में विकसित किया गया है—

(1) रूपदेय परीक्षण (Formative Test)

(2) योगदेय परीक्षण (Summative Test)

रूपदेय परीक्षण (Formative Test) – रूपदेय परीक्षण का संप्रत्यय पाठ्य-वस्तु विश्लेषण (Content analysis) अथवा, शिक्षण बिन्दु निर्धारण (determining teaching points) पर आधारित है। जिस प्रकार पाठ्य-वस्तु विश्लेषण के अन्तर्गत हम सम्पूर्ण पाठ्य-वस्तु को छोटी-छोटी इकाइयों में समय चक्र के अनुसार (दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, अर्द्ध-वार्षिक एवं वार्षिक) विभक्त कर लेते हैं और हमारा सम्पूर्ण ध्यान एक इकाई विशेष का संतोषजनक रूप से शिक्षण कराने में केन्द्रित हो जाता है ताकि छात्र विषय वस्तु को ठीक प्रकार से आत्मसात कर सकें तथा हमारी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया भी प्रभावी बन सके, ठीक उसी प्रकार रूपदेय परीक्षण के अर्न्तगत हम पाठ्य-वस्तु को विभिन्न इकाइयों में बांटकर तथा शिक्षण कराने के बाद प्रत्येक इकाई के अन्त में परीक्षण देते हैं और यह देखते हैं कि छात्र ने अपेक्षित प्रगति की है अथवा नहीं। यदि हम यह महसूस करते हैं कि छात्र किसी प्रकरण विशेष को भली भाँति नहीं समझ पा रहा है तो हम उस समस्या के कठिनाई स्थलों को जानने के लिये समस्या का निदान करते हैं तथा समस्या के समाधान हेतु उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करते हैं। फिर छात्र को इकाई परीक्षण या रूपदेय परीक्षण दिया जाता है। रूपदेय परीक्षण का प्रारूप कसौटी परीक्षणों के समान ही होता है लेकिन इनकी रचना प्रत्येक इकाई के मापन के लिये की जाती है ताकि छात्रों को विषय-वस्तु का गहन अध्ययन कराया जा सके। संक्षेप में, रूपदेय परीक्षण के माध्यम से निम्न तीन बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है—

(a) शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाना।

(b) संयुक्त इकाई को विभिन्न इकाइयों में विभक्त कर छात्र को इकाई विशेष का गहन अध्ययन करा पाठ्य-वस्तु की व्यापकता के स्वामित्व का अवसर प्रदान करना।

(c) विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति करना अथवा छात्र के व्यवहार में अपेक्षित व्यवहारिय परिवर्तन लाना।

योगदेय परीक्षण (Summative Test) – अध्यापक जब अपनी विशिष्टीकरण तालिका के माध्यम से विषय-वस्तु विश्लेषण की प्रक्रिया को पूरा कर लेता है अथवा, Blue-Print of the Test के माध्यम से यह सुनिश्चित कर लेता है कि उसने निर्धारित पाठ्य-वस्तु छोटी-छोटी इकाइयों में विभक्त कर एक निश्चित समयावधि में समाप्त कर ली है तो वह अपने छात्रों को पृथक-पृथक इकाइयों पर आधारित प्रश्न पत्र देता है। यह कार्य वह रूपदेय परीक्षणों (Formative Test)

Scanned with CamScanner

के माध्यम से करता है। जब छात्र इस देय परीक्षण पर सफल हो जाता है तब अध्यापक छात्र को अन्त में योगदेय परीक्षण (Summative Test) देता है ताकि वह अपने छात्रों के सामान्य स्तर के बारे में जानकारी प्राप्त कर सके। छात्रों की सफलता के आधार पर अध्यापक शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की प्रभावशीलता का अनुमान लगाता है और यदि वह छात्रों की उपलब्धि अथवा अपने शिक्षण से सन्तुष्ट नहीं है तो वह समस्या पर गम्भीरतापूर्वक विचार करके प्रकरण विशेष में Diagnostic Test बनाता है तथा समस्या के समाधान हेतु उपचारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करता है। छात्रों की उपलब्धि का संतोषजनक स्तर उसे पुनर्बलन (reinforcement) प्रदान करता है जिससे उसे अपने आगे के शिक्षण के नियोजन तथा व्यवस्था में सहायता मिलती है। वस्तुतः शिक्षण-अधिगम की सम्पूर्ण प्रक्रिया छात्रों के साफल्य स्तर पर ही आधारित होती है जो शिक्षण की भावी दिशा निर्धारित करने के साथ-साथ अध्यापक के मनोबल को भी बनाये रखती है। तुलनात्मक दृष्टि से रूप देय परीक्षण में जहाँ छात्रों की अधिगम कठिनाइयों पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है वहीं दूसरी ओर योग देय परीक्षण में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया की प्रभावशीलता को अधिक महत्व दिया जाता है। संक्षेप में, ये दोनों प्रकार के परीक्षण एक दूसरे के पूरक हैं तथा मूल्यांकन की आधुनिक संकल्पना की दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी हैं।

परीक्षा में सुधार की योजना
(Planning for Improvement in Examination)

"Have each examinee answer the same question. Don't offer a choice of questions to be answered. A choice of questions has no justifications from the point of effective measurement."

—Thorndike and Hegen

"Do not give any options. If at all they are to be given they may be given within a question itself and they should be equivalent in respect of content, objective, form and difficulty."

—Rajasthan Board of Sec. Edu.

डॉ० हिल ने माध्यमिक प्रशिक्षण विभागों के प्राध्यापकों के लिये आयोजित कार्यशाला (July 22 to 31, 1964) में मूल्यांकन प्रक्रिया में सुधार हेतु अपने विचार इस प्रकार रखे हैं—

"In the old system examination dictated all curriculum and methodology while in the new system both examination and instruction would be determined by specific instructional objectives. Objectives should form the basis of the whole scheme of education and evaluation. The emphasis on information in teaching and testing should shift to the application of knowledge, acquisition of skills, inculcation of attitudes and values, development of appreciations."

परीक्षा के दो पक्ष होते हैं : मापन पक्ष तथा शैक्षणिक पक्ष। परीक्षा में सुधार की दृष्टि से दोनों ही पक्षों पर ध्यान देना आवश्यक है। जहाँ तक मापन पक्ष का सम्बन्ध है इसमें प्रयुक्त विभिन्न उपकरणों (Tools) तथा प्रविधियों (Techniques) में ऐसा सुधार लाना चाहिये जिससे यह अधिक विश्वसनीय, वैध तथा वस्तुनिष्ठ हो सके। यदि हम परीक्षा सुधार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टि डालें तो हम देखेंगे कि परीक्षा के माध्यम से सम्पूर्ण शिक्षा पद्धति में सुधार लाने का प्रयास किया गया है। कैम्ब्रिज तथा ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालयों द्वारा परीक्षा प्रणाली का समावेश शैक्षिक सुधार तथा शिक्षा में उच्च स्तर को लाने के प्रयास की दृष्टि से 1830 के पूर्व ही किया गया था। इसके पश्चात इन विश्वविद्यालयों ने 1858 में प्रवेश में प्रतिबंध हेतु

Scanned with CamScanner

'स्थानीय परीक्षाओं' (Home Examinations) का प्रारम्भ किया। आगे चलकर विद्यालयों
इसने 'सार्वजनिक परीक्षा' (Public Examination) का रूप धारण कर लिया। 1858 में कलकत्ता
बम्बई, मद्रास विश्वविद्यालय के स्थापित हो जाने से यही प्रणाली भारत में भी प्रचलित हो गई
तभी से परीक्षा का शिक्षा में एक महत्वपूर्ण स्थान बना हुआ है। यहाँ तक कि राधाकृष्णन आयोग
ने बाध्य होकर इसे इस रूप में व्यक्त किया कि हम पूर्ण रूप से सहमत हैं कि यदि हमें विश्वविद्यालय
शिक्षा में केवल एक ही सुधार का सुझाव देना पड़े तो हम उसे परीक्षा में सुधार कहेंगे। यह
अतिशयोक्तिपूर्ण निष्कर्ष कि परीक्षा में सुधार से अपने आप शिक्षा में सुधार हो जायेगा परीक्षा
सुधार की व्यापक योजना में निम्न उद्देश्यों को लक्ष्य बनाना चाहिये—

a. बाह्य परीक्षा में सुधार (Improvement in External Examination)
b. आन्तरिक परीक्षा का समावेश (Introduction of Internal Assessment)
c. परिणामी परिवर्तन (Resultant Change)

(a) बाह्य परीक्षा में सुधार :

(Improvement in External Examination)

बाह्य परीक्षाओं के बारे में यह कहा जाता है कि हम इन्हें आवश्यकता से अधिक महत्व
देते हैं तथा नौकरियाँ प्राप्त करने में, उच्च शिक्षा में प्रवेश के लिये तथा छात्रवृत्तियाँ प्राप्त करने
में पासपोर्ट (passport) समझते हैं, जो उचित नहीं। साथ ही, परीक्षार्थी की प्रतिभा का मूल्यांकन
इन्हीं परीक्षाओं में प्राप्त अंकों के आधार पर करते हैं। ऐसा कहना उन अध्यापकों के प्रति विश्वास
की भावना को कम करना है जो सम्पूर्ण सत्र अपने विद्यार्थियों के साथ कठिन परिश्रम करते हैं
तथा इसका प्रभाव विद्यार्थियों की ईमानदारी की परख पर भी पड़ता है। यहाँ ध्यान इस बात
पर अधिक दिया जाता है कि इन बाह्य परीक्षाओं में परीक्षार्थी तथा परीक्षक एक दूसरे को नहीं
जानते परिणामस्वरूप परीक्षक द्वारा प्रदत्त अंकों पर अधिक विश्वास किया जाता है।

बाह्य परीक्षा के विरूद्ध इस प्रकार के शोरगुल होते हुए भी शिक्षा से सम्बन्धित बहुत से
लोग हमारे विद्यालयों में इसे रखने के पक्ष में हैं। वे मान रहे हैं कि इसका हल उसकी समाप्ति
में नहीं वरन् उसके सुधार में है। यह सत्य है कि परीक्षाएं हमारे शिक्षण तथा पाठ्यक्रम दोनों
पर हावी रहती हैं, किन्तु यह भी सत्य है कि वे हमारी शैक्षिक पद्धति पर एक प्रकार का प्रभाव
डालती हैं और उनका एकाएक हटा लेना अशान्ति उत्पन्न कर देगा। यह सभी प्रकार की बाह्य
परीक्षाओं के लिए सत्य है, जैसे—लिखित, प्रयोगात्मक एवं मौखिक। जो सुधार प्रचलित लिखित
परीक्षाओं के लिये लागू होते हैं वे प्रयोगात्मक एवं मौखिक परीक्षाओं के लिये भी उतने ही उपयुक्त
हैं। लिखित परीक्षा में सुधार के अन्तर्गत प्रश्नों का सुधार, प्रश्न-पत्र का सुधार, अंकदान की विधि
में सुधार, पूर्व परीक्षा प्रबन्ध में सुधार तथा परीक्षोपरान्त परीक्षाफल बनाने में सुधार आदि बातों
पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये। कुछ शिक्षाशास्त्रियों का ऐसा मत है कि प्रश्नों का रूप
बदल देने से निबन्धात्मक परीक्षाओं की आत्मा का हनन होता है क्योंकि ऐसा करने से परीक्षार्थियों
के विचारों को संगठित करने की योग्यता का मापन नहीं हो सकता। लेकिन ऐसा सोचना निरर्थक
है, क्योंकि ऐसा कर देने से परीक्षा की विश्वसनीयता एवं वैधता और बढ़ जाती है। मूल्यांकन
विधि में सुधार की दृष्टि से परीक्षा की गोपनीयता बनाये रखना भी आवश्यक है। कुछ विश्वविद्यालयों
एवं माध्यमिक शिक्षा परिषदों ने परीक्षा की गोपनीयता बनाये रखने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम
उठाये हैं जिनमें उन्हें सफलता भी मिली है, लेकिन मूल्यांकन प्रक्रिया को प्रभावी बनाने में अभी
कोई विशेष सफलता नहीं मिली है। कुछ विश्वविद्यालयों ने इस दिशा में कुछ कदम उठाये हैं,
जैसे—आन्तरिक एवं बाह्य परीक्षाओं का समावेश, एक ही उत्तर पुस्तिका को दो परीक्षकों से मूल्यांकित
कराये जाने के बाद उनका औसत प्राप्तांक निकालना, आन्तरिक एवं बाह्य परीक्षक के अंकों में

Scanned with CamScanner

10 प्रतिशत से अधिक का अन्तर होने पर उत्तर पुस्तिका का मूल्यांकन किसी तीसरे परीक्षक से करवाना आदि कुछ महत्वपूर्ण कदम हैं। बोर्ड की परीक्षाओं में परीक्षार्थियों की संख्या अत्यधिक होने की वजह से यह प्रणाली व्यावहारिक प्रतीत नहीं होती। **कोचरन (Cochran) तथा वीडमैन (Weidmann)** ने मूल्यांकन सम्बन्धी निम्न सुझाव दिये हैं—

1. किसी प्रश्न का मूल्यांकन करने से पहले उस प्रश्न के उत्तर को कुछ उत्तर पुस्तिकाओं से पढ़कर एक निश्चित धारणा बना लेनी चाहिये कि परीक्षार्थियों ने उसे किस स्तर का हल किया है।
2. सभी उत्तर पुस्तिकाओं के एक ही प्रश्न का मूल्यांकन एक साथ करना चाहिये जिससे तुलनात्मक अंकन किया जा सके।
3. दोनों प्रकार की परीक्षाओं की अंकन कुंजी (scoring key) बना लेनी चाहिये।
4. योग्य, अनुभवी एवं प्रशिक्षित परीक्षक नियुक्त किये जायें।
5. निबन्धात्मक प्रश्नपत्र में ऐच्छिक प्रश्न न रक्खें जायें।
6. **सिम्स** ने कहा है कि प्रत्येक प्रश्न का मूल्यांकन कर लेने के बाद उत्तर पुस्तिकाओं को तीन या पाँच श्रेणियों में विभक्त कर लेना चाहिये। सर्वोत्तम उत्तरों (qualitative) को एक समूह में रखना चाहिये। ऐसा करने से एक प्रश्न का उत्तर दूसरे प्रश्नों के उत्तर के अंकन को प्रभावित न कर सकेगा।

(b) आन्तरिक परीक्षा का समावेश :

(Introduction of Internal Assessment)

आन्तरिक जाँच के समावेश के पक्ष में सार्वभौमिक प्रवृत्ति देखी जा रही है। स्वेडन ने पहले से ही बाह्य परीक्षा को समाप्त कर रखा है। भारत में पूर्णतया परिवर्तन के लिये अभी जनमत उत्पन्न करना है परन्तु इसका प्रारम्भ किया जा सकता है। प्रारम्भ में बाह्य परीक्षाएं तथा आन्तरिक जाँच दोनों साथ ही साथ चलायी जा सकती हैं और दोनों परीक्षाफलों को अलग-अलग प्रमाणपत्र में बिना मिलाये दिखाया जा सकता है। सिद्धान्ततः आन्तरिक जाँच के विरूद्ध कोई भी व्यक्ति नहीं है किन्तु केवल यह सावधानी बरतनी है कि परिवर्तन एकाएक न किया जाये और इसके लिये उपयुक्त तैयारी की जाये।

प्रारम्भ में हमें बाह्य परीक्षा तथा आन्तरिक मूल्यांकन के विवेकपूर्ण संयोजन से ही सन्तुष्ट होना चाहिये। आन्तरिक मूल्यांकन का समावेश किये बिना परीक्षा में सुधार के किसी कार्यक्रम की कल्पना नहीं की जा सकती है। समस्या केवल आन्तरिक मूल्यांकन के अंक के निर्धारण, कार्यविधि, बाह्य परीक्षा से सम्बन्धित करने की विधि तथा इसे प्रत्येक विद्यालय से तुलना की विधि के निर्णय की है। इसके अतिरिक्त विद्यार्थियों के व्यक्तित्व के सभी पक्षों के मूल्यांकन की भी आवश्यकता है। चूँकि लिखित, प्रयोगात्मक तथा मौखिक परीक्षाएं इसे पूरा करने में असफल हैं इसलिये अन्य उपकरणों एवं प्रविधियों, जैसे—प्रेक्षण, पूर्वघटनाओं से सम्बन्धित अभिलेख (Anecdotal Record), रेटिंग स्केल, चेक लिस्ट आदि का प्रयोग करना होगा। यह आन्तरिक मूल्यांकन के स्तर पर सर्वोत्तम सिद्ध हो सकता है।

(c) परिणामी परिवर्तन लाना :

(Resultant Change)

यह अतिशयोक्ति पूर्ण न होगा कि परीक्षा में सुधार, पाठ्यपुस्तकों तथा पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त शिक्षण की प्रक्रिया तथा अधिगम में सुधार साथ-साथ होगा। मूल्यांकन की योजना केवल छात्रों की प्रगति के मापन के साधन हेतु ही नहीं वरन् पाठ्यक्रम के निर्माण तथा शिक्षण पद्धति में अपेक्षित

Scanned with CamScanner

परिवर्तनों की जाँच के लिये भी आवश्यक होगी। मूल्यांकन योजना को पाठ्यक्रम के उद्देश्य की व्याख्या में भी योग देना चाहिये। इसलिए परीक्षा सुधार की कोई भी योजना तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक कि इससे हमारे शैक्षिक उद्देश्यों की स्पष्टता का आभास नहीं होता। इसके अतिरिक्त यह एक सिद्धान्त है कि परीक्षा द्वारा पाठ्यक्रम का आभास होना चाहिये। इसी प्रकार परम्परागत शिक्षण विधियों में भी सुधार होना चाहिये। पाठ्य पुस्तक तथा अन्य सहायक सामग्रियों को भी उसी के अनुसार नये ढंग से तैयार करने तथा उत्पादन करने की आवश्यकता होगी।

मूल्यांकन सुधार हेतु विभिन्न आयोगों के सुझाव : (Recommendations of

Scanned with CamScanner

1. सतत् मूल्यांकन
(CONTINUOUS EVALUATION)

सतत् मूल्यांकन का आशय उस आंकलन या परीक्षण से है, जिससे शिक्षार्थी के अध्ययन उपलब्धियों का प्रतिमाह आंकलन किया जाता है। सतत् मूल्यांकन प्रक्रिया में सामान्यतः म पाठ्यक्रम को दस इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है। उस इकाई का अध्यापन कराने के स्वाभाविक रूप से प्रतिमाह परीक्षण किया जाता है तथा उसका व्यवस्थित लेखा-जोखा रखा है। प्राथमिक एवं पूर्ण माध्यमिक कक्षाओं में सतत् प्रक्रिया हर जगह प्रचलित नहीं हैं किन्तु यह रूप में प्रचलित नहीं है जिस प्रकार कि सतत् मूल्यांकन के मौलिक स्वरूप में होनी चाहिए। केवल ज्ञानार्जन के शैक्षिक कौशल का मूल्यांकन ही किया जाता है। शैक्षिकेत्तर उपलब्धियों का मूल्यांकन नहीं किया जाता है। इसे निरन्तर मूल्यांकन योजना भी कहते हैं।

सतत् मूल्यांकन का आयोजन (Planning of Continuous Evaluation)

परीक्षाएँ हमारी शिक्षा व्यवस्था पर बहुत अधिक प्रभाव डालती हैं। ऐसा विशेष रूप से इस होता है, क्योंकि अधिकांश रूप में परीक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों की सफलता का मापन किया जाता इस मापन का उद्देश्य विद्यार्थियों का वर्गीकरण प्रमाणीकरण और श्रेणीकरण होता है। विद्यार्थियों कमजोरी के निदानीकरण, शैक्षिक योजना की कुशलता के मूल्यांकन तथा ज्ञानार्जन आदि को सुध एवं निर्देश करने में परीक्षा का जो महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है, उसकी लगभग पूर्ण रूप से उ की जा सकती है। समस्त शैक्षिक कार्यक्रम परीक्षापरक हो गया है। शिक्षकों के पास इसके अत कोई विकल्प नहीं है कि वे किसी न किसी ढंग से विद्यार्थियों को परीक्षा में सफलता प्राप्त करने लिए तैयार करें। इस स्थिति को सुधारने के लिए सतत् मूल्यांकन प्रक्रिया के अन्तर्गत एक सम्भा ढंग से परीक्षा में इकाई पद्धति का प्रयोग हो सकता है। शिक्षण एवं परीक्षा में इकाई पद्धति के प्र से इस समस्या का समाधान निकलने की क्षमता है, क्योंकि इससे शिक्षण अधिक उपयोगी एवं ल आधारित हो सकता है, इससे मूल्यांकन को सम्पूर्ण शिक्षण तथा ज्ञानार्जन का अभिन्न अंग बनाने सहायता मिलती है शैक्षिक निवेश की प्रक्रिया स्वरूप में सुधार होगा।

Scanned with CamScanner

सतत् मूल्यांकन का महत्त्व (Importance of Continuous Evaluation)

कक्षोन्नति का प्रमुख साधन वार्षिक परीक्षा तथा उसके परिणाम होते हैं। इस प्रथा से सभी भली-भाँति परिचित हैं। सम्पूर्ण स्कूल संकल्पना के कार्यक्रम अन्तर्निहित सतत् मूल्यांकन इस समस्या का प्रमुख समाधान है। सतत् मूल्यांकन के माध्यम से बालक की योग्यता तथा अयोग्यता के बारे में नियमित रूप से उपयोगी तत्वों का संकलन सम्भव हो सकेगा। इन तथ्यों का प्रयोग एक ऐसे उपचारात्मक शिक्षण यन्त्र तथा समृद्ध शिक्षण के रूप में किया जा सकेगा, जिससे कि बालकों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का अधिकतम् विकास किया जा सके और शिक्षा के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। इस पृष्ठपोषण से न केवल विद्यार्थी को मापन, वर्गीकरण एवं प्रमाणीकरण में सहायता मिलेगी अपितु उसकी कार्य कुशलता एवं सफलता के स्तर को सुधारने की तथा इस प्रकार के रचनात्मक मूल्यांकन के द्वारा उसके अधिकतम विकास की व्यवस्था को सक्षम बनाया जा सकेगा। इस प्रकार सतत् मूल्यांकन के परिणाम हमें शीघ्र प्राप्त होंगे और सतत् व्यापक मूल्यांकन स्वयं लक्ष्य न होकर लक्ष्य प्राप्त करने का साधन है। विद्यार्थी परीक्षा के भय से मुक्त हो सकेंगे तथा सहज भाव से मूल्यांकन के लिए तत्पर रहेंगें।

सतत् मूल्यांकन सार्थक ज्ञान के लिए निदान का पथ प्रशस्त करता है। यदि एक प्राथमिक शिक्षक अपने ज्ञान तथा कार्यकुशलता की सहायता से मूल्यांकन का प्रयोग विद्यार्थी के ज्ञार्नाजन की कठिनाइयों और उसके कारणों का निदान करने के लिए कर सकता है। वह उचित उपचारात्मक साधन अपनाकर उसकी प्रगति तथा क्षति को कम कर सकता है तथा इस तरह उसे अधिकतम ज्ञान प्राप्त करने में सहायता कर सकता है। सार्थक ज्ञान का अर्थ है—विद्यार्थी की वांछनीय योग्यताओं तथा क्षमताओं का विकास जिससे वह भविष्य में अधिकतम लाभ प्राप्त कर सके, विद्यार्थी की रुचि ज्ञार्नाजन के लिए उपलब्ध समय एवं शिक्षा से लाभ उठाने की क्षमता प्राप्त होती है।

2. व्यापक मूल्यांकन
(COMPREHENSIVE EVALUATION)

दक्षता आधारित मूल्यांकन प्रत्येक दिन कक्षा में शिक्षण के अन्तर्गत छात्रों में दक्षता सिखाने के बाद उसका मूल्यांकन किया जाता है किन्तु छात्रों की दक्षता के अतिरिक्त उसमें संज्ञानात्मक पक्ष, भावात्मक पक्ष तथा क्रियात्मक पक्ष भी सम्मिलित होते हैं, जिनका मूल्यांकन दक्षताधारित विधि से सम्भव नहीं होता। इसलिए छात्रों के विकास हेतु व्यापक मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। व्यापक मूल्यांकन की दृष्टि से विद्यार्थी के अग्रलिखित पक्षों पर ध्यान दिया जाता है—

(i) वैयक्तिक एवं सामाजिक सद्गुण—इसके अन्तर्गत समयबद्धता, नियमबद्धता, नैतिकता, उत्तरदायित्व की भावना, स्वच्छता एवं सहयोग, सत्यनिष्ठता, नियमितता एवं समाजसेवा आदि गुण सम्मिलित हैं।

(ii) पाठ्यक्रम सम्बन्धी क्रियाएँ—इसके अन्तर्गत वाद-विवाद, खेलकूद, भाषण, नाटक, तैरना, स्काउटिंग तथा कार्यानुभव आदि क्रियाएँ सम्मिलित हैं, जिनका मूल्यांकन अति आवश्यक होता है।

(iii) स्वास्थ्य विवरण—इसके अन्तर्गत लम्बाई, भार, स्वास्थ्य तथा शारीरिक विकास आदि सम्मिलित हैं।

(iv) छात्र की अभिरुचियाँ—इसके अन्तर्गत साहित्य, संगीत कला तथा प्रकृति दर्शन सम्मिलित हैं।

(v) अभिवृत्तियाँ—इसके अन्तर्गत समाजवाद, राष्ट्रीय एवं भावात्मक एकता आती है।

Scanned with CamScanner

सतत् मूल्यांकन के क्षेत्र
(SCOPE OF CONTINUOUS EVALUATION)

शिक्षा में सतत् मूल्यांकन का प्रयोग प्राचीनकाल से होता चला आ रहा है। इसके अनुसार शिक्षण के उद्देश्यों, सीखने के अनुभवों, परीक्षणों में प्रमुख सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। सतत् मूल्यांकन में शिक्षण तथा परीक्षण दोनों ही क्रियाएँ एक साथ चलती हैं। मूल्यांकन एक सतत् तथा व्यापक क्रिया मानी जाती है। सतत् मूल्यांकन में छात्रों के व्यक्तित्व सम्बन्धी निम्न पक्ष आते हैं—

(1) छात्र की अभिरुचि (Aptitude of Student)—मुख्यत: समझा जाता है कि जो पिछली कक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हुए हैं, वे अगली कक्षा में भी अच्छे अंक प्राप्त करेंगे। परीक्षाएँ बालक में अर्जित ज्ञान का मापन करती हैं यह वचन सदैव विश्वसनीय नहीं होता है।

(2) छात्र की सृजनात्मकता (Creativity of Student)—आज के समय में सृजनात्मकता का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। यह एक प्रमुख समस्या है कि शैक्षिक प्रक्रिया में सृजनात्मकता का विकास कैसे हो? परन्तु सृजनात्मकता के मापन के लिए अभी कोई सन्तोषजनक उपकरण नहीं है।

(3) ज्ञान (Knowledge)—मूल्यांकन किसी भी विद्यार्थी के ज्ञान का मापन करता है कि उस व्यक्ति का ज्ञान किस कोटि का है तथा उसके आधार पर उसके भविष्य के विषय में सम्भावना व्यक्त करता है।

(4) पारिवारिक रुचियाँ (Interests of Family)—पारिवारिक सम्बन्धों का मूल्यांकन करना कठिन होता है। व्यक्ति में अनेक विशेषताएँ पाई जाती हैं। उसकी यह विशेषताएँ परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती हैं।

(5) बोध (Understanding)—किसी व्यक्ति के ज्ञान का मापन भी उसके आधार पर हो सकता है। अत: मूल्यांकन के क्षेत्र में व्यक्ति की समझ शक्ति का मापन करना तथा आवश्यक निर्देश में सहयता करना है।

(6) वैयक्तिक रुचियाँ (Individual Interest)—अभिरुचि परीक्षणों, प्रश्नावली तथा साक्षात्कार के द्वारा वैयक्तिक रुचियों का मापन किया जाता है।

(7) शारीरिक स्थिति तथा स्वास्थ्य (Health and Physical Status)—शारीरिक स्थिति का मापन अति आवश्यक होता है। इसके लिए 'प्रश्नावली' 'स्वास्थ्य इतिहास' तथा निरीक्षण पद्धतियाँ उपयुक्त होती हैं। स्वास्थ्य तथा शारीरिक ये दोनों स्वयं में उतनी महत्त्वपूर्ण हैं कि बिना इन तत्वों के लिए कोई भी मूल्यांकन पद्धति अधूरी रह जाएगी।

(8) अनुप्रयोग (Application)—यह ज्ञात किया जा सकता है कि किस सीमा तक विद्यार्थी प्राप्त ज्ञान का प्रयोग करता है।

(9) विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि (Educational Achievement)—शैक्षिक उपलब्धि ज्ञात करने के अनेक ढंग होते है। परीक्षाओं के प्राप्तांक, प्रमापीकृत परीक्षाओं के परिणाम तथा विद्यालय की क्रियाएँ प्रमुख होती हैं।

(10) विद्यार्थी की त्रुटियाँ (Mistakes of Student)—मूल्यांकन के माध्यम से छात्र की इस बात की जाँच हो जाती है कि वह त्रुटियाँ क्यों कर रहा है तथा उन त्रुटियों का निवारण कैसे किया जा सकता है?

सतत् मूल्यांकन की कार्य प्रणाली तथा सोपान
(PROCEDURE AND STEPS OF CONTINUOUS EVALUATION)

मूल्यांकन की प्रक्रिया पूर्ण रूप से मनोवैज्ञानिक है। सतत् मूल्यांकन के द्वारा विद्यार्थी को अपने साफल्य में सहायता मिलती है। वह अध्ययन करने को तैयार रहता है। मूल्यांकन की प्रविधियों का

Scanned with CamScanner

इसलिए उद्देश्यपूर्ण एवं विश्वसनीय होना आवश्यक है। सतत् मूल्यांकन के लिए जो भी विधि अपनाई जाए वह पूर्ण रूप से स्पष्ट होनी चाहिए उसका प्रमुख आधार मापन की क्रिया होना चाहिए। इसीलिए उचित मापदण्डों का निर्धारण पहले से कर लेना चाहिए। अगर ऐसा नहीं किया गया तो सतत् मूल्यांकन असम्भव है। सतत् मूल्यांकन में निम्नलिखित सोपानों का प्रयोग किया जाना आवश्यक है–

(1) उद्देश्य की व्याख्या—जिस उद्देश्य का निर्धारण किया गया है, उसकी स्पष्ट व्याख्या की जानी चाहिए।

(2) परिस्थिति का ज्ञान—विद्यार्थियों को ऐसी परिस्थिति में रखा जाना चाहिए जहाँ से वांछित व्यवहार को प्रदर्शित कर सकें, अर्थात् यह परिस्थिति ऐसी होनी चाहिए कि जो व्यवहार की अभिव्यक्ति में सहायता कर सके इस प्रकार परिस्थिति का ज्ञान मूल्यांकन के लिए अत्यधिक आवश्यक है।

(3) प्रविधि का प्रयोग—बालक में हुए व्यवहारिक परिवर्तनों को जानने के लिए प्रविधि का उपयोग किया जाता है।

(4) मूल्यांकन की प्रविधियों का चयन—परिस्थिति का ज्ञान हो जाने के पश्चात् उन प्रविधियों का चयन किया जाना चाहिए जो विद्यार्थियों के इच्छित व्यवहार के सम्बन्ध में प्रमाण प्रस्तुत करें।

(5) निष्कर्ष निकालना—मूल्यांकन प्रक्रिया में निम्नलिखित बातों का ध्यान देना चाहिए–

(i) कक्षा में उच्चतम तथा निम्नतम प्राप्तांक क्या हैं?

(ii) कक्षा का उच्चतम औसत प्राप्तांक क्या है?

(iii) कक्षा में विशिष्ट छात्र की क्या स्थिति है?

(iv) क्या किसी छात्र ने अपनी योग्यता से सर्वोत्तम स्थान प्राप्त कर लिया है।

(6) भविष्यवाणी—यदि एक विषय का मूल्यांकन किया जा चुका है तो उसी समस्या से सम्बन्धित अन्य पहलुओं का भी उसी आधार पर मूल्यांकन किया जाएगा तथा कारणों का पता लगाया जा सकता है। किसी विद्यार्थी के विषय में भविष्यवाणी की जा सकती है, किसी विस्तृत समस्या का भी समाधान किया जा सकता है।

(7) प्रदत्तों का विश्लेषण—प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण किया जाए तथा पता लगाया जाए कि उसके कारण कितनी मात्रा में प्रगति हुई है।

(8) प्राप्त साक्ष्यों का विवेचन—जब प्रविधि का प्रयोग किया जाता है तथा साक्ष्यों को अभिलेखों में दर्ज किया जा सकता है तो इसका विवेचन करना भी आवश्यक होता है।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
2. मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के वर्गीकरण को समझाइए।
3. शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. परीक्षण एवं मापन में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
2. मापन की समस्याओं को संक्षप में समझाइए।
3. मानसिक एवं भौतिक मापन में क्या अन्तर है?
4. मूल्यांकन की विशषताओं पर प्रकाश डालिए।
5. मूल्यांकन की विधियों को सारगर्भित रूप में समझाइए। ❑❑

Scanned with CamScanner

उत्तम परीक्षण के गु
(QUALITIES OF A GOOD TES

डॉ. महेश भार्गव के अनुसार, ''एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण, आवश्यक रूप से प्रयोजनपूर्ण मानकीकृत यन्त्र है जो मानव-व्यवहार का वस्तुनिष्ठता एवं व्यापकता के साथ निरीक्षण करता है। स धन एवं व्यक्ति के दृष्टिकोण से यह सदैव मितव्ययी तथा प्रशासन, फलांकन एवं विवेचन के दृष्टि से सुगम होता है तथा इसके प्रत्येक पद की भेद-बोधक शक्ति भी अधिक होती है। इसके विभिन्न मा जैसे-आयु मानक, लिंग मानक, शैक्षिक मानक, सांस्कृतिक मानक आदि निर्धारित किये जाते हैं। इ अतिरिक्त यह अत्यधिक विश्वसनीय एवं वैध होता है।'' (A good psychological test is essentia a purposeful, standardized tool of observing the sample of individual behaviour, objectiv and comprehensively. It is always economical in relation to time, money and the pers engaged; easy to administer, score and interpret, and acceptable to all circumstances, item has a highly discriminative value with various fix norms such as age, sex educatio and cultural norms etc. With all this, it must be highly reliable and valid).

उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण की इस परिभाषा में हमें उसकी समस्त विशेषताओं या कसौटियों झाँकी मिलती है। यदि किसी भी मनोवैज्ञानिक परीक्षण में उपर्युक्त विशेषताएँ पायी जाती हैं तो नि:सन्दे रूप से उसे एक 'उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण' कहा जा सकता है।

इस परिभाषा के आधार पर किसी उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण में निम्न विशेषताएँ होनी चाहिए- (i) उत्तम परीक्षण सम्प्रयोजन होना चाहिए, (ii) वह मानकीकृत होना चाहिए, (iii) व्यक्ति के सम्पू व्यवहार का प्रतिनिधि होना चाहिए, (iv) वस्तुनिष्ठ होना चाहिए, (v) व्यापक होना चाहिए, (vi) प्रशासन फलांकन एवं विवेचना की दृष्टि से सुगम होना चाहिए, (vii) समय, धन एवं व्यक्ति के सम्बन्ध मितव्ययी होना चाहिए, (viii) भेदबोधक होना चाहिए, (ix) समस्त परिस्थितियों में मान्य होना चाहिए (x) मानक निर्धारित होने चाहिए, (xi) विश्वसनीय होना चाहिए, (xii) वैध होना चाहिए।

उत्तम परीक्षण की कसौटियाँ
(CRITERIA OF GOOD TEST)

अब हम उत्तम कसौटियों या विशेषताओं का विस्तार से उल्लेख करेंगे। इन विशेषताओं को मुख्य रूप से दो समूह के अन्तर्गत वर्गीकृत किया जाता है—(1) उत्तम परीक्षण की व्यावहारिक कसौटियाँ, एवं (2) उत्तम परीक्षण की तकनीकी कसौटियाँ। प्रथम समूह की कसौटियों में परीक्षण के उद्देश्य, व्यापकता, मितव्ययिता, सुगमता एवं उसकी सर्वमान्यता आदि को ध्यान में रखा जाता है जबकि द्वितीय समूह में

Scanned with CamScanner

परीक्षण के मानकीकरण, वस्तुनिष्ठता, भेदबोधकता, विश्वसनीयता, वैधता एवं मानक को ज्ञात किया जाता है। यहाँ यह स्मरणीय है कि परीक्षण की ये समस्त विशेषताएँ एक-दूसरे पर आश्रित रहती हैं। उदाहरणार्थ, यदि एक परीक्षण अधिक विश्वसनीय है तो निश्चित रूप से उसकी वैधता भी अधिक होगी।

निम्नांकित चार्ट इन्हीं कसौटियों का स्पष्ट उल्लेख करता है–

उत्तम परीक्षण

व्यावहारिक कसौटियाँ (Practical criteria)	**तकनीकी कसौटियाँ** (Technical criteria)
(1) उद्देश्यता	(1) मानकीकरण
(2) व्यापकता	(2) वस्तुनिष्ठता
(3) मितव्ययता	(3) भेदबोधकता
(4) सुगमता	(4) विश्वसनीयता
(5) सर्वमान्यता	(5) वैधता
(6) प्रतिनिधित्वता	(6) मानक
(7) न्याययुक्तता	(7) विशिष्टता
(8) गतिशीलता	
(9) सक्षमता	
(10) व्यावहारिकता	
(11) भाषा।	

उत्तम परीक्षण की व्यावहारिक कसौटियाँ

(1) उद्देश्य (Purposiveness)—उत्तम परीक्षण की सर्वप्रथम विशेषता यह है कि उसके निश्चित उद्देश्य निर्धारित हों। अर्थात् उत्तम परीक्षण का निर्माण तब ही सम्भव है जबकि हमारे पास कोई उद्देश्य, लक्ष्य या समस्या हो। अमूर्त परिस्थितियों में परीक्षण की रचना कदापि सम्भव नहीं हो सकती क्योंकि परीक्षण तो सदैव ही उद्देश्य पूर्ति का एक साधन-मात्र है। जब उद्देश्य ही नहीं तो साधन की क्या आवश्यकता? इसीलिए किसी भी परीक्षण की रचना करने से पूर्व समस्या, लक्ष्य या उद्देश्य के सम्बन्ध में निर्णय करना अत्यन्त आवश्यक है।

(2) व्यापकता (Comprehensiveness)—उत्तम परीक्षण की दूसरी विशेषता उसकी व्यापकता है। व्यापकता से आशय है कि परीक्षण में इस प्रकार के पदों या प्रश्नों को स्थान दिया जाय कि वह उस क्षेत्र में समस्त पहलुओं का मापन कर सके। अर्थात् वह व्यवहार का विस्तृत रूप से प्रतिदर्श कर सके। अन्य शब्दों में, यह भी कहा जा सकता है कि परीक्षण इतना व्यापक होना चाहिए कि वह अपने लक्ष्य की पूर्ति कर सके। उसमें उन समस्त पहलुओं से सम्बन्धित प्रश्नों को स्थान मिलना चाहिए जिनका मापन करना है। उदाहरणार्थ, एक गणित के परीक्षण निर्माण में अध्यापक को यह प्रयास करना चाहिए कि वह उस स्तर पर हल करने वाली विभिन्न प्रकार की समस्याओं में से प्रश्नों का चयन करे। इस प्रकार किसी साहित्यिक विषय में रचित परीक्षण में कहानी, उपन्यास, कविता, गद्य, व्याकरण, निबन्ध आदि क्षेत्रों से प्रश्नों को सम्मिलित करना चाहिए। बुद्धि-परीक्षण की रचना में संख्यात्मक, समस्यात्मक, अमूर्त वस्तुओं, स्मृति, शाब्दिक योग्यता आदि प्रकार के प्रश्न जो विभिन्न प्रकार की योग्यताओं का मापन करते हैं, सम्मिलित होने चाहिए। इस प्रकार से परीक्षण के द्वारा व्यक्ति के विस्तृत व्यवहार का उचित रूप से अध्ययन सम्भव

Scanned with CamScanner

है। लेकिन यहाँ यह स्मरणीय है कि परीक्षण व्यापक होना चाहिए। यह कथन कहने का जितना
है व्यावहारिकता में उतना ही जटिल है क्योंकि आज तक इस तथ्य को इंगित करने वाला कोई भी
सूत्र प्रतिपादित नहीं हुआ है जिससे परीक्षण की व्यापकता को परिभाषित किया जा सके।

(3) मितव्ययता (Economical)—मितव्ययता उत्तम परीक्षण की एक मुख्य आवश्यक
क्योंकि आज के इस व्यस्त वैज्ञानिक एवं औद्योगिक युग में मितव्ययी होना व्यक्ति के जीवन में
आवश्यक हो गया है। इसीलिए 'एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण' के लिए यह आवश्यक है कि वह
दृष्टिकोण से मितव्ययी हो। उसका निर्माण समय, धन एवं व्यक्ति को दृष्टि में रखते हुए होना
परीक्षण में पदों की संख्या व्यापकता को दृष्टिगत रखते हुए पर्याप्त होनी चाहिए, जिससे उसके
में अधिक समय का व्यय न हो। इसके अतिरिक्त उनकी विषय-सामग्री ऐसी होनी चाहिए कि
निर्माण में अत्यधिक धन एवं व्यक्तियों की आवश्यकता न हो क्योंकि आज की जटिलतम परिस्थि
में व्यक्ति के पास सदैव ही समय, धन एवं अन्य व्यक्तियों के सहयोग का अभाव रहता है। यदि
परीक्षण इन तीनों व्यावहारिक तथ्यों के अनुकूल है तो निश्चित रूप से वह उत्तम परीक्षण होगा।
की इसी विशेषता के फलस्वरूप आज सामूहिक परीक्षणों का अत्यधिक बोलबाला है। यही
व्यक्तिगत परीक्षण में कम धन एवं समय के व्यय हेतु अब पुनः प्रयोग में लायी जाने वाली
पुस्तिकाओं एवं उत्तर सूचियों का व्यापकता से प्रयोग प्रचलित है। अतएव, एक उत्तम परीक्षण के
यह नितान्त आवश्यक है कि प्रत्येक दृष्टिकोण से मितव्ययी हो।

(4) सुगमता (Easyness)—उत्तम परीक्षण की अन्य विशेषता यह है कि इसे प्रशासन, फलांकन
विवेचना के दृष्टिकोण से सदैव सुगम होना चाहिए। यह इतना सरल हो कि समस्त उपलब्ध सुविधाओं
इसका प्रशासन सम्भव हो सके। उन परीक्षण के निर्माण से क्या लाभ जिनके प्रशासन मात्र में ही
कठिनाइयों का सामना करना पड़े। इसीलिए मनोवैज्ञानिक या अनुसन्धानकर्ता को ऐसे परीक्षण की
करनी चाहिए जिसका प्रशासन उसकी परिस्थितियों के अनुकूल किया जा सके। निर्देश इतने स्पष्ट
संक्षिप्त होने चाहिए कि परीक्षार्थी उन्हें आसानी से समझ लें तथा उसकी भाषा में किसी भी प्रकार
दोहरापन न हो। क्योंकि जब तक परीक्षार्थी निर्देशों को भली-भाँति नहीं समझ पाता है वह उस परीक्ष
को करने में असमर्थ होता है। इसके अतिरिक्त परीक्षण की फलांकन विधि तथा विवेचन भी सुगम
उत्तम परीक्षण की यह भी विशेषता है कि उसके परीक्षण पदों का फलांकन शीघ्रता, सरलता एवं दक्ष
से किया जा सके। इसी के फलस्वरूप अधिकांश मानकीकृत परीक्षणों में सुविधाजनक रूप से फलांक
करने में उत्तर कुंजी या फलांकन कुंजी तथा फलांकन स्टेंसिल का प्रयोग किया जाता है। अतएव उत्त
परीक्षण के फलांकन के लिए यह आवश्यक है कि फलांकन कुंजियों का निर्माण किया जाय जिसमें
परीक्षण का फलांकन सुगमता, शुद्धता एवं वस्तुनिष्ठता के साथ किया जा सके। आज के इस वैज्ञानिक
युग में मशीनों की सहायता से भी फलांकन करना सम्भव हो गया है। इसके अतिरिक्त परीक्षण की विवेचन
विधि भी अत्यन्त स्पष्ट होनी चाहिए। उसके विवेचन की विधि इस प्रकार की हो कि प्रत्येक व्यक्ति उ
प्राप्तांकों का एक ही भाँति विवेचन कर सके अर्थात् विवेचन पद्धति वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए। इस प्रका
से यह स्पष्ट है कि एक उत्तम परीक्षण प्रशासन, फलांकन एवं विवेचना तीनों ही दृष्टिकोण से सुगम होन
चाहिए।

(5) सर्वमान्यता (Acceptability)—एक उत्तम परीक्षण की एक विशेषता उसकी सर्वमान्यता
सर्वस्वीकृति है। परीक्षण इस प्रकार का होना चाहिए कि उसका प्रयोग उन समस्त व्यक्तियों एवं परिस्थितियों
में सदैव किया जा सके जिन पर उसका मानकीकरण किया गया है। उदाहरणार्थ, विदेशों में बिने-साइमन
बुद्धि मापनी तथा भारत में चटर्जी अशाब्दिक प्राथमिक प्रपत्र इस श्रेणी में आते हैं।

(6) प्रतिनिधित्वता (Representativeness)—एक उत्तम परीक्षण की व्यावहारिक विशेषता यह
भी है कि उसे प्रतिनिधि होना चाहिए। व्यवहार के जिन-जिन पहलुओं के मापन हेतु उसकी रचना की गयी

है उनका प्रतिनिधित्व रूप से मापन करना उसकी प्रमुख विशेषता है। वह व्यक्ति के व्यवहार में से प्रतिदर्श लेकर उसका प्रतिनिधित्व रूप से मापन करता है।

(7) न्याययुक्तता (Fairness)—परीक्षण के द्वारा, जिन पर भी उसे लागू किया जाये, उन्हें अपनी वास्तविक योग्यता व क्षमता के प्रदर्शन हेतु उपयुक्त व समान अवसर प्राप्त हों।

(8) गतिशीलता (Speedness)—परीक्षण में दिये गये प्रश्न/कथनों की संख्या व उसको करने की समय सीमा से सम्बन्धित है। प्रश्नों की संख्या इतनी होनी चाहिये कि उनको करने में परीक्षार्थी की गति बनी रहे तथा उन्हें पूरा करने में परीक्षार्थियों में हड़बड़ाहट नहीं हो।

(9) सक्षमता (Efficiency)—परीक्षण की सक्षमता उसके निर्माण करने, प्रशासन करने, अंकन करने तथा परीक्षण में लगने वाले समय की सीमा से है। कम समय में प्रशासित किया जा सकने या अंकित किया जा सकने वाला परीक्षण सक्षम परीक्षण माना जाता है।

(10) व्यावहारिकता (Practicability)—परीक्षण का प्रशासन सुगम हो, उसका अंकन सुगम हो तथा प्राप्त परिणामों की व्याख्या सुगम हो। इसके साथ ही परीक्षण सुगमता से उपलब्ध हो तथा उसकी कीमत अधिक नहीं हो।

(11) भाषा (Language)—परीक्षण की भाषा सरल हो तथा जिस आयु वर्ग के लिये उसका निर्माण किया गया है, उस आयु वर्ग को आसानी से समझ में आ सकती हो। इसके साथ ही परीक्षण जिन भाषार्थियों/क्षेत्र विशेष के लिये निर्मित किया गया हो उनसे सम्बन्धित भाषा में हो।

उत्तम परीक्षण की तकनीकी कसौटियाँ

(1) मानकीकरण (Standardization)—एक उत्तम परीक्षण निश्चित रूप से मानकीकृत होना चाहिए। मानकीकरण से हमारा अभिप्राय उस परीक्षण से है जिनके निश्चित मानक स्थापित किये जायें। इसका मानकीकरण करने हेतु इसे एक विशाल समूह पर प्रशासित कर उस समूह के निश्चित फलांकों को प्राप्त किया जाता है। इसमें प्रशासन एवं फलांकन की समरूप स्थितियों का प्रयोग किया जाता है। **सी. वी. गुड** के दृष्टिकोण से, "मानकीकृत से हमारा आशय ऐसे परीक्षण से है जिसमें अनुभवों के आधार पर विषय-वस्तु का चयन किया गया हो, जिनके मानक निर्धारित हों, जिनके प्रशासन एवं फलांकन में समरूप विधियों का प्रयोग हुआ हो तथा जिनके फलांकन में सापेक्षतया वस्तुनिष्ठ विधि का प्रयोग किया गया हो।" इस प्रकार से हमने देखा कि परीक्षण के मानकीकरण में कुछ निश्चित प्रक्रियाएँ होती हैं। इसमें निर्देशों को सावधानीपूर्वक एवं समरूप शब्दों में अंकित किया जाता है तथा समय का सही निरीक्षण किया जाता है। इसमें किसी प्रकार के पक्षपात की सम्भावना नहीं होती है। अन्त में, इसके मानकीकरण में व्यक्ति की आयु, लिंग, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, उपलब्धि आदि के अनुसार मानकों को निर्धारित किया जाता है। इस प्रकार से एक मानकीकृत परीक्षण का प्रयोग व्यापकता से किया जा सकता है। अतएव, उत्तम परीक्षण की यह भी प्रमुख कसौटी है कि उसका मानकीकरण किया जाये। एक ऐसा परीक्षण जिसका मानकीकरण न किया गया हो उसका अपना कोई भी मूल्य नहीं होता है।

(2) वस्तुनिष्ठता (Objectivity)—एक उत्तम परीक्षण के लिए यह भी आवश्यक है कि वह प्रत्येक दृष्टिकोण से वस्तुनिष्ठ हो। परीक्षण की वस्तुनिष्ठता मुख्य रूप से दो बातों पर निर्भर होती है। **प्रथम,** परीक्षण में इस प्रकार के प्रश्नों के सम्मिलित समस्त पदों के निश्चित उत्तर हों। **अधिकांशतः** यह देखने में आता है कि एक प्रश्न के अनेक उत्तर होते हैं जिससे परीक्षण की वस्तुनिष्ठता के स्थान पर परीक्षार्थी की व्यक्तिगत अभिनति को बल मिलता है। हमें परीक्षणों में पदों या प्रश्नों का चयन इस प्रकार करना चाहिए कि एक प्रश्न का केवल एक ही उत्तर सम्भव हो सके। यदि ऐसा न हुआ तो हमारी परीक्षा वैध नहीं

Scanned with CamScanner

परीक्षणों का वस्तुनिष्ठ होना आवश्यक है। अन्यथा ये प्रश्न अपने उद्देश्यों में विफल हो जायेंगे।

(3) भेद-बोधकता (Discriminative)--एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण की दूसरी महत्त्वपूर्ण कसौटी उसकी भेदबोधकता है। भेदबोधकता से तात्पर्य उस विभेदशक्ति से होता है जो किसी पहलू के माध्यम से दो वर्गों में विभेद स्पष्ट करे। वह यह इंगित कर सके कि किसी समूह में अमुक व्यक्ति योग्यता रखते हैं तथा अन्य कुछ व्यक्ति निम्न योग्यता रखते हैं, या किसी कार्य में व्यक्तियों का एक समूह रुचिकर है तो दूसरे समूह अरुचिकर हैं, अथवा किसी गणितीय उपलब्धि-परीक्षण में एक व्यक्ति 90 अंक पाता है तो अन्य केवल 10 अंक। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि भेदबोधकता के द्वारा अन्तिम समूहों (Extreme groups) का अध्ययन सम्भव होता है। अतएव किसी भी मनोवैज्ञानिक परीक्षण में भेद-बोधकता का होना आवश्यक है, तथा परीक्षण तभी भेदबोधक होगा जब उसका प्रत्येक पद या प्रश्न भेद-बोधक हो। अब प्रश्न उठता है कि यह कैसे ज्ञात किया जाये कि परीक्षण का कोई विशेष पद भेद-बोधक है अथवा नहीं। साधारण विधि के अनुसार यदि किसी प्रश्न को समूह के 50 प्रतिशत उच्च योग्यता तथा 50 प्रतिशत निम्न योग्यता वाले व्यक्ति हल कर लेते हैं वह प्रश्न या पद विभेदकारी समझा जायेगा, अतएव उसे परीक्षण में सम्मिलित किया जा सकता है। किन्तु किसी पद या प्रश्न के कठिनाई स्तर (Difficulty) या भेद-बोधक मूल्य को ज्ञात करने की यह कोई वैज्ञानिक विधि नहीं है। एक मनोवैज्ञानिक के रूप में हमें किसी भी परीक्षण के प्रत्येक पद का भेद-बोधक मूल्य (Discriminative value) वैज्ञानिक ढंग से ज्ञात करना चाहिए। वैज्ञानिक विधि के अनुसार हम उस पद में प्राप्त व्यक्तियों के अंकों को उनकी योग्यता के अनुसार क्रमों में व्यवस्थित कर लेते हैं। तथा फिर यह देखने का प्रयास करते हैं कि उच्च योग्यता वाले समूह में कितने प्रतिशत व्यक्तियों ने उस प्रश्न को शुद्ध रूप से हल किया है तथा कितने प्रतिशत व्यक्तियों ने उस प्रश्न को गलत रूप से हल किया है। इसी प्रकार निम्न योग्यता वाले समूह में भी यह ज्ञात किया जाता है कि प्रश्न या पद को कितने प्रतिशत व्यक्तियों ने सही तथा कितने प्रतिशत ने गलत हल किया है। यहाँ यह स्मरणीय है कि किसी भी पद का विभेद मूल्य समूह के उच्चतम एवं निम्नतम वर्गों पर ज्ञात किया जाता है तथा इस सम्बन्ध में मध्यम वर्ग की कोई उपयोगिता नहीं होती है। उदाहरणार्थ, मान लीजिए कि हमें किसी बुद्धि-परीक्षण के 'अ' पद या प्रश्न का भेद-मूलक ज्ञात करना है। यदि हमने उस पद को 150 व्यक्तियों के एक समूह पर दिया, तो हम यह देखने का प्रयास करेंगे कि उस समूह के एक-तिहाई या 50 उच्च योग्यता वाले तथा दूसरे-तिहाई या 50 निम्न योग्यता वाले व्यक्तियों में से कितने-कितने प्रतिशत व्यक्तियों ने उस

Scanned with CamScanner

यहाँ पद 'अ' का भेदबोधक मूल्य 5.04 ज्ञात हुआ। यदि किसी भी पद का भेदबोधक मूल्य 1.96 से अधिक हो तो वह पद भेद-बोधक होगा और उसे परीक्षण में शामिल कर लिया जावेगा। चूँकि 5.04 भेद-बोधक मूल्य 1.96 से अधिक है अतएव पद 'अ' भेदबोधक है। इसी प्रकार से सम्पूर्ण परीक्षणों के प्रत्येक पद का भेद-बोधक मूल्य ज्ञात किया जाता है। यदि परीक्षणों के समस्त पद भेद-बोधक हों तो हमारा परीक्षण भी निश्चित रूप से भेद-बोधक होगा, जो एक उत्तम परीक्षण की मान्य तकनीकी कसौटी है।

(4) वैधता (Validity)—परीक्षण की विश्वसनीयता के साथ-साथ उनका वैध होना भी अत्यन्त आवश्यक है। परीक्षण की वैधता से हमारा आशय यह है कि परीक्षण उस उद्देश्य की पूर्ति करता है जिसके हेतु उसका निर्माण किया गया है। यदि परीक्षण द्वारा उस उद्देश्य की पूर्ति हो रही है तो हमारा परीक्षण वैध कहलायेगा अन्यथा अवैध। अतएव उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण की यह विशेषता है कि उसे वैध होना चाहिए। परीक्षण की वैधता विभिन्न प्रकार की होती है—संक्रिया, पूर्वकथित, अंकित, विषय-वस्तु कारक, निर्मित, कॉनकरेण्ट (Concurrent) आदि। विभिन्न परीक्षणों की वैधता को विभिन्न प्रकार से ज्ञात किया जाता है। वैधता ज्ञात करने में सह-सम्बन्ध विधि का प्रयोग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त प्रतिगमन, पूर्वकथन, प्रत्याशा तालिका तथा कट ऑफ स्कोर के द्वारा भी परीक्षण वैधता को ज्ञात किया जाता है। अध्याय 12 में परीक्षण-वैधता के समस्त पक्षों का विस्तार से वर्णन किया जावेगा।

(5) विश्वसनीयता (Reliability)—एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता उसका विश्वसनीय होना है। विश्वसनीयता से हमारा तात्पर्य ऐसी परीक्षा से है जो पुनः-पुनः प्रयोग करने पर एक से ही निष्कर्ष प्रदान करे। आज एक विद्यार्थी को गणित की परीक्षा में 25 अंक प्राप्त होते हैं, कुछ दिन पश्चात् वही परीक्षण दुबारा देने पर भी यदि उसको लगभग इतने अंक प्राप्त हों तो हम कह सकते हैं कि हमारी परीक्षा विश्वसनीय है। इसके विपरीत, यदि कोई परीक्षण विभिन्न समय में प्रशासित करने पर भिन्न-भिन्न अंक प्रदान करता है तो उसे अविश्वसनीय कहा जायेगा, क्योंकि वह व्यक्ति या समूह की वास्तविक स्थिति से हमें अवगत नहीं करा पाता। किसी भी मनोवैज्ञानिक परीक्षण की विश्वसनीयता को विभिन्न विधियों-पुनर्परीक्षण विधि, समानान्तर रूप विधि, अर्द्ध-विच्छेद विधि, तर्कयुक्त समानता विधि प्रसारण विश्लेषण तथा मापन की मानक त्रुटि के द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। परीक्षण विश्वसनीयता को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारक-आयु-प्रसार, समूह प्रसार, फलांक-प्रसार परीक्षण की लम्बाई अभ्यास समानान्तर आदि होते हैं। विश्वसनीयता के प्रत्येक पक्ष के विस्तृत अध्ययन के लिए अध्याय 13 में प्रकाश डाला जावेगा।

(6) मानक (Norms)—एक उत्तम मानकीकृत परीक्षण की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि उसके मानक स्थापित हों क्योंकि किसी अमुक व्यक्ति की समूह में स्थिति जानने के लिए या उसकी अन्य व्यक्तियों से तुलना करने के लिए हमें मानकों की आवश्यकता होती है। मानक किसी विशेष समूह में व्यक्तियों के औसत कार्य या निष्पादन की इकाई है। परीक्षण के मानकों को विशाल समूह पर प्रशासित कर ज्ञात किया जाता है। अधिकांशतः आयु मानकों, श्रेणी मानकों, शतांशीय मानकों तथा प्रमामित फलांक मानकों या टी-फलांक मानकों को ज्ञात किया जाता है। फिर इन मानकों की सहायता से किसी परीक्षण पर प्राप्त व्यक्ति के मूल प्राप्तांकों (Raw scores) का विवेचन किया जाता है। मानकों का विस्तार से उल्लेख अध्याय-15 में किया जायेगा।

(7) विशिष्टता (Specificity)—परीक्षण की यह विशेषता वस्तुनिष्ठता की पूरक है जहाँ यदि परीक्षण इस प्रकार का है जबकि उसकी प्रकृति से भिज्ञ परीक्षार्थी परीक्षण में उच्च फलांक प्राप्त करते हैं तथा अनिभिज्ञों को कम फलांक प्राप्त होते हैं। ऐसे परीक्षण को विशिष्ट (Specific) परीक्षण कहा जायेगा।

Scanned with CamScanner

श्रेणी मानक
(GRADE NORMS)

आयु मानक की समस्त विशेषताएँ श्रेणी-मानक में निहित हैं, अन्तर केवल इतना है कि मूल-प्राप्तांकों का सन्दर्भ समूह आयु-समूह की अपेक्षाकृत श्रेणी-समूह हो जाता है। इसमें एक परीक्षण को विद्यालय की विभिन्न कक्षाओं; जैसे—सातवीं, आठवीं, नवीं एवं दसवीं के प्रतिनिधित्व समूह को देकर, प्रत्येक श्रेणी के औसत अंकों में ज्ञात कर लिया जाता है। इस प्रकार के मानकों का प्रयोग अधिकांश रूप से विद्यालयों में ही किया जाता है। इनकी विवेचना करने में श्रेणी का ध्यान रखा जाता है। यदि एक सातवीं श्रेणी का बालक नवीं श्रेणी के औसत श्रेणी का बालक सातवीं श्रेणी के औसत अंकों को ही प्राप्त करता है तो वह निम्न स्तर का बालक समझा जायेगा। श्रेणी-मानक की भी लगभग वही कमियाँ हैं, जो आयु-मानक की। यह आवश्यक नहीं है कि समस्त श्रेणियों में वृद्धि समान रूप से हो। इनको भी अत्यधिक सुगमतापूर्वक ज्ञात किया जा सकता है। उपलब्धि परीक्षणों में अधिकांश रूप से श्रेणी-मानक ही निर्धारित किये जाते हैं। इस प्रकार श्रेणी-मानक प्रत्येक श्रेणी-स्तर के औसत

Scanned with CamScanner

2.1

मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण
(STANDARDIZED ACHIEVEMENT TESTS)

आधुनिक युग में जहाँ व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन के जीवन में वैयक्तिक भिन्नताएँ दृष्टिगोचर हो रही हैं वहाँ समस्त मनोवैज्ञानिक परीक्षणों विशेष रूप से उपलब्धि परीक्षणों का अपना विशेष महत्व है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण की शृंखला में अत्यधिक व्यापक रूप से प्रयोग में आने वाले उपलब्धि परीक्षण हमारे शैक्षिक जीवन में अत्यन्त सहायक होते हैं। विद्यार्थियों, अध्यापकों, शिक्षण विधियों, पाठ्यक्रम या शिक्षा के किसी भी पहलू का मापन केवल उपलब्धि परीक्षणों द्वारा ही सम्भव होता है। आज विश्व में विभिन्न स्तरों–प्राइमरी, जूनियर, हाईस्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय आदि पर विभिन्न भाँति के उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जा रहा है। इसके अभाव में शैक्षिक विकास की प्रक्रिया पूर्णतया असम्भव है। इनका प्रयोग केवल शैक्षिक परिस्थितियों तक ही सीमित नहीं होता बल्कि उद्योग, व्यवसाय, सेना, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में भी इनका व्यापक प्रयोग किया जाता है। कर्मचारियों की नियुक्ति, विद्यार्थियों के चयन एवं उन्नति, सैनिकों के वर्गीकरण एवं उन्हें ग्रेड प्रदान करने, किसी क्षेत्र में कठिनाई का पता लगाने, विभिन्न सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थाओं में व्यक्ति का चयन करने, तुलनात्मक अध्ययन करने आादि में उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

ऐतिहासिक अवलोकन
(HISTORICAL PERSPECTIVES)

सम्भवतया समस्त मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की शृंखला में उपलब्धि परीक्षणों का इतिहास अत्यधिक प्राचीन है। उन्नीसवीं शताब्दी तक प्राय: सभी विश्वविद्यालयों में मौखिक परीक्षाएँ प्रचलित थीं किन्तु धीरे-धीरे विद्यार्थियों की निरन्तर वृद्धि, समय के अभाव एवं जीवन की जटिल परिस्थितियों में मौखिक परीक्षाओं का करना असम्भव-सा प्रतीत होने लगा। सर्वप्रथम सन् 1840 में शिक्षा बोर्ड के सेक्रेटरी **होरेस मन** (Horace Mann) ने लिखित परीक्षण पर जोर दिया जिसके फलस्वरूप बोस्टन (Boston) में इसका प्रयोग होने लगा। इसकी सफलता को देखकर अन्य शिक्षाविद् एवं विद्वान भी इस दिशा में रुचि लेने लगे जिसके फलस्वरूप अमेरिका स्कूल एवं कॉलेजों में लिखित परीक्षाओं की शीघ्रता के साथ प्रयोग होने लगा। सन् 1865 में न्यूयार्क स्टेट रीजेण्ट ने भी लिखित परीक्षाओं का प्रोत्साहन दिया। अतएव उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक इंग्लैण्ड तथा अमेरिका में लिखित परीक्षाएँ व्यापक रूप में प्रचलित हो गयीं।

Scanned with CamScanner

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सर्वप्रथम **फिशर** (Fisher) ने वस्तुनिष्ठ परीक्षणों का सूत्रपात किया में **जे. एम. राइस** (J. M. Rice) ने इस दिशा में अपना विशेष योगदान दिया। सन् 1904 में उन्होंने 'शब्दविन्यास' वस्तुनिष्ठ परीक्षण का निर्माण किया एवं अपनी परीक्षा के आधार पर उन्होंने समय का व्यक्ति की उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यद्यपि आधुनिक समय में उनके इस कोई महत्व नहीं है, फिर भी हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उपलब्धि परीक्षण के इतिहास में वह व्यक्ति थे जिन्होंने इस प्रकार के परीक्षण का एक लम्बे समूह पर अध्ययन किया।

किन्तु लिखित परीक्षाओं का वास्तविक रूप से जन्म सन् 1900 में हुआ जबकि कॉलेज विश्वविद्यालयों में प्रवेश पाने हेतु इन परीक्षणों की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। बीसवीं शताब्दी प्रारम्भिक वर्षों में **थार्नडाइक** ने इस दिशा में अपने छात्रों को प्रोत्साहित किया। उसका कहना था कि वस्तु का अस्तित्व है तो वह कुछ मात्रा में अवश्य है और यदि कोई भी वस्तु थोड़ी सी भी मात्रा में अस्तित्व रखती है तो वह मापी जा सकती है।'' अतएव **थार्नडाइक** एवं उसके शिष्यों ने विभिन्न विद्यालय विषयों में मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों की रचना प्रारम्भ की जिसका उस समय के शिक्षाविदों ने उत्साह से स्वागत किया। **थार्नडाइक** के शिष्य **स्टोन** (1908) ने गणितीय तर्क पर प्रथम मानकीकृत परीक्षण प्रकाशित किया। **थार्नडाइक** (1909) ने बालकों के लिए हस्तलेख मापनी का प्रकाशन किया। इस प्रकार सन् (1920) तक विभिन्न विद्यालय विषयों में इतने मानकीकृत परीक्षणों की रचना हुई कि प्रारम्भिक हाईस्कूल स्तर का अध्यापक उन्हें ही प्रयोग करता रहा। **टाइलर** (1930) के निर्देशन में 'एट-ईयर स्टडी' ने विभिन्न उद्देश्यों में मापन हेतु कई उपलब्धि परीक्षणों का मूल्यांकन किया किन्तु यह देखने में आया कि इन वस्तुनिष्ठ उपलब्धि परीक्षणों द्वारा केवल कुछ उद्देश्यों का ही मापन हो सका अतएव कुछ आत्मनिष्ठ पद्धतियों को विकसित किया गया। इसी वर्ष अमेरिकन कौंसिल ऑफ एजुकेशन ने विभिन्न हाईस्कूल विषयों में उत्तम मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों का निर्माण किया। इसमें पदों की रचना में उद्देश्यों की पूर्ति पर जोर दिया गया। बाद में सन् 1930 में अंक निर्मित एवं प्रकाशित होने वाले मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों का उल्लेख **ओडेल** ने अपनी प्रकाशित पुस्तक में किया। सन् 1938 में **ब्यूरो** (Buros) ने भी कई उपलब्धि परीक्षणों का निर्माण किया। इसके पश्चात् सन् 1939 में विभिन्न विशिष्ट क्षेत्रों में उपलब्धि परीक्षणों की रचना होने लगी। इस वर्ष में **गेट्स** (1939) के 'वाचन तत्परता' एवं 'समूह नैदानिक' उपलब्धि परीक्षणों तथा **राइटस्टोन** के 'सामाजिक अध्ययन' सम्बन्धी परीक्षण का प्रकाशन हुआ। तत्पश्चात् सन् 1947-48 में तीन प्रमुख उपलब्धि श्रृंखलाओं 'Cooperative Achivement Test', 'Evaluation Adjustment Series' और 'Essential High School Contact Battery' का हाईस्कूल एवं कॉलेज में पढ़ने वाले छात्रों हेतु निर्माण किया गया। बीसवीं शताब्दी के छठवें दशक में तो उपलब्धि परीक्षणों की भरमार सी आ गयी। प्राइमरी, जूनियर, हाईस्कूल एवं कॉलेज स्तर पर प्रयोग में आने वाले उपलब्धि परीक्षणों की रचना हुई। इस अवधि में 6 प्रमुख सामान्य उपलब्धि परीक्षणों का निर्माण एवं संशोधन किया गया। सन् 1953 में 'स्टैण्डर्ड उपलब्धि परीक्षण' सन् 1956 में 'आयोवा मूल कौशल परीक्षण' सन् 1957 में 'कैलीफोर्निया उपलब्धि परीक्षण' तथा 'एस. आर. ए. उपलब्धि श्रृंखला', सन् 1958 में 'सीक्यून्सिल शैक्षिक उन्नति परीक्षण' तथा सन् 1959 में 'मेट्रोपालिटन उपलब्धि परीक्षणों की रचना एवं संशोधन हुआ। इसी अवधि में विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विशिष्ट विषयों एवं निदान से सम्बन्धित उपलब्धि परीक्षणों का भी निर्माण हुआ। तत्पश्चात् विभिन्न क्षेत्रों में आज भी पर्याप्त रूप से प्रयास जारी हैं। **डेविड वेश्लर** ने 1992 में Wechsler Individual Achievement Test का निर्माण शैक्षिक उपलब्धि मापने हेतु किया। इसका तृतीय संस्करण 2009 में प्रकाशित हुआ। इसकी आयु सीमा 4 वर्ष से 50 वर्ष 11 महीनें है।

उपलब्धि परीक्षण का अर्थ
(MEANING OF ACHIEVEMENT TESTS)

सुपर (Super) के शब्दों में, ''एक उपलब्धि या क्षमता परीक्षण यह ज्ञात करने के लिए प्रयोग किया जाता है कि व्यक्ति ने क्या और कितना सीखा तथा वह कोई कार्य कितनी भली-भाँति कर लेता है।'' (An achievement or proficiency test is used to ascertain what and how much has been learnt or how well a task has been performed.)

इबेल (Ebel) के अनुसार, ''उपलब्धि परीक्षण वह अभिकल्प है जो विद्यार्थी के द्वारा ग्रहण किये गये ज्ञान, कुशलता या क्षमता का मापन करता है।'' (An achievement test is one designed to measure a student's grasp of knowledge or his proficiency in certain skills.)

फ्रीमैन के विचार में, ''उपलब्धि परीक्षण वह अभिकल्प है जो एक विशेष विषय या पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों में व्यक्ति के ज्ञान, समझ एवं कौशल का मापन करता है।'' (A test of educational achievement is one designed to measure knowledge, understanding or skills in a specified subject or a group of subjects.)

अतएव उक्त परिभाषाओं को हृदयंगम करते हुए उपलब्धि परीक्षणों से हमारा अभिप्राय ऐसे परीक्षणों से है जिनमें एक निश्चित समयावधि के प्रशिक्षण एवं सीखने के पश्चात् व्यक्ति के ज्ञान एवं समझ का किसी एक विशेष विषय या विभिन्न विषयों में मापन किया जाता है। प्रायः विद्यालय के समस्त विषयों में ज्ञान का मापन करने हेतु इनका प्रयोग होता है क्योंकि इनका मुख्य उद्देश्य ज्ञान के मापन के साथ-साथ शैक्षिक क्षेत्र में पूर्वकथन भी होता है। इसको निम्न शब्दों में भी व्यक्त किया जा सकता है :

''By achievement tests, we mean those tests that measure the attainment or accomplishment of an individual in a particular branch of knowledge or some branches of knowledge after a definite period of training and learning. The main purpose of all the achievement tests is to predict the future success of the individual in a given field of knowledge in the educational sphere.''

शैक्षिक तथा उपलब्धि आयु तथा लब्धि
(EDUCATIONAL & ACHIEVEMENT AGE & QUOTIENT)

समस्त शैक्षिक परीक्षणों के प्राप्तांकों को ज्ञात करने हेतु हमें सर्वप्रथम शैक्षिक एवं उपलब्धि आयु ज्ञात करनी होती है तथा फिर इनके आधार पर शैक्षिक एवं उपलब्धि-लब्धि की गणना की जाती है। शैक्षिक एवं उपलब्धि आयु ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम, परीक्षण पर प्राप्त मूल प्राप्तांकों को शतांशीय क्रम (Percentile ranks), प्रतिमान प्राप्तांक (Standard scores) में परिवर्तित किया जाता है, फिर आयु मानक (Age-norm) तथा श्रेणी मानक (Grade-norm) के माध्यम से उनकी शैक्षिक एवं उपलब्धि आयु ज्ञात कर ली जाती है। उदाहरणार्थ, यदि किसी मानकीकृत परीक्षण में एक व्यक्ति के मूल प्राप्तांक 4.5 श्रेणी की समानता ज्ञात करते हैं तो इसका यह तात्पर्य हुआ कि उस परीक्षण में व्यक्ति की उपलब्धि चतुर्थ श्रेणी के औसत व्यक्ति के समान है। इस प्रकार से मानकों की सूची (Norms index) के माध्यम से व्यक्ति की उपलब्धि का पार्श्व चित्र (Profile) बनाया जा सकता है जो उसकी उपलब्धि के सामान्य स्तर एवं निष्पादन की कमियों का मूल्यांकन करता है।

शैक्षिक आयु (Educational Age or E. A.)

शैक्षिक आयु विभिन्न विषयों में व्यक्ति की उस सामान्य स्थिति को इंगित करती है जिसमें उसकी जाँच की जा चुकी है। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति को एक शैक्षिक परीक्षणमाला दी गयी जिसमें उसने

Scanned with CamScanner

गणित में 9 वर्ष स्तर, विज्ञान में 10 वर्ष स्तर, इंगलिश में 12 वर्ष स्तर तथा हिन्दी में 11 वर्ष स्तर के अंक प्राप्त किये, तो उसकी शैक्षिक आयु (E.A.) इन सभी का औसत 10.5 हुई। इस प्रकार विभिन्न आयु प्राप्तांक व्यक्ति की शैक्षिक उपलब्धि के सामान्य स्तर का मापन करते हैं। अतएव शैक्षिक आयु वह मिश्रण (Composite) है जो व्यक्ति की सामान्य उपलब्धि (General achievement) को प्रदर्शित करती है। सामान्य रूप से वह व्यक्ति की शैक्षिक विशेषताओं एवं कमजोरियों को बताने में अत्यधिक सहायक होती है।

उपलब्धि आयु (Achievement Age or A. A.)

उपलब्धि आयु किसी एक विषय में व्यक्ति की आयु के अनुसार उसकी स्थिति की ओर संकेत करती है। उदाहरणार्थ, यदि एक व्यक्ति गणित की परीक्षा में 10 वर्ष की उपलब्धि आयु रखता है, तो उसका स्तर भी 10 वर्ष के व्यक्ति के समान होगा।

शैक्षिक लब्धि (Educational Quotient or E. Q.)

शैक्षिक लब्धि में व्यक्ति की वास्तविक आयु के आधार पर सीखने के सामान्य स्तर को ज्ञात किया जाता है। इसके लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग होता है–

$$\text{शैक्षिक लब्धि (E.Q.)} = \frac{\text{शैक्षिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$$

माना कि किसी बालक की शैक्षिक आयु 11 वर्ष एवं वास्तविक आयु (Chronological age) 10 वर्ष है तो उसकी शैक्षिक लब्धि $11/10 \times 100 = 110$ होगी। सामान्य रूप से औसत शैक्षिक लब्धि 100 होती है, इससे कम या अधिक लब्धि का होना एक ही आयु-समूह के व्यक्तियों की तुलना करने में सहायक होता है।

उपलब्धि लब्धि (Achievement Quotient or A.Q.)

उपलब्धि-लब्धि में व्यक्ति की मानसिक आयु के आधार पर उसके सीखने के सामान्य स्तर को ज्ञात किया जाता है।

इसके लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$\text{उपलब्धि-लब्धि} = \frac{\text{शैक्षिक आयु}}{\text{मानसिक आयु}} \times 100$$

उदाहरणार्थ, यदि किसी बालक की शैक्षिक आयु 9 वर्ष तथा मानसिक आयु 10 वर्ष है, तो उसकी उपलब्धि-लब्धि $9/10 \times 100 = 90$ होगी। चूँकि सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों ही दृष्टिकोणों से यह कथन सत्य है कि एक ही आयु-समूह के व्यक्तियों की मानसिक योग्यताओं में महत्वपूर्ण भिन्नताएँ होती हैं अतएव व्यक्ति में सीखने की योग्यता जानने हेतु वास्तविक आयु की अपेक्षाकृत मानसिक आयु को अधिक विश्वसनीय सूची समझा जाता है। इसीलिए उपलब्धि परीक्षण में शैक्षिक-लब्धि की अपेक्षाकृत उपलब्धि-लब्धि को महत्वपूर्ण सूची समझा जाता है, क्योंकि यह व्यक्ति के सीखने की मात्रा एवं गुण की ओर इंगित करती है।

उपलब्धि परीक्षणों का उपयोग
(USES OF ACHIEVEMENT TESTS)

आधुनिक समय में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है। विद्यालय में छात्रों का प्रवेश करने, औद्योगिक कर्मचारियों की नियुक्ति करने, सैनिक अधिकारियों

एवं सिपाहियों का चयन करने, सरकारी प्रतियोगिता तथा व्यावसायिक एवं शैक्षिक परीक्षाओं आदि क्षेत्रों में इनका प्रयोग दिन-प्रतिदिन होने लगा है। अतएव उपलब्धि परीक्षण का उपयोग एक अध्यापक, शिक्षाशास्त्री एवं निर्देशनकर्ता तक सीमित न होकर मनोवैज्ञानिक, चिकित्साशास्त्री, अनुसन्धानकर्ता, शैक्षिक अधिकारी आदि तक प्रचलित है। अब हम इसके मुख्य-मुख्य उपयोगों पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

(1) निम्नवत् कार्य-स्तर की जाँच करना—उपलब्धि परीक्षण के माध्यम से यह ज्ञात किया जाता है कि अमुक व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में कार्य करने की आवश्यक योग्यता रखता है अथवा नहीं। दूसरे शब्दों में, एक निश्चित अवधि के प्रशिक्षण के पश्चात् यह ज्ञात करना आवश्यक होता है कि व्यक्ति ने उस अमुक कार्य में प्रशिक्षण के पश्चात् आवश्यक कौशल प्राप्त किया या नहीं। अतएव उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति की अमुक कार्य में निम्नवत् योग्यताओं को जानने में सहायक होते हैं।

(2) विभिन्न क्षेत्रों में चयन करना—जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्तियों के चयन एवं विद्यालय में छात्रों के प्रवेश हेतु इनका प्रयोग किया गया है। वर्तमान निष्पादन के आधार पर भावी उपलब्धि के सम्बन्ध में पूर्वकथन करने तथा केवल समर्थ विद्यालयों की पदोन्नति करने में यह सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त औद्योगिक एवं व्यावसायिक क्षेत्र में कर्मचारियों की नियुक्ति तथा अन्य सेवाओं में व्यक्ति के चयन हेतु भी इनका प्रयोग किया जाता है।

(3) वर्गीकरण एवं नियुक्ति करने में उपयोग—पूर्व-कृत्य, प्रशिक्षण, अनुभव एवं साफल्य प्रमाण के आधार पर सैनिकों का वर्गीकरण, विद्यालयों में बालकों का वर्गीकरण, औद्योगिक कर्मचारियों का वर्गीकरण, रोजगार दफ्तर में व्यक्तियों का वर्गीकरण तथा अमुक व्यवसाय में अमुक व्यक्ति की नियुक्ति करने में उपलब्धि परीक्षणों का उपयोग विस्तृत रूप से किया जाता है।

(4) वर्ग निर्धारण एवं पदोन्नति में प्रयोग—विद्यालय में छात्रों को विभिन्न कक्षाओं में निर्धारित करने एवं उद्योगों में कर्मचारियों की पदोन्नति करने में भी उपलब्धि परीक्षण अत्यन्त उपयोगी होते हैं।

(5) निर्देशन प्राप्त करना—उपलब्धि परीक्षण बालकों को शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने में भी सहायक होते हैं। जब तक हमें बालकों की मानसिक योग्यता, अभिवृत्तियों, रुचियों, उपलब्धि आदि के सम्बन्ध में ज्ञात नहीं होगा, तब तक हम यह नहीं बता सकते कि उसके लिए कौन-सा विषय या व्यवसाय उपयुक्त होगा। अतएव उपलब्धि परीक्षणों के माध्यम से व्यक्ति के विषय एवं व्यवसाय के सम्बन्ध में भविष्यवाणी की जा सकती है। इन परीक्षणों द्वारा यह भी निर्देशन प्रदान किया जाता है कि अमुक व्यक्ति को हाईस्कूल या किसी निश्चित स्तर के पश्चात् शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए अथवा नहीं, यदि हाँ तो किस प्रकार की शिक्षा। यदि एक बालक डॉक्टर बनने की जिज्ञासा रखता है तो उसके लिए यह आवश्यक है कि वह जीव-विज्ञान एवं विज्ञान में उच्च स्तर की योग्यता रखे। इस प्रकार से उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति को उचित निर्देशन देकर भविष्य के प्रशिक्षण का निश्चय करते हैं।

(6) चिकित्सा एवं संदर्शन प्रदान करना—चिकित्सा एवं संदर्शन के क्षेत्र में उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है। विद्यार्थियों को परामर्श देने एवं उनकी कठिनाइयों के निवारण हेतु निदानात्मक परीक्षण की रचना होती है। जब व्यक्ति किसी भी शैक्षिक क्षेत्र में कठिनाइयों एवं कमजोरियों का अनुभव करता है तो उसके उपचार हेतु इन उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। संदर्शन प्रदान करने में यह व्यक्ति की योग्यताओं को समझने में सहायक होता है। यह अध्यापक एवं संदर्शनकर्ता को इस योग्य बनाता है कि वह प्रत्येक व्यक्ति की कठिनाइयों एवं कमजोरियों का निदान कर सके। विभिन्न चिकित्सक कार्यों में उपलब्धि परीक्षणों की आवश्यकता के सम्बन्ध में एनेस्टेसी (Anastasi) ने लिखा है–

Scanned with CamScanner

"The case of truancy, behaviour problems and delinquency for example educational failures and maladjustment to the school situations may be contributing factors. Similarly, emotional maladjustment among intellectually gifted children are sometimes found to be associated with improper educational placements."

(7) सीखने में सुविधा प्रदान करना—इन परीक्षणों द्वारा सीखने में सुविधा प्रदान की जाती है, क्योंकि इनके माध्यम से यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्ति किसी निश्चित विषय में कितना सीख चुका है तथा उसे कितना सीखना शेष है जिससे उसे भविष्य में सीखने हेतु प्रेरित किया जाए।

(8) अध्ययन के लिए प्रेरित करना—वास्तव में देखा जाय तो उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति को अध्ययन के लिए प्रेरित करते हैं क्योंकि इनके द्वारा जब व्यक्ति को अपनी उच्चतम सफलता के विषय में ज्ञान होता है या अपनी कमजोरियों का पता चलता है, तो उसे अध्ययन की प्रेरणा मिलती है।

(9) अध्यापक का मूल्यांकन—इन परीक्षणों की सहायता से अध्यापक की कुशलताओं एवं प्रभावात्मकताओं का मूल्यांकन किया जाता है। परीक्षा निष्कर्षों के आधार पर हम केवल विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के विषय में ही नहीं जानते बल्कि अध्यापक की प्रभावात्मकता का मूल्यांकन करते हैं। इस प्रकार से यह अध्यापक की कार्यकुशलता के आधार पर उसकी नियुक्ति एवं पदोन्नति में भी सहायक होते हैं। इसके माध्यम से अध्यापक की कमजोरियों का पता लग जाता है।

(10) शिक्षण पद्धतियों का मूल्यांकन—बालक एवं अध्यापक के साथ-साथ ये परीक्षण विभिन्न शिक्षण-पद्धतियों की प्रभावात्मकता का भी मूल्यांकन करते हैं। इनके द्वारा यह भी निश्चित किया जाता है कि किस छात्र समूह पर कौन-सी शिक्षण पद्धति उपयोगी होगी। यह अध्यापक को परामर्श भी देती है कि यदि कोई छात्र समूह या अमुक छात्र किसी विशेष विधि से विषय को नहीं समझ पा रहा है तो अध्यापक को उसमें सुधार कर अन्य पद्धति को अपनाना चाहिए।

(11) शैक्षिक संस्थाओं को पहचानने में सहायक—उपलब्धि परीक्षण के आधार पर हमें विभिन्न विद्यालयों के शैक्षिक स्तर का पता लगता है जिसके द्वारा इनकी तुलना सरलता से की जा सकती है।

(12) पाठ्य-वस्तु के संशोधन में सहायक—उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग पाठ्य-वस्तु के संशोधन में भी सहायक होता है। परीक्षा फलांकों के आधार पर यह ज्ञात हो जाता है कि अमुक स्तर के छात्रों हेतु अमुक पाठ्य-वस्तु कठिन या सुगम है जिससे उनका संशोधन उसी के अनुकूल हो सके।

उपलब्धि परीक्षण की सीमाएँ
(LIMITATIONS OF ACHIEVEMENT TESTS)

उपलब्धि परीक्षण की दो प्रमुख कमियाँ हैं जिनके कारण इनकी आलोचना की जा सकती है। प्रथम, कभी-कभी इनके प्रयोग से अध्यापक अपने शिक्षण को इतना कठोर बना लेते हैं कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। दूसरे प्राय: शिक्षा के समस्त क्षेत्रों में इनका मानकीकरण हानिकारक होता है। तीसरे, इनमें उपलब्धि के समस्त पहलुओं पर ध्यान न देकर केवल कुछ पहलुओं पर ही जोर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, यह सीखने की कुछ क्रियाओं की ओर तो अधिक महत्व देते हैं जबकि अन्य की ओर ध्यान नहीं देते। अतएव इन परीक्षणों पर अत्यधिक विश्वास करना हानिकारक हो सकता है।

एक उत्तम उपलब्धि परीक्षण की विशेषताएँ
(CHARACTERISTICS OF A GOOD ACHIEVEMENT TEST)

एक उत्तम उपलब्धि परीक्षण में लगभग वही विशेषतायें निहित होनी चाहिए जो एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण के लिए आवश्यक हैं। ये निम्नलिखित हैं—

(i) उत्तम उपलब्धि परीक्षण का निश्चित उद्देश्य निर्धारित होना चाहिए।

(ii) उत्तम उपलब्धि परीक्षण की पाठ्य-वस्तु छात्रों के स्तर, योग्यताओं, रुचियों एवं क्षमताओं के अनुकूल होनी चाहिए जिससे वह उचित रूप से उपलब्धि का मापन कर सके।

(iii) उत्तम उपलब्धि परीक्षण व्यावहारिक दृष्टिकोण से उपयोगी तथा धन, समय एवं व्यक्ति के दृष्टिकोण से मितव्ययी होना चाहिए।

(iv) इसके प्रशासन, फलांकन एवं विवेचन की विधि सुगम, स्पष्ट एवं वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए जिससे एक मामूली अध्यापक भी इसका उपयुक्त प्रयोग कर सके।

उपलब्धि परीक्षणों के प्रारूप
(TYPES OF ACHIEVEMENT TESTS)

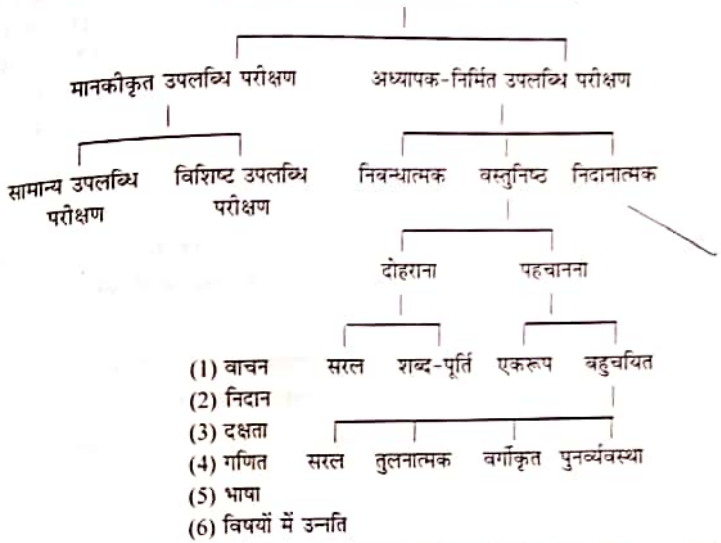

(v) इसकी विषय-सामग्री व्यापक होनी चाहिए अर्थात् जब किसी विषय पर उपलब्धि परीक्षण की रचना करनी हो, तो यह ध्यान रखना चाहिए कि उस विषय के समस्त क्षेत्रों से पदों को परीक्षण में स्थान मिल रहा है या नहीं। उदाहरणार्थ, गणित के उपलब्धि परीक्षण में हमें अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित, सांख्यिकी एवं त्रिकोणमिति के समस्त क्षेत्रों से प्रश्नों को सम्मिलित करना होता है, तभी हमारा परीक्षण व्यापक कहलायेगा।

(vi) उत्तम उपलब्धि परीक्षण के लिए यह भी आवश्यक है कि यह विभेदकारी होना चाहिए जो किसी कक्षा के श्रेष्ठ एवं निम्न बालकों में विभेद कर सके।

(vii) उत्तम उपलब्धि परीक्षण विश्वसनीय होना चाहिए। विश्वसनीयता से आशय है कि आज वह जिस अमुक छात्र का उपलब्धि के विषय इंगित करे, एक सप्ताह बाद भी लगभग वही बात कहे।

(viii) इन सबके अतिरिक्त उसे वैध भी होना चाहिए अर्थात् अपने उद्देश्यों की पूर्ति करने वाला होना चाहिए।

उपलब्धि परीक्षण की विश्वसनीयता (Reliability)

प्राय: समस्त स्तरों पर उपलब्ध मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों की विश्वसनीयता सन्तोषजनक ज्ञात हुई। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की अपेक्षाकृत निबन्धात्मक परीक्षाओं की विश्वसनीयता कम पायी जाती है,

Scanned with CamScanner

क्योंकि निबन्धात्मक परीक्षाएँ आत्मनिष्ठ तत्वों से प्रभावित होती हैं। उपलब्धि परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने में पुनर्परीक्षण विधि का प्रयोग अनुपयुक्त होता है क्योंकि इसमें स्मृति तत्व का विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है। अतएव अधिकांश उपलब्धि परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए समान्तर प्रारूप विधि, अर्द्ध-विच्छेद विधि तथा कूडर-रिचर्डसन सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

उपलब्धि परीक्षणों की वैधता (Validity)

समस्त भाँति के उपलब्धि परीक्षणों की वैधता को (अ) पूर्वकथन द्वारा, (ब) पाठ्य-वस्तु द्वारा, (स) ज्ञात समूह द्वारा, तथा (द) सूचनाओं द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। सर्वप्रथम, पूर्वकथन द्वारा वैधता ज्ञात करने के लिए अध्यापक द्वारा भविष्यवाणी किये गये अंकों तथा परीक्षणों में प्राप्त किये गये अंकों के मध्य सहसम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। पूर्वकथित वैधता में अध्यापक की आत्मीयता का भी प्रभाव पड़ता है। दूसरे, पाठ्य-वस्तु के आधार पर भी उपलब्धि परीक्षण की वैधता को ज्ञात किया जा सकता है। इसमें, किसी विशेषज्ञ की सहायता से यह विदित किया जाता है कि परीक्षण की पाठ्य-वस्तु उद्देश्यों की पूर्ति कर रही है अथवा नहीं। उदाहरणार्थ, यदि एक ऐसा परीक्षण है जिसका उद्देश्य शाब्दिक, आंकिक, तार्किक आदि योग्यताओं का मापन करना है तो उस परीक्षण के पदों की पाठ्य-वस्तु (Content) भी इन्हीं, उद्देश्यों से सम्बन्धित होनी चाहिए, तभी निर्मित किया हुआ परीक्षण वैध होगा। तीसरे, ज्ञात समूहों (Known groups) के माध्यम से भी उपलब्धि परीक्षणों की वैधता ज्ञात की जा सकती है। उदाहरणार्थ, हम यह जानते हैं कि कक्षा के अमुक 10 छात्र पढ़ने में अत्यन्त होशियार हैं, यदि हमारा उपलब्धि परीक्षण भी यही इंगित करे तो उसे वैध कहा जा सकता है। चौथे, सूचनाओं के आधार पर भी उपलब्धि परीक्षणों की वैधता ज्ञात की जा सकती है।

मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण
(STANDARDIZED ACHIEVEMENT TESTS)

मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण से हमारा अभिप्राय ऐसे परीक्षण से है जिसमें पदों का चयन पाठ्यक्रम के अनुकूल हो, जिसकी प्रशासन विधि, निर्देश, समय-सीमा, फलांकन विधि एवं विवेचना समरूप से निश्चित हो तथा मानकों की सारणी तैयार की गयी हो। अब हम कुछ प्रमुख मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों का नाम अंकित करेंगे। मुख्य रूप से विषय-सामग्री के आधार पर मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—(i) सामान्य उपलब्धि परीक्षण, तथा (ii) विशिष्ट उपलब्धि परीक्षण।

सामान्य उपलब्धि परीक्षण (General Achievement Test)

सामान्य उपलब्धि परीक्षण में हम ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र का मापन एक ही प्राप्तांक (Score) के माध्यम से करते हैं। लिंडग्विस्ट एवं मन (Linquist and Mann) के अनुसार, "सामान्य उपलब्धि परीक्षण वह परीक्षण है जो एक ही प्राप्तांक द्वारा उपलब्धि के किसी दिये हुए क्षेत्र में सापेक्षित ज्ञान का बोध कराता है।" ("A general achievement test is one designed to express in terms of a single score a pupils's relative achievement in a given field of achievement.")

आज के इस व्यस्त जीवन में जहाँ लोगों पर धन एवं समय का अभाव है, विद्यालय जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है, अच्छे प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी है, सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाओं का प्रयोग सर्वाधिक रूप से किया जा रहा है। एक मानकीकृत परीक्षणमाला में सामान्य रूप से चार, छः, आठ, दस या इससे अधिक परीक्षण होते हैं जो पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों पर आधारित रहते हैं तथा उद्देश्य न्यादर्श-चयन, विश्वसनीयता एवं वैधता के दृष्टिकोण से सामान्य होते हैं। इन परीक्षणमालाओं का प्रयोग समय-समय पर संशोधन के साथ दीर्घ समय तक किया जा सकता है क्योंकि इनके फलांक हजारों के नमूने

LAXMI अधिगम के लि

पर आधारित होते हैं जिनमें इनकी वस्तुनिष्ठता बढ़ जाती है। इसकी विश्वसनीयता .80 से .90 तक ज्ञात होती है।

किसी भी सामान्य उपलब्धि परीक्षण का मूल्य चयन की गयी विषय-सामग्री की गुढ़ता, पद-विश्लेषण की पर्याप्तता एवं मानकों की उपलब्धि पर निर्भर रहता है। इसीलिए इनका मुख्य रूप से प्रयोग सम्पूर्ण कक्षा की उपलब्धि का चित्र प्रस्तुत करने, विद्यालय के विभिन्न वर्गों की निरन्तर शैक्षिक वृद्धि का मापन करने, पाठ्य-वस्तु, कौशल एवं सूझ के द्वारा समूहों के अन्तरों की व्याख्या करने, व्यक्ति की योग्यताओं में भेद व्यक्त करने तथा शैक्षिक क्षेत्र में व्यक्ति की कमियों का पता लगाकर उनके निदान का प्रयास करने में किया जाता है।

सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाओं की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं। ये परीक्षणमालाएँ तुलनात्मक अध्ययन करने में अत्यन्त सहायक होती हैं। एक परीक्षणमाला में विभिन्न उप-परीक्षणों के सम्मिलित होने से इनकी इकाइयों में समानता रहती है जिससे परिणामों के तुलनात्मक अध्ययन में सरलता रहती है। दूसरी, प्रशासन एवं फलांकन की एकरूपता के कारण इनका प्रशासन एवं फलांकन सुगम हो जाता है। तीसरे, भिन्न-भिन्न परीक्षणों की अपेक्षाकृत किसी एक परीक्षणमाला के उपयोग से समय एवं धन का मितव्यय होता है।

सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाएँ (General Achievement Batteries)

अब हम जूनियर तथा सीनियर हाईस्कूल स्तर के निमित्त निर्मित कुछ सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाओं को उल्लेख करेंगे।

(1) कैलीफोर्निया उपलब्धि परीक्षण (California Achievement Test)—जूनियर से उच्च हाईस्कूल स्तर तक प्रयोग में आने वाली इस परीक्षणमाला की रचना सन् 1957 में हुई। यह परीक्षणमाला पाँच स्तर के व्यक्तियों हेतु निर्मित है तथा प्रत्येक स्तर की परीक्षणमाला में पाँच प्रकार—शाब्दिक वाचन, समझ, गणित में मूल समस्याएँ, तर्क अंक प्रत्यक्ष तथा भाषा व्याकरण—के परीक्षण सम्मिलित हैं। ये समस्त प्रकार के परीक्षण व्यक्ति के मूल कौशलों (Basic skills) को ज्ञात करने पर जोर देते हैं। इसकी प्राथमिक परीक्षणमाला के प्रशासन में 90 मिनट तथा अग्रिम परीक्षणमाला के प्रशासन में 150 मिनट के समय की आवश्यकता होती है। इनका प्रयोग किसी विषय सम्बन्धी कठिनाइयों एवं कमजोरियों को जानने हेतु भी किया जाता है।

सीक्वेंशियल शैक्षिक उन्नति परीक्षा (Sequential Test of Educational Progress)—इस परीक्षणमाला का प्रयोग चार स्तरों—4—6, 7—9, 10—12 तथा 13—14 वर्षों तक की आयु के बच्चों हेतु उपयुक्त समझा जाता है। प्रत्येक स्तर पर वाचन, लेखन, गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, श्रवण तथा निबन्ध लेखन सम्बन्धी बहुउद्देश्यीय परीक्षण सम्मिलित रहते हैं। इन सातों प्रकार के परीक्षणों को अलग-अलग पुस्तिकाओं में प्रकाशित किया गया है जिससे यह व्यक्तिगत रूप से भी उपलब्ध हो सकें। इस माला के निबन्धात्मक भाग के प्रशासन में 25 मिनट तथा वस्तुनिष्ठ भाग में 70 मिनट के समय की आवश्यकता होती है। समाचार कौशल के परीक्षण हेतु भी इन परीक्षणमालाओं का प्रयोग किया जाता है। इस परीक्षणमाला में शक्ति प्रकार के पद हैं कूडर-रिचर्डसन विधि से इसकी विश्वसनीयता सन्तोषजनक ज्ञात की गयी।

(3) स्टैनफोर्ड उपलब्धि परीक्षण (Stanford Achievement Test)—मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों की श्रृंखला में शायद यह ऐसा परीक्षण है जो अत्यधिक प्राचीन है। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन सन् 1919

Scanned with CamScanner

[illegible] 1980, 1982 एवं 1987 में इसमें संशोधन किये गये। [illegible] ... हेतु [illegible] होता है। इसकी प्राथमिक परीक्षणमाला के [illegible] ... परीक्षण में [illegible] सकते हैं।

(4) मेट्रोपॉलिटन उपलब्धि परीक्षण (Metropolitan Achievement Test)—[illegible] ... सन् 1931 में किया गया। तत्पश्चात् विभिन्न संशोधनों के साथ इसका [illegible] ... सन् 1959 में किया गया। इसमें तीन परीक्षणमालाएँ हैं जिनका प्रयोग विभिन्न [illegible] ... इसके प्राथमिक परीक्षण में शब्द ज्ञान [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible]

(5) आयोवा उपलब्धि परीक्षणमालाएँ (Iowa Achievement Test Batteries)—[illegible] ... आयोवा हाईस्कूल परीक्षा (Iowa High School Examination) [illegible] ... सन् 1921 में हुआ। तत्पश्चात् इसमें अनेक संशोधन [illegible] ... (Iowa Test of Educational Development) [illegible] ... सन् 1957 में किया गया। [illegible] ... [illegible]

(6) कोऑपरेटिव उपलब्धि परीक्षण (Cooperative Achievement Test)—[illegible] सन् 194[illegible] में किया गया। यह तीन श्रेणी 7–9, 7–12, एवं 10–13 तक की कक्षाओं के [illegible] उपलब्धि का मापन करता है।

(7) एस. आर. ए. उपलब्धि श्रृंखला (S. R. A. Achievement Series)—इसकी [illegible] कक्षा 2–4, 4–6 तथा 6–9 श्रेणी [illegible] हेतु सन् 1957 में हुई। यह [illegible] ... गणित तथा [illegible] का मापन करती है।

विशिष्ट उपलब्धि परीक्षण (Specific Achievement Test)

सामान्य उपलब्धि परीक्षण जहाँ व्यक्ति की विभिन्न [illegible] क्षेत्रों में उपलब्धि का मापन [illegible] वहीं विशिष्ट उपलब्धि परीक्षण केवल किसी विशिष्ट क्षेत्र में ही व्यक्ति के ज्ञान का मापन करते हैं। [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible] उपलब्धि परीक्षणमाला की रचना करते हैं।

कुछ प्रमुख विदेशी उपलब्धि परीक्षण
(SOME IMPORTANT FOREIGN TESTS OF ACHIEVEMENT)

क्र.	उपलब्धि परीक्षण	विषय	लेखक	आयु सीमा
1.	Test of Word Reading Efficiency	भाषा	[illegible]	[illegible] वर्ष से [illegible] वर्ष तक
2.	Comprehensive Mathematic Abilities Test	गणित	W. P. Hresko	[illegible] वर्ष से [illegible] वर्ष तक
3.	Diagnostic Achievement Test for Adolescents	अंग्रेजी	P. Newcomer	12 वर्ष से 14 वर्ष तक
4.	Hammill Multiability Achievement Test	भाषा लेखन गणित	D. Hammill	[illegible] वर्ष से [illegible] वर्ष तक
5.	Wide Range Achievement Test	भाषा गणित	G. S. Wilkinson	[illegible] वर्ष से [illegible] वर्ष तक

उपलब्धि परीक्षण की रचना एवं मानकीकरण
(CONSTRUCTION & STANDARDIZATION OF ACHIEVEMENT TESTS)

विद्यालय परिस्थितियों में सुनियोजित पाठ्यक्रम के [illegible] ... अधिगम अनुभवों (Learning experiences) की जाँच करने हेतु उपलब्धि परीक्षण का निर्माण किया जाता है। [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... मानकीकरण होता है।

[illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... [illegible] ... (Teaching learning) के [illegible] ... अनुभवों (Learning experiences) की जाँच हेतु निर्मित एवं मानकीकृत किये जाते हैं। [illegible] ... (Content validity) को [illegible] ... है, वस्तुतः यही उपलब्धि परीक्षण का आधार ही माना जाता है।

उपलब्धि परीक्षण की रचना से पूर्व विशिष्ट विषय-वस्तु के शैक्षिक उद्देश्यों (Educational or instructional objectives) को जान लिया जाता है, तत्पश्चात् शैक्षिक संस्थानों में सुनियोजित पद्धति से,

Scanned with CamScanner

उनको अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से पाठ्यक्रमों का विश्लेषण एवं अध्ययन किया जाता है, तदन्तर उन्हें अधिगम अनुभवों की शिक्षा छात्रों को विद्यालय परिस्थितियों में दी जाती है एवम् उनके द्वारा अर्जित अधिगम अनुभवों की जाँच के लिए निबन्धात्मक (Essay type), लघु उत्तरय प्रश्न (Short answer type), वस्तुनिष्ठ पदों (Objective item) का निर्माण किया जाता है। उपलब्धि परीक्षण के निर्माण में इन समस्त पहलुओं को ध्यान में रखा जाता है, अपितु वे सभी आपस में घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित एवं एक-दूसरे पर आधारित रहते हैं। विषय-वस्तु वैधता (Content validity) इस कसौटी पर आँकी जाती है कि किसी विशिष्ट विषय-वस्तु के शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में अध्यापकों को किस सीमा तक सफलता मिलती है। इस प्रकार उपलब्धि परीक्षण छात्रों द्वारा अर्जित एवं अनार्जित अधिगम अनुभवों की सीमा निर्धारित करता है क्योंकि ये शैक्षिक उद्देश्यों पर आधारित होते हैं।

उपलब्धि परीक्षणों के निर्माण में सम्बन्धित विभिन्न आधार-स्तम्भ एवं पारस्परिक तत्वों को प्रस्तुत किया जाता है–

शैक्षिक उद्देश्य →	पाठ्यक्रम एवं	शैक्षिक प्रक्रिया	
(Instructional	अधिगम अनुभव	अध्ययन-अध्यापन	उपलब्धि परीक्षण
objectives)	का निर्माण	(Teaching	(Achievement
	(Curriculum)	experience)	Test)

सोपान (Steps)

उपलब्धि परीक्षण के निर्माण में **वी. पी. शर्मा** (1978) ने निम्न प्रक्रियात्मक क्रमबद्ध स्तरों (Procedural Serial Levels) को प्रस्तुत किया है।

1. विशिष्ट विषय-वस्तु के अध्ययन हेतु प्रमुख त्वरित शैक्षिक उद्देश्यों (Immediate Instructional Objectives) की पहचान।

2. गौण शैक्षिक उद्देश्यों की पहचान।

3. इन उद्देश्यों को महत्ता एवं प्रमुखता की दृष्टि से क्रमबद्ध करने की प्रक्रिया।

4. क्रमबद्ध किये गये (Assigning the ranks) एवं चुने गये प्रमुख त्वरित शैक्षिक उद्देश्यों को व्यावहारिक अर्जन (Behavioural outcomes) में **ब्लूम** (1962) के निर्देशानुसार परिभाषित करना।

5. इन वांछित व्यावहारिक शैक्षिक उपलब्धियों को जिनके अध्ययन-अध्यापन एवं परीक्षण हेतु शैक्षिक प्रक्रिया अपनाई जाती है, उन्हें ब्लूम के वर्गीकरण के आधारों पर ज्ञान (Knowledge), कौशल (Skill), अनुप्रयोग (Application), विश्लेषण (Analysis), संश्लेषण (Synthesis) एवं मूल्यांकन (Evaluation) शीर्षकों के अन्तर्गत वर्गीकृत करना।

6. तदन्तर पाठ्यक्रम (Curriculum), पाठ्य-पुस्तकों (Text-books), विषय-वस्तु (Content) एवं अन्य उपलब्ध अधिगम अनुभवों का विश्लेषण करना जिनका अनुप्रयोग एवं सदुपयोग पद निर्माण हेतु किया जाता है। वस्तुत: पद निर्माण की दक्षता, विषय-वस्तु एवं उपलब्ध अधिगम अनुभवों की सूक्ष्मता विश्लेषण पर ही निर्भर करती है। विशिष्ट विषय-वस्तुओं से सम्बन्धित सम्भावित त्रुटियों का विश्लेषण एवं पहचान अच्छे पद भ्रामक (Item distractor) प्रमाणित होते हैं।

7. वांछित अधिगम अनुभवों (Expected learning experiences) एवं व्यावहारिक उपलब्धियों (Behavioural outcomes) को ध्यान में रखते हुए कुछ सम्भावित अधिगम अनुभवों की पहचान करना जो पद निर्माण की गहराई, सूक्ष्मता एवं व्यापकता को निर्दिष्ट दिशा एवं दृष्टि प्रदान करता है।

8. इसी प्रकार कुछ सम्भावित अध्यापन विधियाँ (Possible teaching method) अध्ययन सामग्री एवं अन्य सहायक पद्धति एवं प्रक्रिया को समझकर अध्ययन, अध्यापन एवं परीक्षण को गति एवं गहराई प्रदान कर पद चयन में महत्वपूर्ण योग प्रदान करना।

9. वांछित अधिगम उपलब्धि (Desired learning outcomes) के प्रभावी मूल्यांकन हेतु उपयुक्त मूल्यांकन पद्धति की पहचान करना।

10. परीक्षण पद्धतियों का चयन करना यथा निबन्धात्मक, लघु पदीय या वस्तुनिष्ट पदों का निर्माण, विश्लेषण एवं चयन कर पदों को अन्तिम रूप से निर्मित करना।

11. उपलब्धि परीक्षण की वैधता एवं विश्वसनीयता की विभिन्न विधियों से जाँच करना।

12. अर्जित एवं अनार्जित विषय-वस्तु की परख कर अनार्जित विषय-वस्तु के अर्जन हेतु विभिन्न पाठ्यक्रम, अधिगम अनुभव की पहचान, नैदानिक उपलब्धि परीक्षण के निर्माण की आवश्यकता एवं उपचारात्मक शिक्षण पद्धतियों की पहचान एवं अनुक्रिया।

13. अन्तत: नैदानिक उपलब्धि परीक्षण के निर्माण की आवश्यकता एवं मानकीकरण द्वारा अनार्जित विषय-वस्तु को अर्जित करने की सीमा।

इस प्रकार अध्ययन-अध्यापन परीक्षण किसी भी शैक्षिक प्रक्रिया की अभिन्न एवं सतत् पारस्परिक सम्बन्धित प्रक्रियायें हैं जिनमें उपलब्धि परीक्षण के पूरक के रूप में नैदानिक उपलब्धि परीक्षण शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति एवं अधिकाधिक उपलब्धि, सफलता एवं पूर्णात्मक शैक्षिक प्राप्ति में अनुपयुक्त होता है।

उपलब्धि परीक्षण के निर्माण में निर्णायक तत्वों का पारस्परिक परिमाणात्मक सामंजस्य रखा जाता है जो विषय-वस्तु की वैधता को प्रभावित करता है। इस विभिन्न निर्णायक तत्वों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध एवं विश्लेषण से वस्तुनिष्ठता बढ़ती है तथा विषय-वस्तु वैधता प्रमाणित होती है। यही कारण है कि उपलब्धि परीक्षण निर्माण करने से पूर्व प्रभावित शैक्षिक परीक्षण योजना की आवश्यकता होती है जो विशिष्ट विषय-वस्तु से सम्बन्धित प्रमुख त्वरित शिक्षा के उद्देश्य, ब्लूम (Bloom) द्वारा प्रतिपादित व्यावहारिक उपलब्धियों के रूप में उनको परिभाषित करना, विषय-वस्तुओं का विश्लेषण एवं वर्गीकरण तथा इन तीनों के पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर उपयुक्त मूल्यांकन विधियों का चयन एवं उन्हें भी उनकी महत्तानुसार उचित महत्व प्रदान करना।

भोपाल की **वन्दना भार्गव** (1986) ने कक्षा दसवीं क लिए 'उद्देश्य आधारित' सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण (OBTSS) की रचना मध्य प्रदेश उच्चतर माध्यमिक बोर्ड द्वारा स्वीकृत पाठ्यक्रम के अनुसार की। सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र एवं अर्थशास्त्र विषयों को सम्मिलित किया गया। यहाँ विषय-वस्तु का विश्लेषण विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम को रखकर किया गया।

सामाजिक अध्ययन परीक्षण के उद्देश्य (Objectives)

1. सामाजिक विज्ञान के पदों, संप्रत्ययों, सिद्धान्तों, सम्बन्धों, संकेतों एवं प्रक्रियाओं का ज्ञान (Knowledge)।

2. सामाजिक अध्ययन के पदों, तथ्यों, संप्रत्ययों, परिभाषाओं एवं प्रक्रियाओं की समझ (Understanding), तथा

3. अपरिचित अवसरों एवं परिस्थितियों में सामाजिक अध्ययनों की समझ एवं ज्ञान का अनुप्रयोग (Applications)।

Scanned with CamScanner

पद रचना (Item Construction)

ब्लूम द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण करने के पश्चात् विषय-वस्तु का सूक्ष्मता के साथ विश्लेषण किया गया तथा उचित एवं उपयुक्त विषय-वस्तुओं का सामाजिक अध्ययन के विभिन्न घटकों—इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र तथा अर्थशास्त्र से चयन कर उन्हें पदों के रूप में इस उपलब्धि परीक्षण में सम्मिलित किया गया। यहाँ पदों के चयन में चारों विषयों में से विषय-वस्तु को लिया गया। इस सम्बन्ध में अनुभवी अध्यापकों की राय को भी उचित स्थान दिया गया। इसके बाद उपलब्धि परीक्षण के लिए पदों का चयन करके एक ब्लू प्रिन्ट (Blue Print) तैयार किया गया जिसमें ब्लूम द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों, विषय-वस्तु विश्लेषण एवं मूल्यांकन हेतु पदों के प्रकार एवं संख्या को निर्धारित की सापेक्षिक महत्ता एवं पारस्परिक सम्बन्धों को सुयोजित किया गया। 58 वस्तुनिष्ठ पदों (Objective items) को उनकी विशिष्ट महत्ता के आधार पर सामाजिक विज्ञान के उपलब्धि परीक्षण हेतु एकत्रित किय गया।

पद-विश्लेषण (Item-analysis)

पदों का एकत्रीकरण करने के बाद पद-विश्लेषण पद के कठिनाई स्तर एवं विभेद शक्ति के आधा पर किया गया तथा आवश्यकतानुसार पदों का चयन किया गया। पद-विश्लेषण की इस प्रक्रिया में पूर्व निर्मित 75 पदों में से 17 को पदीय-अवैधता (Item Invalidity) के आधार पर निकाल दिया गया। इस प्रकार वास्तविक पद-विश्लेषण (Actual item analysis) हेतु 58 पद स्वीकृत किये गये जिन्हें हल करने के लिए 90 मिनट का समय निर्धारित किया गया। इन 58 पदों को तदन्तर पद-विश्लेषण हेतु 100 छात्रों को हल करने के लिए दिया गया तथा उनसे प्राप्त प्राप्तांकों को क्रमबद्ध करके ऊपर से 27% तथा नीचे से 27% वाले छात्रों के प्राप्तांकों का पद-विश्लेषण हेतु तुलनात्मक अध्ययन किया गया। इस उपलब्धि परीक्षण में, पदीय कठिनाई (Item difficulty) की दृष्टि से वे पद चुने गये जिनका कठिनाई स्तर 40% से कम हो तथा जिन पदों की विभेदक शक्ति (Discrimination power) 30 से कम न हो। पदीय विश्लेषण की इन दोनों विशिष्टताओं के आधार पर 45 पदों को इसके अन्तिम रूप (Final form) के लिए चुन लिया गया तथा उन्हें कठिनता के स्तर के अनुसार उप परीक्षणों में क्रमबद्ध कर लिया गया। इस प्रकार 'सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण' के पद कठिनाई स्तर के आधार पर अवरोही क्रम (Descending order) में रखे गये। अन्तिम रूप में चुने गये 45 पदों का कठिनता स्तर (Item difficulty) तथा विभेद शक्ति (Discrimination power) अग्र तालिका में ज्ञात की गई।

तालिका

पद संख्या	ठिनता स्तर (I.D.)	विभेद शक्ति (D.P.)
1	48	.44
2	52	.48
3	52	.56
4	52	.42
5	46	.58
6	92	.12
7	76	.42
8	60	.58
*9	4	.24
10	40	.52
11	40	.52
12	60	.53

13	76	.58
14	16	.30
15	42	.46
*16	8	.14
17	60	.48
*18	12	.26
19	56	.52
*20	8	.30
21	42	.46
22	8	.30
*23	8	.47
24	46	.49
*25	12	.28
26	60	.51
27	46	.48
28	56	.46
*29	88	.18
30	46	.56
31	76	.48
*32	16	.26
33	46	.52
34	68	.44
35	68	.42
36	88	.31
37	76	.43
38	56	.51
39	96	.30
40	40	.52
41	52	.54
*42	16	.14
*43	88	.12
44	60	.45
45	42	.44
46	46	.46
47	40	.48
48	56	.52
49	40	.51
50	40	.44
51	40	.48
52	40	.49
53	40	.52
54	40	.54
55	52	.52
56	16	.12
57	16	.16
**58	60	.54*

** Item retained whose discrimination value is more than 30 & item difficulty is more than 40%.

* Items are rejected.

Scanned with CamScanner

वैधता (Validity)

इस परीक्षण की विषय-वस्तु वैधता (Content Validity) ज्ञात की गई। इसके अतिरिक्त इसकी विद्यालय प्राप्तांकों से कसौटी वैधता (Criterion validity) .54 प्राप्त हुई।

विश्वसनीयता (Reliability)

इस परीक्षण की अर्द्ध विच्छेद विधि से विश्वसनीयता rtt = .61 ज्ञात की गई जो उसकी आन्तरिक संगति एवं उपादेयता को इंगित करती है।

मानक (Norms)

इस परीक्षण के कोई भी मानक नहीं निर्धारित हैं किन्तु वे आसानी से विभिन्न रूपों में निर्धारित किये जा सकते हैं।

सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण

(अन्तिम रूप)

वन्दना भार्गव

निर्देश (Instructions)

1. इस परीक्षण के चारों भागों में कुछ-कुछ प्रश्न दिये हैं प्रत्येक में से 2-2 के उदाहरण यहाँ दिये गये हैं।

2. प्रत्येक प्रश्न के उत्तर चार सम्भावित विकल्पों (Alternatives) में से किसी एक के ऊपर सही (√) का चिन्ह लगा कर देना है।

3. यद्यपि समय की कोई सीमा निर्धारित नहीं है फिर भी 60 मिनट में इस परीक्षण को हल कर लेना चाहिये।

4. प्रश्नों का उत्तर सोच समझ कर दीजियेगा, अनुमान मत लगाइयेगा, तथा कोई प्रश्न छोड़ना नहीं है।

यहाँ इस परीक्षण के प्रत्येक भाग से 2-2 प्रश्न उदाहरण के रूप में दिये जा रहे हैं।

भाग 1–नागरिक शास्त्र

1. मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यह कथन किसका है ?
   (अ) हिटलर ☐
   (ब) इन्दिरा गाँधी ☐
   (स) अरस्तु ☐
   (द) कौटिल्य। ☐
2. राज्य का सर्वोच्च संवैधानिक प्रमुख कौन है–
   (अ) मुख्यमन्त्री ☐
   (ब) मुख्य सचिव ☐
   (स) विधान सभा का अध्यक्ष ☐
   (द) राज्यपाल ☐

भाग 2–भूगोल

1. लोहा एवं इस्पात का भारत में सबसे बड़ा केन्द्र है–
   (अ) भिलाई ☐
   (ब) मुम्बई ☐
   (स) जमशेदपुर ☐
   (द) देवास। ☐

2. दैनिक तापमान का अन्तर मापने के लिये किसका उपयोग करेंगे ?
   (अ) साधारण तापमापी ☐
   (ब) साधारण दाबमापी ☐
   (स) बैरोमीटर ☐
   (द) उच्चतम न्यूनतम तापमापी। ☐

भाग 3–इतिहास

1. तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूँगा–यह कथन किसका था ?
   (अ) महात्मा गाँधी ☐
   (ब) जवाहर लाल नेहरू ☐
   (स) वल्लभ भाई पटेल ☐
   (द) सुभाष चन्द्र बोस। ☐
2. जलियाँवाला हत्याकाण्ड की घटना हुई–
   (अ) लखनऊ ☐
   (ब) नई दिल्ली ☐
   (स) अमृतसर ☐
   (द) चण्डीगढ़। ☐

भाग 4–अर्थशास्त्र

1. उद्योग के जोखिम कौन सहन करता है–
   (अ) श्रमिक ☐
   (ब) पूँजीपति ☐
   (स) मजदूर नेता ☐
   (द) भूमिपति। ☐
2. नियोजन का मुख्य उद्देश्य है–
   (अ) आर्थिक सुरक्षा ☐
   (ब) अधिक कुशलता ☐
   (स) अधिक प्रयास ☐
   (द) अधिक समानता। ☐

इस प्रकार इस परीक्षण के भाग 1, 2, 3, 4 में क्रमशः 13, 10, 10 एवं 12 कुल 45 प्रश्न हैं।

सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण की भाँति किसी भी स्तर पर किसी भी विषय से सम्बन्धित उपलब्धि उद्देश्य आधारित उपलब्धि परीक्षण की रचना इस प्रकार से की जा सकती है जो कि ब्लूम द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों का मापन करते हैं।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. उपलब्धि परीक्षणों का आधुनिक युग में क्या भूमिका है? स्पष्ट कीजिए।
2. मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. स्टैनफोर्ड उपलब्धि परीक्षण पर प्रकाश डालिए।
2. विशिष्ट उपलब्धि परीक्षणों से क्या आशय है?

☐☐

Scanned with CamScanner

4. निर्धारण मापनी

(Rating Scale)

सभी मनोवैज्ञानिक-मापन की विधियों में 'निर्धारण मापनी' (Rating Scale) सबसे अधिक प्रचलित है। इसका प्रयोग उद्योग, व्यापार, अनुसन्धान आदि के क्षेत्रों में सफलतापूर्वक किया जा रहा है। इसके प्रारम्भ का श्रेय मनोभौतिकी के क्षेत्र में फेक्नर (Fechner) को जाता है लेकिन, सर्वप्रथम निर्धारण मापनी 1883 में गाल्टन (Galton) ने प्रकाशित की जो 'बिम्ब सृष्टि' (Emagery) से सम्बन्धित थी। इसके बाद 1906-1907 में पियर्सन (Pearson) ने बुद्धि मापन के लिए एक निर्धारण मापनी का निर्माण किया जिसमें सात श्रेणियाँ थीं। इस प्रविधि में किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का मापन किसी ऐसे व्यक्ति के विचारों के आधार पर किया जाता है, जो पहले व्यक्ति को भली-भाँति जानता हो। इनमें से Testimonials, Character Certificates, Confidential Repo1 ts आदि प्रमुख हैं। लेकिन, निर्धारण मापनी की विश्वसनीयता एवं वैधता निम्न स्तर की होने के कारण इसे अनुसन्धान कार्य में बहुत कम प्रयोग में लाया जाता है। वान डेलेन के अनुसार "निर्धारण मापनी किसी चर की मात्रा, तीव्रता व बारम्बारता को निर्धारित करती है।" (A rating scale ascertains the degree, intensity or frequency of a variable) स्थ स्ट्रैंग के अनुसार – "निर्देशित निरीक्षण ही निर्धारण है।"

निर्धारण मापनी एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि किसी व्यक्ति ने कुछ विशिष्ट गुणों (Specific Traits) के सन्दर्भ में अपने सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों के ऊपर क्या छाप छोड़ी है। निर्धारक (Rater) के रूप में निम्न में से किसी भी व्यक्ति का चयन किया जा सकता

Scanned with CamScanner

है, जैसे - अध्यापक, अभिभावक, मित्र, पड़ौसी, परामर्शदाता, भाई-बहन (Siblings) एवं एम्पलोयर (Employer) आदि। निर्धारण मापनी में कुछ गुणों की एक सूची दी होती है, जिनमें प्रत्येक के सामने कुछ विशेषण अथवा अंक लिखे होते हैं। निर्धारक को अपने अनुभव एवं ज्ञान के आधार पर सम्बन्धित व्यक्ति के विषय में किसी एक पर निशान लगाना होता है। इस विधि का प्रयोग उपलब्धि परीक्षण (Achievement Test) में अधिकता से किया जाता है। यह एक आत्मनिष्ठ विधि है। आजकल औद्योगिक प्रतिष्ठानों में कर्मचारियों के वेतन बढ़ाने अथवा पदोन्नति करने में इस विधि का सहारा लिया जाता है। व्यक्ति की प्रतिक्रियाओं एवं उत्तेजनाओं के मूल्यांकन में भी इसका प्रयोग किया जाता है।

गुड तथा स्केट के अनुसार – "यह उपकरण मूल्यांकन की जाने वाली वस्तु के विभिन्न अंगों की ओर ध्यान आकर्षित करती है, किन्तु, उसमें उतने प्रश्न अथवा खण्ड नहीं होते, जितने चेक लिस्ट अथवा स्कोर कार्ड में होते है।"

(The rating scale typically directs attention to different parts or aspects of the thing to be evaluated, but, does not have as many items or categories as the check list or score card.)

निर्धारण मापनी के प्रकार (Type Of Rating Scale) :

मुख्य रूप से निर्धारण मापनी निम्न चार प्रकार की होती है –

1. संख्यात्मक मापदण्ड (Numerical Scales)
2. रेखांकित मापदण्ड (Graphic Scales)
3. संचयी अंक मापदण्ड (Cumulative Points Scales)
4. मानक मापदण्ड (Standard Scales)

1. संख्यात्मक मापदण्ड (Numerical Scales) : इस प्रकार की मापनियों में निर्धारक कुछ सीमित संख्या में वर्गों का चयन करता है तथा उन्हें उनके मापनी मूल्य के अनुसार क्रमबद्ध कर लेता है। अर्थात्, इस विधि में अंकों को निश्चित उद्दीपकों के साथ सम्बन्धित कर देते है और व्यक्ति को अपने गुणों के अनुसार अंक मिल जाते है। इन अंकों को सुविधा की दृष्टि से 3, 5, 7 या ग्यारह के पैमाने पर रख दिया जाता है। इस प्रकार की मापनी का प्रयोग केवल तभी किया जाता है, जबकि मापित विशेषता (Measured Trait) मध्यस्थ बिन्दु के एक ओर बढ़ती तथा दूसरी ओर घटती है। इन मापनियों में केन्द्र में मध्यस्थ बिन्दु होता है जिसके दोनों ओर समान अन्तराल (Equal interval) पर अन्य वर्ग स्थित होते है। लेविन ने बालकों के खेल की सर्जनात्मकता (Creativity) पर कुण्ठा के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए सात बिन्दु मापनी का प्रयोग किया। उदाहरणार्थ, यदि हम नारी सौन्दर्य के आधार पर संख्यात्मक मापदण्ड तैयार करना चाहें तो मापदण्ड का रूप निम्न हो सकता है :

7. सर्वाधिक सुन्दर (Most beautiful)
6. अत्यन्त सुन्दर (Very beautiful)
5. सुन्दर (Beautiful)
4. सामान्य (Average)
3. कुरूप (Ugly)
2. अत्यन्त कुरूप (Very ugly)

Scanned with CamScanner

1. सर्वाधिक कुरूप (Ugliest possible)

उपयोग (Merits) :

1. इस प्रकार की मापनियों का निर्माण एवं प्रयोग दोनों सरल हैं।
2. यदि निर्धारक अपने अंकों को गम्भीरता से लेता है तो निर्धारण स्वयं में उच्च कोटि के मापन का प्रतिनिधित्व बन जाता है।

परिसीमाएँ (Limitations) :

1. इन मापनियों में पक्षपात की अधिक सम्भावनाएँ रहती हैं।
2. अनेक व्यक्तियों द्वारा किये गये निर्णय एक समान नहीं होते। कभी-कभी एक व्यक्ति द्वारा निर्णय यदि 'सुन्दरतम' है तो वही वस्तु दूसरे निर्णायक के लिए केवल सामान्य हो सकती है।

संरचना सम्बन्धी सुझाव (Suggestions for construction) :

1. ऋणात्मक अंकों (Negative Marking) का प्रयोग न किया जाय, क्योंकि यह सातत्य (Continuity) के सिद्धान्त पर आधारित होती है।
2. इस प्रकार की मापनियों के दोनों अन्तिम छोर (Extreme ends) व्यर्थ प्रतीत होते हैं क्योंकि, कोई भी निर्धारक इन छोरों का प्रयोग अपने निर्धारण में नहीं करता। ये मात्र पूर्ण मापनी के बन्धन (anchors) मात्र हैं।
3. निर्धारक को जहाँ तक हो सके पक्षपात की सम्भावनाओं को कम करना चाहिये।

2. रेखांकित मापदण्ड (Graphic Scales) : यह मापदण्ड अत्यन्त लोकप्रिय है और व्यापक रूप में प्रयुक्त होता है। इसमें एक रेखा बनी होती है जिसे कई भागों में विभक्त कर दिया जाता है। प्रत्येक भाग के नीचे कुछ विशेषण लिखे होते हैं तथा निर्धारक को इनमें से किसी एक पर निशान लगाना होता है। इस मापदण्ड का सर्वप्रथम प्रयोग बॉयस (Boyce) ने किया।

उदाहरण 1 : सामाजिक वार्त्ता में आप कैसे रहते हैं ?

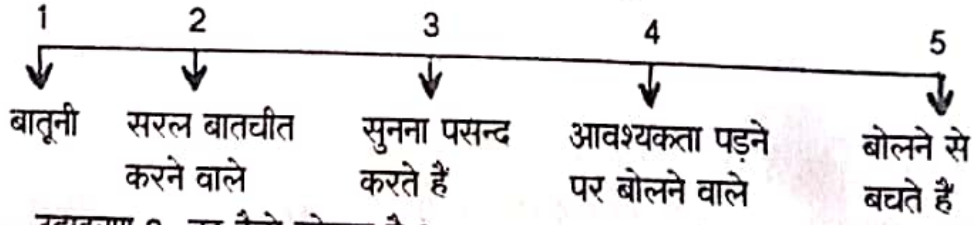

उदाहरण 2. वह कैसे सोचता है ?

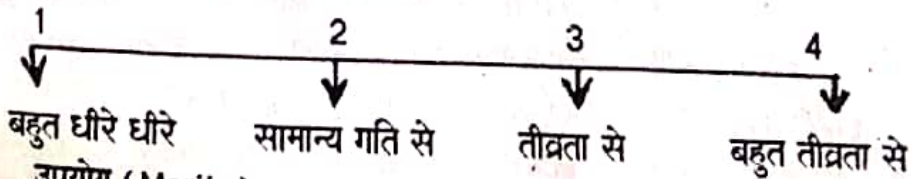

उपयोग (Merits) :

1. इनकी संरचना एवं प्रशासन दोनों ही अत्यन्त सरल हैं।
2. इनको शीघ्रता से भरा जा सकता है।
3. इसमें निर्णायक को अत्यन्त सूक्ष्म विभेद करने का अवसर मिलता है।
4. तुलनात्मक निर्णय देने की सुविधा रहती है।
5. फलांकन विधि को जब चाहे परिवर्तित किया जा सकता है।

परिसीमाएं (Limitations) :

Scanned with CamScanner

1. यद्यपि, इस मापनी में फलांकन विधि में परिवर्तन की सम्भावना रहती है, फिर भी, फलांकों की गणना कठिन होती है, साथ ही, काफी परिश्रम भी करना पड़ता है।
2. इस मापनी में यह निर्णय करना सरल कार्य नहीं है कि व्यक्ति में गुण है या नहीं अथवा वह किस संकेत के अनुरूप है।

संरचना सम्बन्धी सुझाव (Suggestions) :

1. रेखा पर्याप्त लम्बी होनी चाहिए (लगभग 5 इंच)।
2. रेखा टुकड़ों में कटी हुई नहीं होनी चाहिए।
3. अच्छे विशेषण रेखा के पहले छोर पर तथा बुरे या प्रतिकूल विशेषण अन्तिम छोर (Last end) पर रखे जाने चाहियें।
4. तीन या पाँच विशेषणों का प्रयोग करना चाहिये। जिनमें से कुछ उच्च, मध्यम एवं निम्न श्रेणी के हों।
5. यह आवश्यक नहीं है कि संकेतों के मध्य दूरी समान रखी जाय।
6. प्रत्येक विशेषता (Trait) के लिए अलग-अलग भाग में संकेत लिखने चाहियें। एक विशेषता का दूसरी विशेषता पर अतिच्छादन (Over-lapping) नहीं होना चाहिये।
7. अति कथनों का प्रयोग नहीं करना चाहिये, जैसे – "मैं अपने व्यवसाय से पूर्णरूपेण सन्तुष्ट हूँ।"

3. संचयी अंक मापदण्ड (Cumulative Points Scale) : इस मापनी में व्यक्ति का मूल्यांकन अनेक विशेषताओं पर अंक प्रदान करके किया जाता है। अंको के कुल योग या संचय के आधार पर व्यक्ति के बारे में धारणा निश्चित की जाती है। एक प्रकार से ये मापदण्ड मनोवैज्ञानिक परीक्षण की ही भाँति हैं, अन्तर केवल यह है कि इनमें अंक किसी वस्तुनिष्ठ कसौटी के आधार पर न दिये जाकर केवल निर्णय के आधार पर दिए जाते हैं। इस प्रकार की मापनियों का प्रयोग कार्य पर लगे हुए व्यक्तियों के कार्य का मूल्यांकन करने के लिए किया जाता है। चेक लिस्ट (Check-list) तथा अनुमान विधि (Guess Who Technique) इसी के अन्तर्गत आती हैं।

(a) चेक लिस्ट विधि (Check-list Method) : हार्टशोर्न तथा मे, ने इस विधि का प्रयोग बच्चों के चरित्र सम्बन्धी अनेक विशेषताओं, जैसे - सहयोगी, दयालु, निर्दयी, लालची, अहसानमन्द आदि का मूल्यांकन करने हेतु किया था। निर्णायक यह जाँच करता है कि उपरोक्त विशेषताओं में से कौन-कौन सी विशेषताएँ बालक के व्यवहार में परिलक्षित हो रही हैं। इसके बाद अंकों के कुल संचय (Total Score) के आधार पर बालक के गुणों के बारे में निर्णय लिया जाता है। प्रत्येक अनुकूल लक्षण के लिए +1 तथा प्रतिकूल लक्षण के लिये -1 अंक दिया जाता है।

उदाहरण :

सहयोगी	दयालु	अहसानमन्द
उत्साह से	सर्वोत्तम	अधिक
इच्छा से	उत्तम	सामान्य से अधिक
तटस्थता से	स्वीकार्य	सामान्य
जलन से	खराब	सामान्य से कम
मजबूरी में	अतिखराब	कम

Scanned with CamScanner

हार्टशोर्न तथा मे, के अनुसार अध्यापक द्वारा विद्यार्थी के मूल्यांकन में इस विधि की विश्वसनीयता गुणांक .6 से अधिक पाया गया।

(b) अनुमान विधि (Guess-Who Technique) : इस विधि में विद्यार्थियों से अपने सहपाठियों का नामकरण करने को कहा जाता है जिनका कुछ शब्द चित्रों से वर्णन किया गया होता है। इस विधि का प्रयोग हार्टशोर्न तथा मे, ने किया। प्रत्येक शब्द चित्र एक संक्षिप्त विवरण होता है। इसमें कुछ निर्देश दिये जाते हैं, जैसे — "यहाँ कुछ ऐसे छात्रों के शब्द चित्र दिये गये हैं, जिन्हें आप जानते हैं। प्रत्येक कथन को ध्यानपूर्वक पढ़कर आपको यह निश्चय करना है कि यह किस सहपाठी से सम्बन्धित है।" प्रत्येक कथन या तो अनुकूल होता है या प्रतिकूल।

कुछ शब्द चित्रों के उदाहरण निम्न हैं —

(a) "यहाँ एक ऐसा बालक है जो दूसरों को खुश रखने के लिए कुछ न कुछ किया करता है।" ....

(b) "यहाँ एक ऐसा बालक है जो बिना अपने स्थान से हिले-डुले चुपचाप कार्य करता है।" ....

प्रत्येक शब्द चित्र के आगे इतना स्थान छोड़ दिया जाता है ताकि वह वर्णन जिन सहपाठियों के लिए लागू होता हो, उनके नाम लिखे जा सकें: स्पष्ट है, कि एक प्रिय छात्र का नाम वांछनीय विशेषताओं के साथ लिया जायेगा, जबकि, अप्रिय छात्र का नाम अवांछनीय विशेषताओं के साथ। इस विधि में मात्र कुछ ही कथनों के आधार पर निर्णय नहीं करना चाहिए, बल्कि, सभी कथनों के आधार पर। समूह विशेष में छात्र विशेष की क्या स्थिति (Position) है अथवा कितनी प्रसिद्धि है इसका ज्ञान इस विधि से भली-भाँति हो सकता है। इस प्रकार के मापकों में "ओहियो मान्यता मापदण्ड" (Ohio Recognition Scale) एक प्रसिद्ध मापक है।

उपयोग (Merits) :

1. यह विधि नयी है और धीरे-धीरे लोकप्रिय होती जा रही है।
2. इसकी संरचना एवं प्रशासन अत्यन्त सरल है।
3. इस मापनी के प्रयोग के लिए निर्धारक को किसी विशेष प्रकार के प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं पड़ती।
4. इनका फलांकन भी बहुत सरल होता है, विशेषकर जहाँ पदों को +1 या 0 अंक देना हो।
5. इसका प्रयोग जटिल परिस्थितियों में किया जा सकता है।
6. इनके द्वारा व्यक्तित्व की एक अकेली विशेषता का मूल्यांकन किया जा सकता है।

परिसीमाएं (Limitations) :

1. प्रत्येक पद की केवल दो सम्भावित प्रतिक्रियाएं होने से फलांकन प्रक्रिया अधिक वैज्ञानिक नहीं बन पाती।
2. चैक लिस्ट विधि में निर्धारक से केवल उन्हीं पदों या कथनों की जाँच करने को कहा जाता है जो उस पर लागू होती हों। फलतः उसके मूल्यांकन में अनावश्यक झुकाव या पक्षपात आ जाता है।

संरचना सम्बन्धी सुझाव (Suggestions) :

1. चैक लिस्ट विधि में प्रत्येक पद की दो सम्भावित प्रतिक्रियाओं के स्थान पर कम से कम तीन प्रतिक्रियाओं का प्रयोग किया जाय।

Scanned with CamScanner

2. निर्धारक को केवल पदों को चैक करने के लिए कहने से इसमें पक्षपात की सम्भावना आ जाती है। अतः उत्तम है कि निर्धारक को प्रत्येक पद का उत्तर देने को कहा जाय।
3. फलांकन सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिये तथा व्यक्तित्व की उन्हीं विशेषताओं का मूल्यांकन किया जाय जिनमें पक्षपात की सम्भावना कम हो।

4. मानक मापदण्ड (Standard Scales) : इस प्रकार की मापनी में निर्धारक को कुछ मानक संघ (Set of Standards) दिये रहते है, जैसे - हस्तलेख, मनुष्य-मनुष्य में साम्य आदि। निर्धारक निर्णय के योग्य सामग्री की तुलना इन मानकों से करता है। आयर्स (Ayres), थार्नडाइक आदि ने इस दिशा में बहुत कार्य किया है। व्यक्ति से व्यक्ति मिलान (Man-to-Man Scale) मापनी का विकास फौजी लोगों के लिए किया गया था। इसको तैयार करने के लिए पाँच विशेषताओं का चयन कर लिया जाता है, जैसे - शारीरिक गुण, बुद्धि, नेतृत्व, व्यक्तिगत गुण एवं सेना में उसका सामान्य महत्व आदि। फिर, प्रत्येक गुण-विशेष के लिए एक अफसर को पाँच व्यक्ति छांटने होते हैं, यथा - वह जिसमें अधिकतम मात्रा में यह गुण विशेष हो, वह जिसमें निम्नतर मात्रा में हो, वह जो मध्य में हो, वह जिसमें सामान्य से कुछ अधिक और एक वह जिसमें सामान्य से कम गुण हो। इन व्यक्तियों से तुलना करके अन्य व्यक्तियों के बारे में निर्णय लिया जा सकता है। इस विधि के अन्तर्गत अनेक व्यक्तियों को उनके किसी एक गुण के अनुसार क्रमित किया जाता है। लेकिन, यहाँ निर्धारकों के लिए यह आवश्यक है कि वे उन व्यक्तियों से, जिन्हें वे किसी विशेषता के आधार पर क्रमित करना चाहते हैं, पूर्ण परिचित हों।

उदाहरण :

1. चौधरी	हिम्मत की दृष्टि से बटालियन में सर्वश्रेष्ठ।
2. अरोड़ा	हिम्मत की दृष्टि से बटालियन में श्रेष्ठ।
3. देशपाण्डे	हिम्मत की दृष्टि से बटालियन में सामान्य।
4. चटर्जी	हिम्मत की दृष्टि से बटालियन में कायर।
5. दाताराम	हिम्मत की दृष्टि में बटालियन में अत्यन्त कायर।

उपयोग (Merits) :

1. इसमें निर्धारण अंकों के स्थान पर व्यक्ति के गुणों के आधार पर किया जाता है।
2. इसमें तुलना करने के लिए एक स्थायी कसौटी उपलब्ध होती है।
3. स्थायी कसौटी मिलने से निर्धारक को अपने मानक नित्यप्रति बदलने नहीं पड़ते।

परिसीमाएं (Limitations) :

1. मौलिक रूप में इस मापनी को तैयार करना कठिन कार्य है।
2. व्यवहार में दो निर्धारकों के मत में शायद ही कभी समानता बन पाती हो।
3. मापनी में एक व्यक्ति और किसी दूसरे व्यक्ति में दूरी प्रायः समान नहीं होती है।
4. किसी व्यक्ति के बारे में निर्णय करते समय अध्यागणन (over-estimation) तथा अवागणन (Under-estimation) सम्भव है।
5. मापनी का सैन्य प्रारूप नागरिक जीवन तथा औद्योगिक संस्थानों में व्यवहार योग्य नहीं है।

कुछ विद्वानों ने उपरोक्त चार मापनियों के अतिरिक्त एक अन्य मापनी का भी उल्लेख किया है जिसे बलात् विकल्प मापनी (Forced Choice Rating) कहते हैं।

Scanned with CamScanner

बलात् विकल्प मापनी (Forced Choice Rating) : इस विधि का विकास फौजी अफसरों के मूल्यांकन हेतु किया गया। इस विधि में निर्धारक को यह नहीं बताना होता है किसी व्यक्ति में अमुक विशेषता है या नहीं वरन्, उसे विशेषताओं के युग्मों में से यह बताना होता है कि इन दोनों युग्मों में कौन सा सही है। सामान्यतः कथनों के दो जोड़े, जिनमें दो अनुकूल हों और दो प्रतिकूल, एक साथ प्रस्तुत किये जाते हैं। इनमें कभी-कभी एक तटस्थ कथन भी मिला दिया जाता है। उदाहरणार्थ, गम्भीर, उत्साही, लापरवाह, असभ्य। इसमें प्रथम दो लक्षण अनुकूल हैं तथा अन्तिम दो प्रतिकूल। निर्धारक इस पूरे युग्म को एक पद मानकर अपना निर्णय देता है तथा बताता है कि कौन सा लक्षण उस व्यक्ति के लिए सबसे उपयुक्त है और कौन सा सबसे कम। इसके पश्चात् उन फलांकन कुंजी के आधार पर गणना कर ली जाती है।

उपयोग (Merits) :

1. इसमें उदारता की त्रुटि कम होती है क्योंकि, इसमें निर्धारक की अध्यागणन एवं अवागणन करने की सामान्य प्रवृत्ति या पूर्व-प्रभाव त्रुटि (Halo effect) का प्रतिकार हो जाता है।
2. इस मापनी में चैक लिस्ट विधि की अपेक्षा, अधिक सूक्ष्म विभेद का अवसर मिलता है।
3. प्राप्त होने वाले फलांकों का वितरण लिप्टोकर्टिक (Leptokurtic) होता है।

परिसीमाएं (Limitations) :

1. एक सामान्य निर्णायक निश्चित रूप से यह नहीं कह सकता कि पद का कौन सा युग्म व्यक्ति से अधिक सम्बन्धित है।
2. इस विधि का 'बलात् विकल्प मापनी' नामकरण बिल्कुल अनुपयुक्त है क्योंकि, कोई भी निर्धारक यह सुनना नहीं चाहता कि निर्णय देने में वह स्वतन्त्र नहीं है।
3. इस मापनी में युग्मों के छाँटने में अनुमान (Guessing) की भी सम्भावना रहती है।
4. इस प्रकार के मापदण्ड की संरचना अत्यन्त जटिल है और इसमें पर्याप्त प्रशिक्षण एवं समय की आवश्यकता पड़ती है।

निर्धारण मापदण्डों की त्रुटियाँ (Errors of Rating Scales) :

निर्धारण विधि की संरचना एवं इसके प्रयोग में अनेक त्रुटियाँ आती हैं, जो निम्न हैं :

(a) उदारता की त्रुटि (Error of Leniency) : इस त्रुटि को 'उदारता त्रुटि' इसलिए कहा जाता है क्योंकि, निर्धारक उन लोगों का मूल्यांकन उदारतापूर्वक करता है, जिसे वह जानता हो अथवा वे लोग अहं सन्निहित (Ego-involved) रहते हों। यह एक सतत् प्रवृत्ति है। इस प्रकार, कुछ निर्धारक 'उदार' होते हैं और कुछ 'कठोर'। फलतः 'धनात्मक उदारता' (Positive Leniency) तथा ऋणात्मक उदारता (Negative Leniency) जन्म ले लेती है। इस त्रुटि को कम करने के लिए प्रतिकूल लक्षणों की संख्या, अनुकूल लक्षणों की अपेक्षा कम रखी जाय।

(b) केन्द्रीय प्रवृत्ति की त्रुटि (Error of Central Tendency) : इस प्रकार की त्रुटि का कारण यह होता है कि निर्धारक प्रायः अति (extreme) निर्णय देने में संकोच करते हैं। फलतः निर्धारण केन्द्र की ओर खिसक आता है। निर्धारक का ऐसा विचार होता है कि किसी भी व्यक्ति में कोई भी गुण पूर्णतः उपस्थित या अनुपस्थित नहीं होता, जिसके कारण वह अपने निर्णय को मध्य में स्थान दे देता है। यही कारण है कि निर्णय निष्पक्ष नहीं हो पाता। इस त्रुटि को कम करने के लिए अन्तिम छोरों (extreme ends) के कथनों में अधिक अन्तर रखा जाय।

Scanned with CamScanner

(c) विरोधी त्रुटि (Contrast Error) : मरे (Murray) ने एक अन्य प्रकार के पक्षपात की ओर संकेत किया है जिसे विपरीत या विरोधी त्रुटि कहते हैं। इस त्रुटि के अनुसार निर्धारक प्रायः व्यक्तियों को अपनी विशेषताओं के विपरीत आँकता है। उदाहरणार्थ, 'सहयोग' एवं 'स्वच्छता' की विशेषताओं का मूल्यांकन करने वाला निर्धारक यदि दोनों विशेषताओं से पूर्ण है, तो वह दूसरों में 'असहयोग' एवं 'अस्वच्छता' की प्रवृत्ति का अवलोकन करेगा। क्योंकि, मानव स्वभाव है कि जैसे हम स्वयं हैं, वैसा ही दूसरों को देखना चाहते हैं, लेकिन, जब हम उनको अपनी इच्छा के अनुरूप नहीं पाते तो आलोचना करते हैं। अनुशासन सम्बन्धी विशेषताओं के सन्दर्भ में प्रायः ऐसा होता है।

(d) परिवेश त्रुटि (Halo effect) : इस त्रुटि के अनुसार निर्धारक जो धारणा व्यक्ति विशेष के बारे में बना लेता है, उसी के आधार पर उस व्यक्ति का मूल्यांकन करता है। अतः हमारे निर्णय अधिक वैध नहीं रहते। थार्नडाइक ने इसे 'पूर्व प्रभाव त्रुटि' कहा है। यह एक ऐसी त्रुटि है जिसका शिकार प्रायः हर निर्धारक हो जाता है। नैतिक महत्व की विशेषताओं में यह त्रुटि अधिक होती है। इस त्रुटि को अभ्यास द्वारा दूर किया जा सकता है।

रग (Rugg) के अनुसार — "We judge our fellow in terms of a general mental attitude towards them, and there is, dominating this mental attitude toward the personality as a whole, alike mental attitude toward qualities."

(e) तार्किक त्रुटि (Logical Error) : जब निर्धारक दो छात्रों के कार्य में समानता देखता है तो उनका एक सा ही निर्धारण करता है। न्यूकाम्ब (New comb) के अनुसार, निर्धारक के मस्तिष्क में जिन लक्षणों में तार्किक सम्बन्ध होता है, उनका वे एक समान मूल्यांकन करते हैं। इसे तार्किक त्रुटि कहते हैं। यदि वस्तुनिष्ठ रूप से अवलोकन योग्य क्रियाओं के बारे में मूल्यांकन किया जाय, न कि अमूर्त (Abstract) लक्षणों के बारे में, तब इस त्रुटि से बचा जा सकता है।

Scanned with CamScanner

7. संचयी आलेख पत्र

(Cumulative Record Cards)

'संचयी आलेख पत्र' शब्द का प्रयोग 1930 से प्रारम्भ हुआ माना जाता है। इसमें विद्यार्थी से सम्बन्धित विभिन्न जानकारी एक ही पत्र पर संकलित कर ली जाती है, ताकि सम्बन्धित छात्र के बारे में व्यापक सूचना मिल सके। ये आलेख गुप्त रखे जाते हैं तथा समय पड़ने पर इनकी विषय वस्तु छात्र सम्बन्धी समस्याओं के निदान एवं उपचार हेतु प्रयोग की जाती है। इन आलेख पत्रों का विवरण अत्यन्त संक्षिप्त एवं सारगर्भित होता है। सामूहिक आलेख पत्र द्वारा विद्यार्थियों के प्रत्येक अंग के विकास का समय समय पर ज्ञान होता जाता है। इसके आधार पर हम उनकी शिक्षा में भी उपयुक्त परिवर्तन ला सकते हैं। आजकल संचयी आलेख पत्रों का महत्व निरन्तर बढ़ता जा रहा है क्योंकि ये पत्र विद्यार्थियों के शैक्षणिक तथा व्यावसायिक निर्देशन में बहुत ही सहायक सिद्ध हुए हैं। इन पत्रों के माध्यम से हमें विद्यार्थियों के सामान्य व्यवहार, गुण, रुचियों, खेलकूद, क्रीड़ा, वाद-विवाद, कला, नाटक, अभिनय का स्तर तथा उनकी विश्वसनीयता के बारे में स्पष्ट ज्ञान हो जाता है।

अनेक विद्वानों ने संचयी आलेख पत्रों की परिभाषाएं इस प्रकार दी हैं –

1. मुरे थॉमस के अनुसार – "संचयी आलेख पत्र किसी बालक के बारे में एक लम्बी अवधि में एकत्रित सूचना है।" (A cumulative Record Card is a collection of information about a child over a period of time, usually several years.)
2. जेन वार्टस के अनुसार – "परीक्षा, प्रश्नावली, अवलोकन, साक्षात्कार, व्यक्ति इतिहास आदि विभिन्न विधियों के प्रयोग से प्राप्त छात्र से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण सूचनाओं को सारांश रूप में संचयी आलेख पत्र में संग्रहित करना चाहिये।"
3. डब्लू0 सी0 एलिन के अनुसार – "संचयी आलेख पत्र में व्यक्तिगत छात्र के मूल्यांकन (Appraisal) से सम्बन्धित सूचनाओं का आलेख होता है। सामान्यतः ये सूचनाएं एक पत्र पर लिखकर एक स्थान पर ही रखी जाती हैं।"
4. सी0 एम0 फ्लेमिंग के अनुसार – (A Cumulative Record Card is a condensation of a case-study.)

संचयी आलेख पत्र का महत्व (Importance of the Cumulative Record Cards) : संचयी आलेख पत्र छात्र के बारे में लिखित, प्रामाणिक एवं वर्षभर की सम्पूर्ण महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करते हैं। एक प्रकार से ये विद्यार्थी की प्रगति का चित्रांकन हैं। संचयी आलेख पत्र छात्र, अध्यापक या किसी अन्य अधिकारी के लिए समान रूप से उपयोगी हैं। जहाँ एक ओर विद्यार्थी इन आलेख पत्रों के माध्यम से अपनी क्षमताओं एवं न्यूनताओं का आभास पाकर अपने भावी लक्ष्य की

Scanned with CamScanner

योजना बनाता है, वहीं दूसरी ओर अध्यापक छात्र के बारे में सही तथ्यों की जानकारी लेकर उसका निर्देशन और अच्छी प्रकार से कर पाता है। इसी प्रकार किसी औद्योगिक प्रतिष्ठान का आधिष्ठाता भी अपने अधीनस्थ कर्मचारियों की रुचियों, क्षमताओं, कौशलों, आवश्यकताओं, अभिवृत्तियों आदि के आधार पर उनके हितार्थ योजनाएं तैयार कर सकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे वर्तमान एवं भविष्य की रूपरेखा, भूत की सुदृढ़ नींव पर ही टिकी होती है।

शिक्षा का एक मात्र उद्देश्य बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करना है। इसीलिए, बालक के विकास का मापन करने के लिए विभिन्न विषय सम्बन्धी परीक्षाएं ली जाती हैं। लेकिन, ये परीक्षाएं एकांगी होती हैं अर्थात्, ये परीक्षाएं मात्र अर्जित ज्ञान का ही मूल्यांकन करती हैं जबकि, छात्र की मानसिक, सामाजिक एवं सांवेगिक विशेषताओं का मूल्यांकन भी उतना ही आवश्यक है। माध्यमिक शिक्षा आयोग (Secondary Education Commission) ने संचयी आलेख पत्रों को देश के सभी विद्यालयों में अनिवार्य करते हुए सिफारिश की थी कि, "छात्रों के कार्यों का मूल्यांकन बाह्य या आन्तरिक परीक्षाओं द्वारा सम्भव नहीं है। छात्र को भविष्य में नवीन विषय या व्यवसाय का चुनाव करने में सहायता देने के लिए उसके विकास का पूर्ण आलेख रखना चाहिये। विद्यालयों में रखे जाने वाले आलेख पत्रों में छात्र द्वारा किये गये कार्यों का विवरण रखना चाहिये। इन आलेख पत्रों में शिक्षा में की गयी प्रगति के अतिरिक्त व्यक्तित्व के गुण, सामाजिक समायोजन, रुचि एवं अभिवृत्ति तथा अन्य क्रियाओं का उल्लेख होता है। देश के सभी विद्यालयों में संचयी आलेख पत्र रखना अनिवार्य होना चाहिये।" स्पष्ट है, कि संचयी आलेख पत्रों के प्रयोग से हमारी परीक्षा के बहुत से दोष भी दूर हो जाते हैं।

संयुक्त राज्य अमरीका के शिक्षा कार्यालय की 'संकलित आलेखों की पुस्तिका' (Hand book of Cumulative Records) में इन आलेख पत्रों के महत्व को इस प्रकार व्यक्त किया गया है :

निरन्तर विकसित होने वाले पाठ्यक्रम में आलेख महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। छात्रों की आवश्यकताओं, रुचियों और योग्यताओं में जो व्यक्तिगत विभिन्नताएं विद्यालय की क्रियाओं में भाग लेने पर प्रकट होती हैं, उनका आलेख रखना चाहिये। छात्रों के स्वयं के विकास के विभिन्न स्तरों पर आवश्यक निर्देशन की मात्रा का संकेत इन विभिन्नताओं द्वारा मिलता है।"

संचयी आलेख पत्र का उद्देश्य (Purpose of the Cumulative Records) : संचयी आलेख पत्र तैयार करने के मुख्य उद्देश्य अग्रलिखित हैं –

1. संचयी आलेख पत्र प्रत्येक बालक को व्यक्तिगत रूप से समझने में अध्यापक की सहायता करता है।
2. छात्रों की आवश्यकताओं को समझने के लिए।
3. इनसे हमें शैक्षणिक तथा व्यावसायिक संदर्शन (Guidance) देने में सहायता मिलती है।
4. संचयी आलेख पत्रों से हमें विद्यार्थियों के समस्यात्मक व्यवहारों एवं उनके कारणों का ज्ञान हो जाता है।
5. संचयी आलेख पत्र अभिभावक-शिक्षक सम्पर्क के अवसर प्रदान करते हैं।
6. 'अवकाश के क्षणों का सदुपयोग' (Training for Leisure) सम्बन्धी कार्यक्रम बनाने में सहायता मिलती है।
7. इनके माध्यम से हमें प्रत्येक विद्यार्थी के विकास का क्रम मालूम हो जाता है।

Scanned with CamScanner

8. आलेख पत्र के माध्यम से वे सूचनाएं प्राप्त हो जाती है, जो परीक्षा द्वारा ज्ञात नहीं हो पातीं।
9. आलेख पत्रों से न केवल विद्यार्थी की प्रगति का ही ज्ञान होता है बल्कि, अध्यापक द्वारा अपनायी गई विधियों की सफलता का भी पता चल जाता है।

संचयी आलेख पत्र के प्रकार (Types of Cumulative Records) : संचयी आलेख पत्र निम्न तीन प्रकार के होते है –

(क) एक पत्र लेखा (Single Card Record)

(ख) पैकेट या परत (Packet or Folder)

(ग) संकलित परत (Cumulative Folder)

(क) एक पत्र लेखा (Single Card Record) : इसमें एक ही पत्र होता है तथा इसके दोनों ओर लिखा जा सकता है। अतिरिक्त सूचना के लिए एक अतिरिक्त परत का प्रबन्ध किया जा सकता है।

(ख) पैकेट या परत (Packet or folder) : ये पैकेट अनेक प्रकार के होते है। इनमें अनेक पत्र रखे जा सकते है। इन पैकेटों में अनेक पत्र विभिन्न प्रकार की सूचनाएं लिखकर रखे जा सकते है। विषयों का वर्गीकरण करने के उद्देश्य से रंगीन पत्र प्रयोग में लाये जा सकते है। ऐसा करने से पत्र कालान्तर में निकालने या छाँटने में सुविधा रहती है।

(ग) संकलित परत (Cumulative folder) : ये पत्र बहुत बड़े आकार के होते है। इनके दोनों ओर विभिन्न प्रकार की सूचनाएं लिखने के लिए अलग-अलग स्थान दिये होते है। परत में अतिरिक्त सूचनाएं लिखने का भी प्रबन्ध होता है।

संचयी आलेख पत्र का प्रारूप (Format of the Cumulative Record Cards) : संचयी आलेख पत्र में अंकित की जाने वाली सूचना विद्यालय विशेष का वातावरण, छात्र का कक्षा स्तर एवं आलेख पत्र के उद्देश्य पर निर्भर करती है। विद्यालय के विभिन्न स्तरों के अनुकूल ही संचय आलेख पत्रों की विषय वस्तु का चयन किया जाये। प्राथमिक स्तर पर, विद्यार्थी का स्वभाव, लगन, रुचि, भावनाएं, बड़ों के प्रति व्यवहार, सांस्कृतिक कौशल आदि, जूनियर स्तर पर, छात्र का व्यक्तिगत, सामाजिक एवं व्यक्तित्व सम्बन्धी अन्य विशेषताओं का उल्लेख आदि तथा माध्यमिक स्तर पर, आलेख पत्र की विषय वस्तु पर्याप्त विस्तृत होनी चाहिये, जिसमें छात्र की विभिन्न विषयों सम्बन्धी उपलब्धियाँ एवं विफलताएँ, शैक्षिक इतिहास, पारिवारिक विचार, वातावरण सम्बन्धी समायोजन एवं अन्य सृजनात्मक क्रियाओं का उल्लेख विशेष रूप से किया जाना सम्मिलित है। संक्षेप में, एक अच्छे आलेख पत्र का प्रारूप निम्न बिन्दुओं के आधार पर तैयार किया जाना चाहिये।

व्यक्तिगत (Personal) : नाम, जन्म तिथि, जन्म स्थान, स्थायी पता, लिंग, जाति आदि।

परिवार (Family Status) : माता-पिता एवं अभिभावकों के नाम, पते एवं व्यवसाय (जीवित या मृत) ; घर की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति, भाई-बहनों की संख्या, पिता की मासिक आय, माता-पिता के वैवाहिक सम्बन्ध आदि।

विद्यालय (School) : विभिन्न शैक्षिक पाठ्य विषयों में उपलब्धि (प्राप्त अंक, पढ़ने में विशेष योग्यता, कक्षा में स्थान, विफलताएं, सांस्कृतिक क्रियाओं में रुचि एवं खेल कूद आदि) ; बुद्धि परीक्षणों के आधार पर छात्र की

Scanned with CamScanner

बुद्धि लब्धि (I.Q.); व्यक्तित्व परीक्षणों के आधार पर व्यक्तित्व सम्बन्धी अनेक विशेषताओं एवं कौशलों का मूल्यांकन; विद्यालय के प्रति छात्र का दृष्टिकोण, विद्यालय में उपस्थिति सम्बन्धी आँकडे आदि।

स्वास्थ्य (Health) : स्वास्थ्य सम्बनधी सम्पूर्ण विवरण, छात्र की लम्बाई, कद, वजन, शारीरिक दोष, सांवेगिक अस्थिरता, रोगों का वर्णन, वंश परम्परा से प्राप्त रोग एवं डाक्टर द्वारा समय समय पर किये गये निरीक्षणों का लेखा आदि।

अन्य (Others) : रुचियाँ, व्यक्तित्व सम्बन्धी विशेषताएं, शैक्षिक एवं व्यावसायिक येजनाएँ, परामर्शदाताओं द्वारा दी गई सलाह, नियुक्ति पत्र (यदि कोई विद्यार्थी को विद्यालयीय अवधि में मिला हो), शिक्षा के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों जैसे, वाद-विवाद, खेल कूद, सांस्कृतिक आयोजनों आदि में छात्र की उपलब्धि एवं सहयोग, परिचितों, अध्यापकों एवं प्रधानाचार्य द्वारा दी गई टिप्पणियाँ (Remarks) आदि।

संचयी आलेख पत्र के उपयोग (Uses of the Cumulative Record Cards) : शिक्षा तथा व्यवसाय दोनों ही क्षेत्रों में संचयी आलेख पत्रों के अनेक उपयोग हैं, जो निम्न हैं :

1. इनके माध्यम से विद्यार्थियों के अभिभावकों को उनकी प्रगति सम्बन्धी सम्पूर्ण जानकारी दी जाती है, परिमाणस्वरूप, विद्यालय एवं अभिभावकों के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित होते हैं।
2. ये आलेख समस्यात्मक बालकों एवं बाल अपराधियों के बारे में, उनके विद्यार्थी जीवन के बाद भी, महत्वपूर्ण तथ्यों की जानकारी देकर उन्हें अपराधी बनने से रोकते हैं।
3. इनके द्वारा बालक के असाधारण व्यवहार एवं असामाजिक क्रियाओं के कारण तथा व्यक्तित्व एवं अनुशासन सम्बन्धी समस्याओं के समाधान में सहायता मिलती है।
4. आलेख पत्र छात्रों का वर्गीकरण करने में सहायता प्रदान करते हैं।
5. विद्यार्थी जब एक कक्षा से दूसरी कक्षा में अथवा एक विद्यालय से दूसरे विद्यालय में जाता है, तो नवीन अध्यापकों को इन आलेख पत्रों की सहायता से छात्र के बारे में पूर्ण जानकारी आसानी से प्राप्त हो जाती है।
6. आलेख पत्र किसी भी प्रकार के प्रमाण पत्र तैयार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।
7. ये आलेख विद्यार्थी के शैक्षिक एवं व्यावसायिक पथ-प्रदर्शन में सहायक होते हैं।
8. ये आलेख रोजगार कार्यालयों को छात्र के बारे में महत्वपूर्ण सूचनाएं प्रदान करते हैं।
9. आलेख पत्र छात्र को स्वयं की क्षमताओं एवं कमियों का आभास कराते हैं।
10. आलेख पत्र व्यक्तिगत रूप से छात्र का ध्यान रखने में अध्यापक की सहायता करता है।

जेन वार्टर्स ने संकलित आलेख पत्र का महत्व दर्शाते हुए लिखा है –

"संकलित आलेख पत्र, छात्र के वर्तमान को समझने के लिए, भूत की व्याख्या करने, व्यावहारिक कठिनाइयों तथा असफलताओं के कारणों से उसकी क्षमताओं तथा कमियों को दर्शाकर, छात्र के अध्ययन में, अध्यापक की सहायता करते हैं।"

Scanned with CamScanner

संचयी आलेख पत्र के प्रयोग में प्रयुक्त सावधानियाँ (Precautions regarding use of Cumulative Record Cards) : संचयी आलेख पत्र तैयार करते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिये –

1. संचयी आलेख पत्र में विवरण वस्तुनिष्ठ होने चाहिएं, न कि आत्मनिष्ठ।
2. आलेख पत्र विद्यार्थी की प्रगति का एक सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत कर सके, इसके लिए यह आवश्यक है कि, संचयी पत्र में विद्यार्थी की समस्त परिस्थितियों एवं उसके विकास के विभिन्न क्षेत्रों में हुई प्रगति का सम्पूर्ण ब्यौरा दिया जाय।
3. संचयी आलेख पत्र का रूप विद्यालय के उद्देश्यों के अनुरूप निश्चित किया जाय।
4. आलेख पत्रों का रूप निश्चित करने में विद्यालय के सभी अध्यापकों की सहमति प्राप्त की जाय।
5. आलेख पत्र अधिक जटिल नहीं बनाने चाहियें तथा इनके रूप में लचीलापन होना चाहिये।
6. आलेख पत्र ऐसे स्थान पर रखने चाहियें जहाँ से उन्हें आसानी से प्राप्त किया जा सके। साथ ही, इनका लिखना एवं फाईल करना भी सुविधाजनक एवं कम खर्चीला हो।
7. आलेख पत्र की यह एक विशेषता होनी चाहिए कि वह बालक के क्रमिक विकास को प्रदर्शित करे।
8. आलेख पत्र सम्बन्धी एक विवरण पुस्तिका (Manual) भी तैयार की जानी चाहिये।
9. चूँकि, आलेख पत्रों की कुछ सूचनाएं गुप्त होती हैं, अतः इनके प्रयोग पर भी कुछ नियन्त्रण रखा जाय।
10. समय-समय पर संचयी आलेख पत्रों का पुनर्मूल्यन भी कराते रहना चाहिये।
11. आलेख पत्रों का उपयोग करना भी एक कला है। अध्यापक को इस कला में दक्ष होना चाहिये।

थार्नडाइक एवं टेगेन के शब्दों में – "आलेख पत्रों में जो कुछ लिखा जाता है, वह महत्वपूर्ण नहीं है, परन्तु, उनसे जो कुछ प्राप्त किया जाता है, वह महत्वपूर्ण है।"

"A cumulative record, means a record card that follows the pupils, not only from school to school, but, from teacher to teacher."

– Rivlin

(Encyclpedia of Modern Education.)

(8) चैक लिस्ट

(Check List)

चैक लिस्ट अथवा चिन्हांकन सूची में मात्र ऐसे कथन होते हैं, जो व्यक्तित्व से ही सम्बन्धित वर्णनात्मक कथन या शीलगुणों के रूप में व्यक्त होते हैं। अध्यापक यह जानने का प्रयास करता है कि ये शीलगुण या विशेषताएं छात्र में विद्यमान हैं अथवा नहीं। अध्यापक मिलान करके सही का निशान लगाता है। यह प्रविधि और अधिक वस्तुनिष्ठ बनाई जा सकती है, यदि मापित कौशल को अन्य बहुत से छोटे-छोटे अवयवों में विभक्त कर लिया जावे। इस प्रकार चैक लिस्ट एक प्रकार का विशिष्ट प्रश्न समूह होता है, जिसमें स्वयं व्यक्ति से ही प्रश्न पूछकर उसके व्यक्तित्व के पक्ष का मापन किया जाता

Scanned with CamScanner

है। मिलान सूची के प्रश्नों का उत्तर देकर व्यक्ति यह निर्धारित करता है कि जीवन से सम्बन्धित विभिन्न परिस्थितियों में वह किस प्रकार का व्यवहार करेगा। स्पष्ट है, इस सूची से व्यक्ति के किसी विशेष पक्ष का, उस स्थिति विशेष में अभिव्यक्ति का पता चलता है। हार्टशोर्न (Hartshorne) तथा मे (May) ने इस विधि का प्रयोग बच्चों के चरित्र का मूल्याँकन करने के लिये किया। 80 लक्षणों के नाम छाँटे गये, जैसे — निर्दयी, सहयोगी, दयालु, लालची, अहसानमन्द आदि। प्रत्येक निर्णायक ने यह जाँच की कि सूची के लक्षणों में से कौन-कौन बालक पर व्यवहृत हैं। अंकों के संचय (Total score) से बालक के गुणों के बारे में निर्णय किया गया। प्रत्येक अनुकूल लक्षण के लिये +1 तथा प्रतिकूल लक्षण के लिये -1 अंक दिया गया। अहरब्रोक (Uhrbrock) ने अपनी पड़ताल सूची में 724 कथन सम्मिलित किये हैं। ये 20 कार्यदशकों (Foremen) के निर्णय पर आधारित थे और इनका उद्देश्य कर्मचारियों का मूल्याँकन करना था। अतः पड़ताल सूची एक ऐसी विधि है, जिसमें अवलोकन के लिये पद दिये रहते हैं। स्कूलों, औद्योगिक संस्थानों, ऑफिसों, सेना आदि स्थानों पर इनका प्रयोग सफलतापूर्वक किया जाता है। इन्हें कभी-कभी 'अवलोकन अनुसूची' (Observation Schedules) भी कहते हैं, विशेषकर तब, जबकि ये बहुत लम्बी हों। प्रकाशित पड़ताल सूचियाँ, स्वयं संरक्षित पड़ताल सूचियों से अधिक विश्वसनीय नहीं होतीं। हार्टशोर्न तथा मे, के अनुसार अध्यापक द्वारा विद्यार्थी के मूल्याँकन में इस विधि का विश्वसनीयता गुणाँक .60 के लगभग है।

नीचे मिलान सूची का प्रारूप (format) दिया जा रहा है :

नाम..... कक्षा.....

कॉलिज/विश्वविद्यालय.....

क्रम संख्या	व्यक्तित्व विवरण/ शीलगुण	आवृत्ति	ग्रेड	विवरण

हस्ताक्षर : ....

विशेषताएँ (Merits) :

1. इसकी संरचना एवं प्रशासन अत्यन्त सरल कार्य है।
2. फलाँकन - गणना अत्यन्त सरल है, विशेषकर उस स्थिति में, जब पदों में +1 अथवा 0 अंक देना हो।
3. इस विधि का प्रयोग अत्यन्त जटिल परिस्थितियों में भी किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, किसी कर्मचारी की उसके संस्थान में क्या स्थिति (उपयोगिता) है।
4. यदि मिलान सूची के पद व्यक्ति की उन विशिष्ट क्रियाओं से सम्बन्धित हैं, जिनका कि निर्णायक अवलोकन कर रहा हो, तो यह सूची एक उपलब्धि परीक्षण का काम करती है।
5. इसमें साक्षात्कार से कम समय लगता है।
6. एक बार अंकन-कुँजी बन जाने पर विभिन्न निरीक्षकों का मूल्याँकन समान होता है।

Scanned with CamScanner

7. इसके लिये आवश्यक नहीं है कि निर्णायक प्रशिक्षित हो एवं उसमें विभेदकारी सामर्थ्य हो।

सीमाएँ (Limitations) :

1. व्यक्ति अपने स्वाभाविक व्यवहार पर नियन्त्रण करके प्रश्नों के उत्तर ग़लत दे सकता है।
2. ऐसा भी हो सकता है कि व्यक्ति प्रश्नों की भाषा ठीक से न समझ पाये और अन्दाजे से ही उत्तर दे दे।
3. ऐसा भी हो सकता है कि परीक्षण में लिखी गई घटनाएँ उसकी जिन्दगी में घटी ही न हों।
4. इस विधि में निर्णायक से केवल उन पदों या कथनों की पड़ताल करने को कहा जाता है जो उस पर प्रयुक्त हों। ऐसा होने पर निर्णायक को प्रत्येक पद के सम्बन्ध में प्रतिक्रिया नहीं करनी पड़ती। अतः उसकी प्रतिक्रिया मे अनावश्यक झुकाव या पक्षपात आ जाता है।

सुझाव (Guidance) : मिलान सूची के प्रभावी उपयोग के लिये निम्नलिखित बिन्दुओं को ान में रखना चाहिये –

1. सर्वप्रथम अध्यापक को यह सुनिश्चित करना चाहिये कि वह मिलान सूची के माध्यम से अभ्यर्थी के व्यक्तित्व सम्बन्धी किन शीलगुणों का मापन करना चाहता है।
2. चयनित शीलगुणों को वस्तुनिष्ठ तरीके से परिभाषित किया जाना चाहिये।
3. अध्यापक को अवलोकन योजना व अंकन प्रक्रिया ठीक से तैयार करनी चाहिये।
4. अध्यापक को अपने मूल्याँकन में वस्तुनिष्ठ होना चाहिये तथा ग्रेड प्रदान करते समय पर्याप्त सावधानी रखनी चाहिये।
5. परीक्षण में अधिक प्रश्न नहीं रखने चाहियें, नहीं तो हो सकता है, कि व्यक्ति प्रश्नों से ऊबकर उत्तर ही न दे और यदि दे भी तो अनमने भाव से।
6. परीक्षण में किसी एक विशेष पक्ष का ही मापन करना चाहिये, ताकि व्यक्ति को उसी पक्ष पर अपना ध्यान केन्द्रित करने का अवसर मिल सके।
7. प्रत्येक पद की केवल दो सम्भावित प्रतिक्रियाएँ होने से फलाँकन अधिक वैज्ञानिक नहीं बन पाता। यदि तीन प्रतिक्रियाओं का प्रयोग किया जाये तो इसमें सुधार सम्भव है। अनुकूल प्रतिक्रिया का मूल्य या फलांक, तटस्थ (Neutral) प्रतिक्रिया से अधिक होना चाहिये।
8. यदि परीक्षण डाक द्वारा भेजा गया है तो परीक्षक को उत्तर प्रपत्र पर डाक टिकट चिपका कर भेजना चाहिये।

Scanned with CamScanner

साक्षात्कार
(INTERVIEW)

व्यवहारपरक विज्ञानों में साक्षात्कार एक ऐसी अनुसन्धानिक प्रविधि है जिसमें किसी विशेष उद्दे
कों प्राप्ति के लिए किसी व्यक्ति विशेष से प्रत्यक्ष रूप से प्रश्न करके जानकारी प्राप्त की जाती है। अत
से ही इस प्रविधि का उपयोग निदान, उपचार व चयन आदि के लिए किया जाता रहा है। शाब्दिक रू
से साक्षात्कार का अंग्रेजी रूपान्तर 'Interview' है जो कि दो शब्दों inter व view से मिलकर बना है
Inter का अर्थ है 'आन्तरिक' तथा view का अर्थ है 'अवलोकन करना'। इस प्रकार साक्षात्कार य
Interview का सम्मिलित शाब्दिक अर्थ 'आन्तरिक अवलोकन' करना है। **मैकोबी एवं मैकोबी** *(1959)*
के शब्दों में—"तकनीकी रूप से—साक्षात्कार से अभिप्राय: एक ऐसी स्थिति से है जिसमें एक व्यक्ति,

Scanned with CamScanner

साक्षात्कारकर्ता आमने-सामने के पारस्परिक मौखिक आदान-प्रदान से दूसरे व्यक्ति अथवा व्यक्तियों को सूचना देने अथवा अपने विचार तथा विश्वास व्यक्त करने के लिए प्रेरित करने का प्रयास करता है।" (Interview refers to a face-to face verbal interchange in which one person, the interviewer attempts to elicit information or expressions of opinion or belief from another person or persons.)

पी. वी. यंग (1956) के अनुसार, "साक्षात्कार को ऐसी व्यवस्थित विधि माना जा सकता है, जिसके अन्तर्गत एक व्यक्ति काल्पनिक रूप से, कम या अधिक एक ऐसे व्यक्ति के आन्तरिक जीवन में प्रवेश करता है, जो कि उसके लिए अपेक्षाकृत अपरिचित होता है" (The interview may be regarded as a systematic method by which one person enters more or less imaginatively into the inner life of a comparative stranger.)

यंग ने साक्षात्कार को विस्तृत रूप से परिभाषित करते हुए लिखा है—साक्षात्कार क्षेत्र-अध्ययन की ऐसी प्रविधि है, जिसके द्वारा एक अथवा अनेक व्यक्तियों के व्यवहार का निरीक्षण व कथनों का अभिलेखन इस आशय से किया जाता है, ताकि प्राप्त निश्चित परिणामों के आधार पर एक सामाजिक अथवा समूह की अन्तक्रिया या प्रेक्षण किया जा सके। इस प्रकार यह एक ऐसा सामाजिक प्रक्रम है, जिसमें प्राय: दो व्यक्तियों की अन्तक्रिया सम्बन्धित रहती है।

उपर्युक्त विभिन्न परिभाषाओं के अवलोकन के आधार पर कहा जा सकता है कि साक्षात्कार अब एक साधारण प्रक्रिया न होकर एक अतिविकसित कला तथा अध्ययन की वैज्ञानिक पद्धति है। व्यक्तित्व मापन के क्षेत्र में यह अत्यन्त ही उपयोगी प्रविधि है। इसके द्वारा प्राय: व्यक्ति के व्यक्तित्व के स्तरों को ज्ञात करने की चेष्टा की जाती है। अत: व्यक्तित्व मापन की दृष्टि से साक्षात्कार के निम्न उद्देश्य हो सकते हैं—

(i) सही मूल्यों, विचारों तथा मनोवृत्तियों का ज्ञान प्राप्त करना।

(ii) अचेतन में निहित व्यक्तित्व की शक्तियों का ज्ञान प्राप्त करना।

(iii) ऐसी प्रवृत्तियों का ज्ञान प्राप्त करना जो चेतन पर अनेक रुकावटों के पश्चात् प्रकट होती हैं।

(iv) तनावों, आन्तरिक इच्छाओं, कुण्ठाओं तथा इनसे सम्बन्धित व्यवहारिक परिवर्तनों का ज्ञान प्राप्त करना।

(v) साक्षात्कार द्वारा व्यक्ति की प्रेरणात्मक शक्तियों और उसकी क्रियाओं की व्याख्या की जा सकती है।

(vi) यह अन्य व्यक्तित्व मापकों के पूरक का कार्य भी करता है।

साक्षात्कार के प्रकार (Types of Interview)

व्यक्तित्व मापन के उद्देश्य से साक्षात्कार को निम्न भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

(1) संरचित साक्षात्कार (Structured interview)—इस प्रकार के साक्षात्कारों में साक्षात्कार की विधि, समय तथा प्रश्नों की भाषा एवं समय सभी का पहले से निश्चय कर लिया जाता है। सभी प्रत्याशियों से प्रश्न एक ही क्रम में पूछे जाते हैं। इस प्रकार की विधि से विभिन्न व्यक्तियों की तुलना करने में आसानी रहती है।

इस विधि के साक्षात्कार में प्रश्नों का गठन भी दो प्रकार से किया जाता है, प्रथम प्रकार में प्रश्न इस तरह के होते हैं कि उनके उत्तर नियन्त्रित हों तथा द्वितीय प्रकार के प्रश्नों के लिए व्यक्ति स्वतन्त्र होता है और वह अपनी इच्छानुसार उत्तर दे सकता है। इस प्रकार के साक्षात्कार प्राय: प्रश्नावलियों का रूप ले लेते हैं अत: इनके लाभ और सीमाएँ भी प्रश्नावलियों के समान ही हैं।

Scanned with CamScanner

(2) असंरचित साक्षात्कार (Unstructured interview)—व्यक्ति के जीवन की कुछ ऐसी समस्याएँ होती हैं जिनका अध्ययन केवल असंरचित साक्षात्कार द्वारा ही किया जा सकता है। इस प्रकार के साक्षात्कारों को अनेक नामों से जाना जाता है; यथा—**अनियोजित साक्षात्कार** (Non-directive interview), **गहन साक्षात्कार** (Depth interview), **नैदानिक साक्षात्कार** (Clinical interview) आदि।

(अ) अनियोजित साक्षात्कार—इस प्रकार के साक्षात्कार का प्रयोग प्राय: व्यक्ति के प्रत्यक्षीकरण, अभिवृत्ति, प्रेरणा आदि के अध्ययनों के लिए किया जाता है। इस प्रकार का साक्षात्कार लचीली प्रवृत्ति का होता है अत: इसमें साक्षात्कारकर्ता से अधिक सावधानी वांछित होती है। इसमें प्रश्नों की भाषा, क्रम आदि पूर्व निश्चित नहीं होते हैं। साथ ही प्रश्नों का उत्तर देने के लिए साक्षात्कार देने वाले पद किसी भी प्रकार का नियन्त्रण नहीं होता है। अत: इस विधि से प्राय: साक्षी द्वारा प्राकृतिक उत्तर प्राप्त होते हैं। उसके उत्तरों में स्वयं की पूर्ण अभिव्यक्ति होती है तथा वे सामान्य की अपेक्षा विशेष होते हैं। इस विधि की उक्त स्वतन्त्रता इसकी एक सीमा भी है क्योंकि इसके द्वारा प्राप्त प्रदत्तों से तुलनात्मक अध्ययन सम्भव नहीं होता है। इसके प्रदत्तों का विश्लेषण भी कठिन होता है।

(ब) गहन साक्षात्कार—इन साक्षात्कारों का उद्देश्य उत्तरदाताओं का अवधान किन्हीं गत-अनुभवों पर केन्द्रित करना होता है एवं उन अनुभवों का प्रभाव कुछ अन्य तत्वों पर किस प्रकार का है, इसका पता लगाना होता है। इसमें प्रश्नों का स्वरूप और समय आदि साक्षात्कारकर्ता की इच्छा पर निर्भर करता है।

इस प्रकार के साक्षात्कार की मुख्य विशेषताएँ निम्नवत् हैं :

(i) इस प्रकार का साक्षात्कार केवल उन्हीं लोगों तक सीमित रहता है जो घटना विशेष में सम्मिलित रहे हों।

(ii) इस विधि का प्रयोग केवल उन्हीं घटनाओं के सन्दर्भ में किया जाता है जिनका विश्लेषण साक्षात्कार से पूर्व कर लिया गया है।

(iii) इस साक्षात्कार का प्रयोग केवल साक्षात्कार प्रदर्शिका (Interview guide) के आधार पर ही किया जाता है।

(iv) यह विषयगत अनुभवों पर ही किया जाता है।

(स) नैदानिक साक्षात्कार—ये साक्षात्कार भी गहन साक्षात्कारों के समान ही होते हैं। इनमें केवल एक मुख्य अन्तर होता है। नैदानिक साक्षात्कार में साक्षात्कारकर्ता प्राय: अन्तर्निहित भावनाओं तथा प्रेरणाओं में रुचि रखता है जबकि गहन साक्षात्कार में वह अनुभव विशेष के विषयों पर प्रभाव में रुचि रखता है। इस प्रकार के साक्षात्कार में भी वह पहले से जानता है कि उसे किन घटकों के सम्बन्ध में वार्ता करनी है।

(3) केन्द्रित साक्षात्कार (Focussed Interview)—इस अर्ध-संरचित प्रकार के साक्षात्कार में संरचित वह असंरचित दोनों प्रकार के साक्षात्कार के दोषों को कम किया जा सकता है। इसके प्रक्रम में उत्तरदाता तथा साक्षात्कारकर्ता पर न तो असंरचित साक्षात्कार जैसी स्वतन्त्रता ही रहती है और न ही संरचित साक्षात्कार के जैसे प्रतिबन्ध ही रहते हैं। वास्तव में यह साक्षात्कार की सर्वाधिक उपयुक्त व वैध विधि है।

साक्षात्कार की विशेषताएँ (Characteristics of Interview)

(i) इसका समाज के किसी भी वर्ग पर प्रयोग किया जा सकता है।

(ii) इसमें सहयोग करने को लोग सरलता से तैयार हो जाते हैं क्योंकि उन्हें लिखित रूप में कुछ भी नहीं देना होता है।

(iii) इस विधि का लचीलापन इसकी एक प्रमुख विशेषता है।

Scanned with CamScanner

(iv) इस विधि द्वारा केवल यही ज्ञात नहीं होता कि विषयी किसी विषय के बारे में क्या उत्तर देता है, वरन् उसकी भाव-भंगिमा इससे कुछ अधिक ही बता देती है।

(v) इस विधि द्वारा व्यवहार के उन आयामों का अध्ययन भी किया जा सकता है जिसे प्राय: सभ्य समाज में प्रकट करने में लोग हिचकिचाते हैं।

साक्षात्कार की सीमाएँ (Limitation of Interview)

(i) इस विधि में दुहरी आत्मगतता होती है जिसका प्रदत्तों की व्याख्या पर पर्याप्त प्रभाव पड़ता है।

(ii) इसमें त्रुटिपूर्ण प्रत्यक्षीकरण, अशुद्ध स्मृति और सूझ की कमी के कारण अध्ययन का महत्व कम हो जाती है।

(iii) इसमें साक्षात्कारकर्ता सभी के पास कुछ पूर्व-निश्चित आशाओं को लेकर पहुँचता है और साक्षत्कार के समय अधूरे वाक्यों को अपनी आशा के अनुकूल पूर्ण कर लेता है। अत: प्राप्त प्रदत्तों की वैधता घट जाती है।

(iv) साक्षात्कार और साक्षी विभिन्न सामाजिक वातावरण में विकसित होने के कारण उनकी व्याख्या अलग-अलग करते हैं।

(v) असंरचित साक्षात्कार, जिनमें उत्तरों की लम्बाई पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होता है, सन्तोषप्रद उत्तर प्राप्त करने में बाधक होते हैं।

साक्षात्कार की उक्त सीमाओं को साक्षात्कारकर्ता और साक्षी परस्पर एक-दूसरे की अन्त:क्रिया की प्रक्रिया समझने के पश्चात् किसी सीमा तक कम कर सकते हैं।

व्यक्तित्व अनुसूची

Scanned with CamScanner

(v) अनुसूची के द्वारा समस्त उत्तरदाताओं से समान स्थितियों अथवा मानकीकृत दशाओं में ही सूचना-संकलन का कार्य सम्पन्न करना चाहिए।

(vi) अनुसूची का भौतिक स्वरूप सर्वमान्य व आकर्षक होना चाहिए।

अनुसूची के दोष—अनुसूची के मुख्य दो दोष हैं जिनका निराकरण प्रायः असम्भव ही होता है;

(i) प्रश्नकर्ता के अपने व्यक्तित्व का प्रयोज्य पर प्रभाव पड़ना व

(ii) दूरस्थ स्थानों से सूचनाएँ प्राप्त कर सकने की असफलता।

यद्यपि अनुसूची का प्रयोग अधिक समय लेने वाला अधिक धन व्यय कराने वाला है पर जहाँ गहन सूचना और निरीक्षण हो वहाँ इसका प्रयोग आवश्यक है।

निरीक्षण विधि
(OBSERVATION METHOD)

व्यक्तित्व मापन विधि के रूप में निरीक्षण विधि एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विधि है। व्यक्तित्व एवं बुद्धि के अनेक पक्षों का ज्ञान इसके द्वारा ही सम्भव होता है। व्यक्ति एकान्त में, समूह में, विशिष्ट परिस्थितियों में जो कुछ भी क्रियाएँ करता है उन क्रियाओं को निरर्थक नहीं समझा जा सकता है। यदि व्यक्ति की इन विभिन्न क्रियाओं का अवलोकन किया जाये तो इसके आधार पर उसके व्यक्तित्व सम्बन्धी बहुत-सी सूचनाएँ ज्ञात की जा सकती हैं। प्रायः यह देखा गया है कि व्यक्ति बैठे-बैठे या चलते-फिरते कितने ही प्रकार की अनावश्यक क्रियाएँ करता रहता है—जैसे उंगलियों का चटकाना, हाथों को झटकना, अपने-आपसे बातें करना आदि। इन आवश्यक समझी जाने वाली क्रियाओं का व्यक्तित्व के मापन में अत्यधिक महत्व है। व्यक्ति के व्यवहार का अवलोकन किये बिना उसके सम्बन्ध में कुछ भी निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता है।

जो भी व्यक्ति इस विधि का प्रयोग कर रहा होता है उसे प्रशिक्षण प्राप्त करने की आवश्यकता तो रहती ही है, क्योंकि इसके प्रयोग में बहुत-सी सावधानियों का ध्यान रखना पड़ता है। यथार्थ मूल्यांकन के लिए कुशल ज्ञानेन्द्रियों, विशेषकर आँखों का होना अत्यन्त आवश्यक है, क्योंकि अधिकांश अवलोकन दृष्टिक होता है। ध्वनि, स्वाद, सुगन्ध, स्पर्श की तीव्र ज्ञानेन्द्रियों का भी होना आवश्यक है। शुद्ध अवलोकन के लिए यह आवश्यक है कि अध्ययन की जाने वाली वस्तु की ओर ही ध्यान लगाया जाये और जो कुछ भी अवलोकन किया गया है उसे तत्काल लिख लिया जाये। ऐसा इसलिए किया जाना चाहिए, क्योंकि स्मृति के क्षीण होने पर अवलोकन के समय की स्पष्ट बातें धूमिल हो जाती हैं। परिणामस्वरूप यथार्थ अवलोकन प्राप्त होने पर कठिनाई होती है। इसीलिए इस विधि में टेपरिकॉर्डर, कैमरा आदि का प्रयोग किया जाता है। अवलोकन करने वाले में यह क्षमता भी होनी चाहिए कि वह किसी प्रकार के संवेगात्मक असन्तुलन का पता लगा सके। व्यवहारों को जब अवलोकन विधि द्वारा समझने का प्रयास किया जाता है तो अवलोकन दो प्रकार—व्यक्तिगत तथा वस्तुगत—से किया जा सकता है।

इस विधि में अनेक दोष भी हैं—(i) व्यक्तित्व-मापन के लिए व्यक्ति के विभिन्न व्यवहारों का निरीक्षण किया जाता है। सम्भव है कि निरीक्षक दूसरे के व्यवहार की व्याख्या करते समय उनका विश्लेषण अपने अनुभवों के आधार पर करे, क्योंकि एक व्यवहार के अनेक कारण हो सकते हैं। निरीक्षक उसी कारण की कल्पना कर सकता है जो उस परिस्थिति में उसके अपने व्यवहार का कारण हो सकता था। इस प्रकार विश्लेषण करते समय दूसरों के व्यवहार की अपेक्षा निरीक्षक के अपने ही व्यवहार का वर्णन हो सकता है। (ii) जब निरीक्षक और उसके अध्ययन के पात्रों के मानसिक विकास में अधिक अन्तर होता है, उस समय वह विधि अधिक दोषपूर्ण हो जाती है। (iii) निरीक्षक विश्लेषण करते समय पूर्व-धारणाओं से प्रभावित हो सकता है। (iv) व्यक्ति दिल में कुछ चाहता है और बाह्य व्यवहार कुछ और प्रदर्शित करता है ऐसी परिस्थिति में निरीक्षण लाभदायक नहीं होता। इन समस्त दोषों के होते हुए भी हमें इस विधि का सहारा व्यक्तित्व व बुद्धि के विभिन्न पक्षों के विषय में ज्ञान प्राप्त करने के लिए लेना पड़ता है। अनेक विज्ञान-शाखाओं से भी निरीक्षण अध्ययन होता है। निरीक्षकों को उचित और वैज्ञानिक रूप से निरीक्षण करने की यदि शिक्षा दी जाये तो उपर्युक्त दोष दूर किये जा सकते हैं।

निर्धारण मापनी
(RATING SCALE)

मनोवैज्ञानिक मापन की विधियों में यह विधि अपनी विश्वसनीयता के कारण बहुत अधिक प्रचलित है। इसका प्रयोग उद्योग, शिक्षा, अन्वेषण आदि के क्षेत्रों में सफलतापूर्वक किया जा रहा है। इसके प्रारम्भ का श्रेय मनोभौतिकी के क्षेत्र में **फेकनर** को जाता है पर सर्वप्रथम निर्धारण मापनी 1883 में **गाल्टन** ने प्रकाशित की जो 'बिम्ब-सृष्टि' (Imagery) से सम्बन्धित थी। सन् 1906-1907 में **पियर्सन** ने बुद्धि मापन के लिए एक निर्धारण मापनी का निर्माण किया जिसमें सात श्रेणियाँ थीं। **वान डेलन** के अनुसार, "निर्धारण मापनी किसी चर की मात्रा, तीव्रता व बारम्बारता का निर्धारण करती है।" (A rating scale ascertains the degree of intensity or frequency of a variable.)

गिलफर्ड के अनुसार प्रचलित निर्धारण मापनियाँ चार प्रकार की होती हैं :

(1) संख्यात्मक मापनी (Numerical scale)—इसमें गुण की मात्रानुसार कई श्रेणियाँ बना दी जाती हैं और व्यक्ति को मात्रा के अनुसार अंक दे दिये जाते हैं।

(2) रेखांकित मापनी (Graphic scale)—यह बहुत लोकप्रिय प्रविधि है जिसका सर्वप्रथम प्रयोग **बाइस** (Boyce) ने किया और बाद में स्काट कम्पनी लेबोरेटरी ने विकसित किया। इसमें एक रेखा के नीचे खण्डों के अनुसार विवरण-विश्लेषण या वाक्यांश दिए होते हैं। प्रत्येक गुण पर निर्णय देना होता है कि वह परीक्षार्थी में किस मात्रा में है। 'हैगर्टी-ओल्सन बिकमैन बिहेवियर रेटिंग स्केल' तथा अमरीकन काउन्सिल ऑफ एजूकेशन द्वारा निर्मित 'पर्सनैलिटी रेटिंग स्केल' इसी प्रकार के हैं।

(3) स्तर मापनी (Standard Scale)—इसमें अनेक प्रमाप या मानक जैसे हस्तलेख मनुष्य-मनुष्य में साम्य आदि प्रस्तुत किये जाते हैं और निर्णय के योग्य सामग्री की मानकों में तुलना की जाती है। **आयर्स** (Ayres), **थार्नडाइक** आदि ने इस दिशा में बहुत कार्य किया है।

(4) संचित बिन्दु मापनी (Cumulated point scale)—इसमें अनेक पदों पर व्यक्ति का मूल्यांकन कर अंक प्रदान किए जाते हैं तथा उनके योग के आधार पर निर्णय दिया जाता है। इसमें विविध लक्षणों के जोड़े प्रस्तुत किए जाते हैं और पूछा जाता है कि कौन-सा लक्षण उस व्यक्ति में मिलता है। यह जोड़े या चतुष्टय विरोधी गुणों के बनाये जाते हैं।

निर्धारण मापनी की रचना के समय विशेषज्ञ, पूर्वाग्रहयुक्त निर्णायकों का चुनाव करना चाहिए तभी इसके निष्कर्ष विश्वसनीय और वैध हो सकते हैं।

फिर भी इसके द्वारा प्राप्त परिणामों में निम्न दोष पाये जाते हैं :

(i) निर्णायकों के मानसिक विकास और बौद्धिक स्तर पर प्रभाव।

(ii) लिंगभेद का प्रभाव तथा पुरुष मूल्यांकन में अधिक उदार होते हैं।

(iii) समलिंगीय प्रयोगों के प्रति मूल्यांकन में उदारता का प्रभाव।

(iv) माता-पिता द्वारा अपनी सन्तान का अति मूल्यांकन (Over rating) तथा अन्य श्रेष्ठ बालकों निम्न मूल्यांकन (Under rating) की प्रवृत्ति।

(v) कुछ निर्णायक मध्यमार्गीय दृष्टिकोण वाले होते हैं।

Scanned with CamScanner

सेमेस्टर परीक्षा प्रणाली
(SEMESTER EXAMINATION SYSTEM)

परीक्षा में गतिशीलता अधिकांशत: परीक्षा के आयोजन-काल एवं आयोजन-विधि एवं संचालन-प्रक्रिया पर निर्भर रहती है। सामान्यत: परीक्षा का आयोजन वार्षिक के अतिरिक्त अर्द्धवार्षिक, त्रैमासिक व मासिक या पाक्षिक होता है। बाह्य परीक्षायें पाठ्यक्रम के समाप्त हो जाने पर वार्षिक, द्विवार्षिक भी आयोजित की जाती हैं। कभी-कभी एवं कहीं-कहीं आन्तरिक परीक्षाओं का आयोजन पाठ्यवस्तु की इकाई समाप्त होने पर किया जाता है जिसे इकाई परीक्षा, जो कि सतत् मूल्यांकन प्रणाली का ही अंग होता है, कहते हैं।

बाह्य वार्षिक परीक्षा के मध्य अन्तराल एवं उनकी समन्वित पाठ्यक्रम के अध्यापनोत्तर शैक्षिक उपलब्धि की जाँच की त्रुटियों को दूर करने के उद्देश्य से 'सेमेस्टर' परीक्षा प्रणाली लागू की जाती है। सामान्यत: छात्र परीक्षा की तैयारी उसी समय शुरू करते हैं। जब परीक्षा करीब आती है और परिणामस्वरूप कुछ चुनी हुई विषय-वस्तु को ही तैयार करते हैं। ऐसी परिस्थिति में पाठ्य सामग्री का अध्ययन मात्र परीक्षा की दृष्टि से किया जाता है। न कि ज्ञानार्जन के लिए। साथ ही, छात्र अपना अधिकांश बहुमूल्य समय नष्ट किया करते हैं। अतएव समय का अधिकाधिक विद्या अध्ययन हेतु सदुपयोग एवं शिक्षण अधिगमों का निरन्तर एवं वास्तविक अर्जन हेतु सेमेस्टर परीक्षा प्रणाली का क्रियान्वयन किया गया है।

सेमेस्टर प्रणाली में इस तरह किसी विशेष उपाधि की प्राप्ति हेतु निर्दिष्ट पाठ्यक्रम या विषय-वस्तु यथाचित इकाईयों में बाँटी जाती है तथा उन इकाईयों का सुनियोजित अध्ययन, अध्यापन एवं परीक्षण हेतु उपयुक्त काल खण्ड का विभाजन भी किया जाता है। उदाहरणार्थ, दो वर्षों में पूरा किया जाने वाला स्नातकोत्तर उपाधि पाठ्यक्रम छ:-छ: महीनों के चार सेमेस्टरों में विभाजित कर दिया जाता है। इन चार सेमेस्टरों में अध्यापन हेतु चार पाठ्यक्रम जो सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक विषय-वस्तु होते हैं, पुन: इकाईयों में बाँट दिये जाते हैं। छ: महीने के सेमेस्टर की समाप्ति पर छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि की जाँच सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक विषय-वस्तु में ली जाती है जो बाह्य या आन्तरिक या सम्पूर्ण रूप से आन्तरिक परीक्षा द्वारा की जाती है। चारों सेमेस्टर की समाप्ति के अनन्तर चारों सेमेस्टरों में अर्जित शैक्षिक उपलब्धियों के योग के आधार पर छात्र को उपाधि प्रदान की जाती है।

इस सेमेस्टर परीक्षा प्रणाली में छात्र गहराई से निर्दिष्ट पाठ्यक्रम को आत्मविश्वास के साथ पढ़ सकता है तथा पूर्णता प्राप्त कर सकता है। चूँकि सेमेस्टरोपरान्त पाठ्यक्रम (इकाई) की समाप्ति पर परीक्षा अनिवार्य है, अतएव छात्र सम्पूर्ण सेमेस्टर भर एवं सम्पूर्ण चारों सेमेस्टरों में अध्ययन में रत रहते हैं एवं अनुशासनहीनता एवं अध्ययन के अतिरिक्त अन्य कार्यों हेतु उन्हें कम समय मिलता है। साथ ही साथ लगातार एक ही इकाई में गहन अध्ययन का अवसर मिलने के कारण अधिगम-अनुभव के अर्जन में छात्रों में न केवल आत्म-विश्वास बढ़ता है वरन् विषय-वस्तु में उनकी पकड़ मजबूत हो जाती है। सेमेस्टर प्रणाली की इन विशेषताओं के कारण आजकल अनेक विश्वविद्यालयों में विज्ञान की पढ़ाई सेमेस्टर प्रणाली द्वारा की जाती है।

परन्तु इसके अतिरिक्त सेमेस्टर प्रणाली के कुछ दोष भी हैं। सेमेस्टर प्रणाली में बाह्य परीक्षा तो उचित समय पर आयोजित करना तथा उचित समय पर शीघ्रातिशीघ्र परिणाम घोषित कर तुरन्त उन्हें अगले सेमेस्टर हेतु अग्रसर कर अपने आपमें एक प्रत्यक्ष समस्या है। यदि सभी परीक्षाएँ आन्तरिक हों, तो उस उपाधि की विश्वसनीयता को चुनौती दी जाती है। इसके अतिरिक्त लगातार अनेक सेमेस्टरों में निरन्तर जुटे रहने से छात्रों में उन्मुक्त विचारों की कमी आ सकती है जिसके परिणामस्वरूप उनका सर्वांगीण विकास अवरुद्ध हो सकता है।

Scanned with CamScanner

प्राश्निक बैंक
(QUESTION BANK)

विभिन्न परीक्षाओं में पूछे गये निबन्धात्मक प्रश्नों के विश्लेषण से यह विदित होता है कि परीक्षक अपनी विशिष्ट पसन्दगी व अभिरुचि के आधार पर प्रश्न-पत्रों में प्रश्नों का चयन करते हैं जिसके परिणामस्वरूप कुछ प्रश्नों की बार-बार आवृत्ति होती रहती है जिससे पाठ्यक्रम को विभिन्न वस्तुओं का न तो वास्तविक प्रतिनिधित्व होता है और न विस्तृत रूप से ही। इसके परिणामस्वरूप, छात्र परीक्षा हेतु कुछ विशिष्ट विषय वस्तुओं का ही अध्ययन करते हैं और शेष को महत्त्वहीन समझकर छोड़ देते हैं। इससे न केवल पाठ्यक्रम के अध्ययन का, वरन् विषय-वस्तुओं के परीक्षण का स्वरूप एवं सामन्जस्य असन्तुलित हो जाता है और शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होती।

सन्तुलित एवं समन्वित शिक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु विशिष्ट विषयों में शिक्षा के मूलभूत उद्देश्य के आधार पर पाठ्यक्रमों की रचना की जाती है और तदानुसार पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित की जाती हैं। इस प्रकार अध्ययन, अध्यापन एवं परीक्षण के लिये विषय-वस्तु के चुनाव हेतु मूलभूत उद्देश्य ही आधार बनता है। इस समान एवं एकरूप आधार के अनुकूल ही अध्यापक उन्हीं अधिगम अनुभवों को पढ़ाता है, छात्र उन्हीं अधिगम अनुभवों को पढ़ता है और परीक्षक उन्हीं अधिगम अनुभवों से प्रश्न पूछता है; और इस प्रकार अध्यापक, छात्र और परीक्षक तथा अध्ययन-अध्यापन एवं परीक्षण मात्र एक ही विषय-वस्तु (अधिगम अनुभवों) के आधार से संचालित होते हैं जिसके परिणामस्वरूप तीनों में पूर्ण सन्तुलन स्थापित रहता है।

वर्तमान परीक्षा प्रणाली के प्रमुख दोषों में से अध्ययन-अध्यापन एवं परीक्षक में असामन्यजस्य एवं असन्तुलन होना एक महत्त्वपूर्ण दोष है जिसके निवारण हेतु तथा अध्यापकों, परीक्षार्थियों एवं परीक्षकों को विषय-वस्तु के एक ही आधार पर प्रस्थित कर पारस्परिक सन्तुलन एवं समझ को बढ़ाकर शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य की प्राप्ति में योगदान देने हेतु प्राश्निक बैंकों (Question Bank) की योजना शुरू की गई है।

प्राश्निक बैंकों की योजना के तहत विभिन्न-पाठ्यक्रमों से विभिन्न प्रकार के अधिक से अधिक वैध प्रश्नों को एकत्रित कर उन्हें छात्रों, अध्यापकों एवं परीक्षार्थियों को यथोचित समय पर उपलब्ध कराना ताकि परीक्षार्थी एक निर्दिष्ट आधार पर परीक्षा की तैयारी कर सकें, अध्यापक निर्दिष्ट आधार पर बनाये गये विषय-वस्तु का अध्यापन कर सकें तथा परीक्षक निर्दिष्ट विषय-वस्तु पर ही प्रश्न पूछ सकें। इस प्रकार तीनों समान विषय-वस्तु के केन्द्र बिन्दु को आधार मानकर अपना-अपना कार्य सम्पादन करते हैं जिससे शिक्षा के तीनों सतहों, यथा—अध्ययन, अध्यापन एवं परीक्षण, की वस्तुनिष्ठता, विश्वसनीयता एवं वैधता बढ़ जाती है। प्राश्निक बैंक इस वस्तुनिष्ठ अध्ययन, अध्यापन एवं परीक्षण हेतु समान धरातल या केन्द्र बिन्दु प्रस्तुत करता है। चूँकि प्राश्निक बैंक में एक ही विषय वस्तु पर अनेक सम्भावित प्रश्न दिये रहते हैं, अतएव परीक्षार्थी, अध्यापक एवं परीक्षक को अपना विषय-वस्तु को सम्पादित करने में नया दृष्टिकोण एवं पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त होती है जिसके कारण विषय-वस्तु के सम्पादन में एकरूपता के अतिरिक्त विविधता भी पाई जाती है। प्राश्निक बैंक तो शिक्षाविदों के लिए शैक्षिक खजाना है जिसको जो चाहे जब चाहे जिस रूप में लूटना चाहे, लूट सकता है और विषय-वस्तु सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर सकता है। यह परीक्षार्थी को क्या पढ़ना, कितना पढ़ना तथा किस तरह पढ़ना-का रास्ता सुझाता है, अध्यापक को क्या पढ़ाना, कितना पढ़ाना, क्या नहीं पढ़ाना बताता है, तो परीक्षक को किस विषय पर क्या प्रश्न पूछना तथा कैसे प्रश्न पूछना, का तरीका बताता है। प्राश्निक बैंक इस प्रकार सम्भावित आदर्श प्रश्नों का एकत्रीकरण है जो अध्ययन, अध्यापन एवं परीक्षक को शैक्षिक दिशा प्रदान करता है। यह वह खजाना है जिसका सदुपयोग परीक्षार्थी, अध्यापक एवं परीक्षक जैसा चाहे, और अब चाहे अपनी सुविधा एवं इच्छानुसार कर सकता है।

Scanned with CamScanner

बाह्य एवं आन्तरिक परीक्षाओं में वैधानिकता से पूर्ण वस्तुनिष्ठ, विश्वसनीय एवं वैध प्रश्न ही पूछे जायें; ताकि परीक्षा की उपादेयता बनी रहे—इस बात को ध्यान में रखकर 'प्राश्निक बैंकों' की योजना कार्यान्वित की गई है।

प्राश्निक बैंकों में संलग्न प्रमुखत: तीन स्तर के शिक्षाविद् होते हैं :

(i) प्रथम वे शिक्षाविद् जो 'प्राश्निक बैंक' के व्यवस्थापक हैं तथा जो प्राश्निक बैंक में उपलब्ध प्रश्नों के व्यवस्थित रखने तथा उससे निरन्तर वृद्धि एवं विकास, परिष्कृत एवं परिमार्जन करवाने में संलग्न रहते हैं। सम्भवत: कम्प्यूटर की सहायता से प्राश्निक बैंकों की व्यवस्था में गति प्रदान होगी।

(ii) 'प्राश्निक बैंकों' से सम्बन्धित द्वितीय स्तर के वे शिक्षाविद् हैं जो प्रश्नों के निर्माण का तकनीकी ज्ञान रखते हैं। किस विषय-वस्तु में किस प्रकार के प्रश्न की रचना की जाय ताकि उस पद की वैधता सर्वाधिक हो तथा किस प्रकार के पदों के लिए किस प्रकार के सम्भावित उत्तर चाहिए, इस बात की तार्किक एवं तकनीकी ज्ञान प्रश्न-गढ़ने वाले शिक्षाविदों में होना आवश्यक है। प्रश्नों के निर्माण की सीमा, प्रश्नों के प्रकार की विविधता एवं निर्माण तक ही सीमित नहीं रहता। वैध प्रश्नों एवं पदों की उपयुक्तता तो उस प्रश्न के कठिनाई स्तर (Difficulty level) एवं विभेदन शक्ति (Discrimination power) पर आधारित रहता है जिसके लिए यह आवश्यक है कि सभी प्रश्नों को यथोचित प्रतिदर्श द्वारा हल करवाकर उनकी कठिनाई स्तर एवं विभेदन शक्ति ज्ञात करवाना चाहिए ताकि पदों की वैधता को चुनौती न दी जा सके। चूँकि परीक्षण के प्रश्न सापेक्षिक होते हैं और उनकी वैधता वहीं तक सीमित रहती है, जिस कार्य हेतु अथवा जिस समूह के लिए उनका निर्माण किया जाता है, इसलिए प्राश्निक बैंकों में उपलब्ध प्रश्नों की सर्वाधिक उपादेयता एवं सार्थकता तभी हो सकती है जब वैध प्रश्नों को उनके कठिनाई-स्तर एवं विभेदन शक्ति के साथ किसी निर्दिष्ट प्रतिदर्श के उपयोग हेतु संकलित कर रखा जाय।

(iii) प्राश्निक बैंकों के सुव्यवस्थित संचालन का सदुपयोग करने हेतु तृतीय स्तर पर वे शिक्षाविद् आते हैं जो प्रश्नों के किसी न किसी प्रकार उपयोग से सम्बन्धित रहते हैं। इस कोटि में परीक्षार्थी, अध्यापक एवं परीक्षक आते हैं जिनका मार्गदर्शन प्राश्निक बैंक में उपलब्ध प्रश्नों के स्वरूप एवं प्रकार, उनके विषय-वस्तु तथा उनके कठिनाई-स्तर द्वारा होता है। वस्तुत: प्राश्निक बैंकों के इन उपभोक्ताओं के प्रचुर ज्ञान एवं अनुभवों के आधार पर उन प्रश्नों एवं पदों में निरन्तर परिष्कार एवं परिमार्जन कर उन्हें कार्यिक वैधता (Functional validity) प्रदान की जा सकती है जो किसी प्रकार अस्पष्ट, अवैध एवं अकार्यिक हैं।

'प्राश्निक बैंक' के निर्माण से शिक्षा में रत छात्रों, अध्यापकों एवं परीक्षकों की जहाँ एक ओर प्रश्नों के निर्माण एवं विषय-वस्तु की एकरूपता परखने में सहायता प्राप्त हुई है, वहीं दूसरी ओर निर्भरता की भावना भी बढ़ी है जो प्रश्न निर्माण करने की उनकी संवेदनशीलता, सृजनशीलता, चिन्तन की क्षमता एवं प्रश्न गढ़ने के कौशल को कुंठित करता है। इससे निसन्देह परावलम्बन की भावना उन सभी शिक्षार्थियों एवं शिक्षाविदों में बढ़ेगी जो किंचित मात्र कभी-कभी आवश्यकता पड़ने पर कुछ प्रश्नों का निर्माण तो कर लेते थे। इसके विपरीत कुशल प्राश्निक कलाकारों का बाजार भाव भी बढ़ जायगा। प्राश्निक बैंक की योजना से उत्पन्न इस प्रकार मानवीय शक्ति में परालम्बन की भावना के प्रादुर्भाव की तुलना में आदर्श प्रश्नों की उपलब्धि से जो सूझ-बूझ एवं शैक्षिक-दिशा-ज्ञान प्राप्त होगा, संभवत: यह छात्रों, अध्यापकों एवं परीक्षकों को मार्गदर्शन देने एवं उन्हें निरन्तर क्रियाशील रखने तथा परीक्षा प्रणाली में सन्तुलन एवं अनुशासन स्थापित करने में अत्यन्त उपयोगी एवं लाभप्रद सिद्ध होगा।

Scanned with CamScanner

समूह के मध्यमान एवं मानक-विचलन के साथ-साथ जिस मानक प्राप्तांक में उसे परिवर्तित करना है उसका मानक मध्यमान एवं मानक-विचलन भी आवश्यक है।

सामान्यत: मूल-प्राप्तांक को मानक प्राप्तांक में बदलने हेतु निम्न सूत्र प्रयुक्त होता है–

$$\frac{X'-M'}{\sigma'}=\frac{X-M}{\sigma}$$

or $$\sigma(X'-M')=\sigma'(X-M)$$

or $$X'=\frac{\sigma'}{\sigma}(X-M)+M$$

जहाँ, X' = मानक प्राप्तांक

X = मूल प्राप्तांक

σ = मानक प्राप्तांक का मानक विचलन (यथा 10, T-प्राप्तांक में), एवं (समूह) मानक विचलन।

M' एवं M = मानक प्राप्तांक का मानक मध्यमान (यथा = 50, T–प्राप्तांक में) एवं समूह मध्यमान।

विभिन्न विषयों, विश्वविद्यालयों में मूल-प्राप्तांकों को उपरोक्त सूत्र के माध्यम से T–मानक प्राप्तांक में बदलने से अन्त: वैषयिक, एवं अन्त: विश्वविद्यालयीन परीक्षा के मूल प्राप्तांकों की पारस्परिक तुलना की जा सकती है जो अन्तर वैयक्तिक श्रेष्ठता का वास्तविक द्योतक है। यादृच्छिकरण, प्रसामान्य वितरण एवं कोटिक्रम विधि के प्रयोग से प्राप्तांकों का मानकीकरण करना अंक मापन (Scaling) विधि के नये प्रचलित रूप हैं।

(iii) अंक स्तरीकरण (Grading)—यादृच्छिकरण एवं अंक मापन की प्रक्रिया के अनन्तर में भी मापन में कुछ त्रुटियाँ रह जाती हैं जिन्हें कुछ सीमा तक कम करने हेतु प्राप्तांकों का उपयुक्त वर्ग-अन्तराल या स्तर में विभाजित करना आवश्यक हो जाता है। प्रत्येक वर्ग-अन्तराल (Grade) में कुछ क्रमिक प्राप्तांक रहते हैं।

परन्तु प्राप्तांक का यह संप्रत्यय कि प्राप्तांक की विश्वसनीयता त्रुटियों की सीमा पर अवलम्बित रहती है, इस बात को प्रगट करता है कि वास्तविक प्राप्तांक (True score) मूल प्राप्तांक से भिन्न हो सकता है। अतएव 59 एवं 60 प्राप्तांक या 34 एवं 35 प्राप्तांक में स्पष्टत: अन्तर स्थापित कर पाना अत्यन्त कठिन है चूँकि त्रुटि-चर (Error variance) की कल्पना से 59 प्राप्तांक भिन्न-भिन्न परीक्षक द्वारा अथवा परीक्षक-गत विचलन द्वारा 59 से कम या अधिक भी हो सकता है। इस प्रकार मूल-प्राप्तांक त्रुटि-चर के प्रभाव के परिणामस्वरूप एक-दूसरे पर आच्छादित होते रहते हैं और अपने वर्तमान अस्तित्त्व को खो सकते हैं। यही कारण है कि वास्तविक प्राप्तांक (True Score) की अज्ञानता के परिणामस्वरूप परिस्थितिजन्य प्रभावों मूल प्राप्तांकों का स्थानापन्न सम्भावित रहता है। इस प्रकार अंकन (Marking) को न केवल अंक-मापन (Scaling) से वरन् अंक स्तरीयकरण (Grading) के साथ सम्मिलित किया जाता है। **बैरो** (1971) का अंकीय-अंक स्तर जो 1 से 9 तक विस्तृत है, **दांडेकर** (1978) के अंकों के प्रसामान्य वितरण के संप्रत्यय पर आधारित है। इसी प्रकार **हिल** (1971) के द्वारा सुझाये गये नौ स्तरीय अंक-स्तर बैरो (1971) के नौ अंकीय या अक्षरीय अंक स्तर (Grades) का प्रयोग किया जाता है। अंकस्तर के प्रयोग से विशेषत: उन छात्रों को लाभ पहुँचता है, जो दो श्रेणी के किनारे पर प्रस्थित रहते हैं। इस प्रकार मूल प्राप्तांक को अर्थयुक्त बनाने के लिए उसे किसी मानक प्राप्तांक के मानक मध्यमान एवं मानक विचलन का प्रयोग कर उसका मानकीकरण (Standardization) कर मानक उपलब्धि परिवर्तित करना चाहिए। इस

प्रकार मानक प्राप्तांकों में अंक मापन (Scaling) प्रक्रिया द्वारा परिवर्तित करने के अनन्तर उसे उपयुक्त अंक-स्तर (Grade) में वर्गीकृत कर उसे अर्थयुक्त बनाना कहीं अधिक श्रेयस्कर है। इस पद्धति से एक ओर अनेक त्रुटियों का निराकरण भी हो जाता है, साथ ही साथ मानकीकृत मानक प्राप्तांक के आधार पर उसकी अर्थयुक्त विवेचना भी की जा सकती है। अंक मापन (Scaling) एवं अंक-स्तरण (Grading) की प्रक्रिया के मूल प्राप्तांक का न केवल मानकीकरण हो जाता है, वरन् आच्छादित प्राप्तांक की समस्या भी दूर हो जाती है और एक ठोस, विश्वसनीय आधार पर मानक प्राप्तांक का वर्गगत (Within the grade) विवेचन अंक-स्तरण (Grading) के आधार पर किया जा सकता है जो कहीं अधिक अर्थयुक्त एवं वैध है।

दांडेकर (1968) के द्वारा प्रयुक्त प्राप्तांक को अंक-स्तरण में परिवर्तन के सारांश निम्न हैं–

अंकीय-वर्गीकरण

प्राप्तांक प्रसरण	दांडेकर के प्रायोगिक प्रमाणों पर आधारित प्राप्तांक के प्रसामान्य विवरण	अंकीय वर्गीकरण		हिल का अक्षर	विवरण
		बैरो (1971)	हिल (1972)	वर्गीकरण (1972)	
80 एवं ऊपर	2	1	9	A_1	सर्वोत्तम
79-79	8	2	8	A_2	उत्तम
63-69	10	3	7	B_1	सामान्य से ऊपर
59-62	14	4	6	B_2	
55-58	16	5	5	C_1	
50-54	20	6	4	C_2	सामान्य
45-49	10	7	3	D_1	सामान्य से निम्न
40-44	10	8	2	D_2	उत्तीर्ण
39 एवं निम्न	10	9	1	F	अनुत्तीर्ण।

उच्च शिक्षा अनुदान आयोग (1976-77) से निम्न अंक-स्तरण (Garding) पद्धति को प्रतिपादित किया। सामान्यत: शैक्षिक उपलब्धि को अर्थयुक्त हेतु अग्रलिखित अंकीय या अक्षरीय अंक स्तरण (Number या letter grading) का प्रयोग किया जा सकता है :

समानता स्तर

अक्षर-वर्गान्तर	वर्ग-बिन्दु	प्रतिशत-प्राप्तांक
O	6	75 एवं ऊपर
A	5	65-74
B	4	55-64
C	3	45-54
D	2	35-44
E	1	25-34
F	0	0-24

Scanned with CamScanner

यद्यपि विभिन्न प्रकार के अंक-स्तरण (Grading) पद्धति प्रस्तावित किये गये हैं, परन्तु सरलता की दृष्टि से पाँच बिन्दु मापनी, सात-बिन्दु मापनी, नौ बिन्दु मापनी या ग्यारह बिन्दु, एक सौ बिन्दु मापनी का प्रयोग किया जाता है; परन्तु मापनी जितनी विस्तृत होती है, परीक्षक के उत्तर-पुस्तिकाओं के जाँच में एवं अधिक से अधिक विश्वसनीय अंक प्रदान करने में उतनी ही अधिक विभेदन शक्ति (Discrimination power) की आवश्यकता होती है। यद्यपि दो परीक्षार्थी किसी परीक्षा में एक-सा अंक प्राप्त किये या दोनों का शून्य अंक प्राप्त हुआ, फिर भी दोनों परीक्षार्थियों द्वारा अर्जित प्राप्तांक यद्यपि गणित की दृष्टि से समान प्रतीत होता है परन्तु मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वे समान नहीं हो सकेंगे। उनमें से एक शून्य वास्तविक शून्य (True zero) हो सकता है परन्तु दूसरा शून्य प्रात्यक्षिक शून्य (Apparent zero) हो सकता है। ऐसा छात्र जिसने कभी उस विषय-वस्तु को नहीं पढ़ा है, उसे शून्य अंक प्राप्त कर लेने पर वास्तविक शून्य की संज्ञा दी जा सकती है, परन्तु जिस छात्र ने सम्पूर्ण वर्ष पढ़ाई की है और इसके बावजूद भी शून्य अंक अर्जित किया है, तो वह प्राप्यक्षिक शून्य ही कहलायेगा। इस प्रकार दो छात्रों द्वारा समान प्राप्तांक भिन्न-भिन्न अर्थ स्पष्ट करते हैं। अंकन, अंक-मापन एवं अंक-स्तरण की प्रक्रिया जो उपरोक्त दी गई है उससे परीक्षा की विश्वसनीयता कुछ सीमा तक अवश्य प्रस्थापित होती है।

परीक्षा में कम्प्यूटर का प्रयोग
(USE OF COMPUTER IN EXAMINATION)

मानव की सीमित कार्य-शक्ति तथा विज्ञान एवं तकनीकी शोधों में नित्य प्रतिज्ञान एवं संचार व्यवस्था की विस्फोटक स्थिति को दृष्टिगोचर कर परीक्षा में पद्धति-चिन्तन में कम्प्यूटर के सतत् उपयोग को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। परीक्षा कार्य में गतिशीलता लाने एवं मानवीय त्रुटियों में कुछ नियन्त्रण करने हेतु कम्प्यूटर का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक प्रतीत होता है।

शैक्षिक उपलब्धि को आँकने में कम्प्यूटर के निम्न दो प्रमुख उपयोग हो सकते हैं :

(1) विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु परीक्षण-पदों एवं अभ्यास के प्रश्नों के निर्माण में सहायता करना।

(2) परीक्षा की सामग्री, प्राप्तांकों की गणना एवं परीक्षण पदों एवं पद-विश्लेषण प्रक्रिया में सहायता पहुँचाना।

(अ) प्रथम उपयोग के अनुसार—कम्प्यूटर की सहायता से प्रश्नों को संग्रहित कर पर्याप्त अवधि के लिए स्थायीकरण किया जा सकता है और समयानुसार आवश्यकता पड़ने पर उन्हें पुनः प्रत्यावहन का उपयोग में लाया जा सकता है। कम्प्यूटर प्राश्निक बैंकों को स्थायी अथवा अस्थायी रूप से संग्रहित रखकर 'बड़े-बैंक' का काम कर सकता है। इससे परीक्षण पद एवं अभ्यास प्रश्न भी प्रकाशित किये जा सकते हैं।

(ब) कम्प्यूटर की सहायता से प्रश्नों का वर्गीकरण विभिन्न विषय वस्तु अथवा निश्चित सांख्यिकी विशेषता के अनुसार किया जा सकता है। इस प्रकार की व्यवस्था से निर्दिष्ट शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उपयुक्त प्रश्नों का निर्माण स्वाभाविक रूप से किया जा सकता है।

(स) कम्प्यूटर की सहायता से प्रश्न एवं पदों का निर्माण बिना किसी कष्ट के किया जा सकता है।

कम्प्यूटर इस प्रकार जहाँ एक ओर प्रश्नों एवं पदों के निर्माण, परिष्करण, परिमार्जन एवं संग्रहण एवं प्रत्यावहन में सहायता पहुँचाता है, वहीं दूसरी ओर वह परीक्षा की अपार वस्तु-सामग्री, प्राप्तांकों, पद-विश्लेषण एवं सांख्यिकी गणना में सहायता पहुँचाकर परीक्षा कार्य को न केवल गति देता है वरन् उसमें विश्वसनीयता, शुद्धता, विश्वास, वैधता एवं वस्तुनिष्ठता प्रदान कर उसकी वैज्ञानिकता एवं साख (Creditiflity) को भी बढ़ाता है।

व्ही. नटराज (1982) ने परीक्षा में कम्प्यूटर के निम्न सात प्रयोग स्पष्ट किये हैं :

(1) परीक्षा से सम्बन्धित शोधों में।

(2) परीक्षा के प्रश्नों एवं पदों के संग्रहण एवं प्रत्यावहन में।

(3) परीक्षण पदों में निर्माण एवं पद विश्लेषण में।

(4) प्रतिदर्श रहित पद-विश्लेषण में।

(5) प्रश्नों एवं पदों को उत्पन्न करने में।

(6) कम्प्यूटर की सहायता से आयोजित परीक्षण में।

(7) कम्प्यूटर की सहायता से अध्यापन।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा संचालित परीक्षा सुधार कार्यक्रम की रिपोर्ट में व्ही. नटराज (1982) ने यह स्पष्ट किया है कि आगामी वर्षों में देश के प्रायः अधिकांश विश्वविद्यालय में न केवल परीक्षा कार्यों का ही सम्पादन कम्प्यूटर के द्वारा होगा, वरन् अध्यापन, परीक्षा सम्बन्धी अनुसन्धान एवं परीक्षा-प्रश्नों एवं पदों का निर्माण, संग्रहण, प्रत्यावहन एवं परिष्करण की कम्प्यूटर के द्वारा किया जायेगा। इस प्रकार भावी शिक्षा की विभिन्न प्रक्रियाओं में कम्प्यूटर का अनुपम, अनूठा एवं निरन्तर प्रयोग एवं उपयोग सम्भावित है।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. प्रचलित परीक्षा प्रणाली के गुण-दोषों का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. सेमेस्टर परीक्षा प्रणाली की अवधारणा को स्पष्ट कीजिए।
2. अंक स्तरीकरण से क्या आशय है? स्पष्ट कीजिए।
3. परीक्षा में कम्प्यूटर को किस प्रकार उपयोग में लाया जा सकता है, समझाइए। ❑❑

Scanned with CamScanner

2.4 स्व-आकलन तथा प्रतिपुष्टि आकलन
(Self-Assessment and Feedback Assessment)

26. स्व-आकलन तथा प्रतिपुष्टि पर एक टिप्पणी लिखिए।
(Write note on self-assesment and feedback.)

उत्तर—स्व-आकलन वह आकलन होता है, जिसमें विद्यार्थी स्वयं अपना निरीक्षण करता है। जब कक्षा से पहले पढ़ाए गए विषय के अनुप्रयोग पर शिक्षक द्वारा कुछ गृहकार्य दिया जाता है तो विद्यार्थी द्वारा स्व-मूल्यांकन का अवसर मिलता है। इससे विद्यार्थी को यह पता चलता है कि विद्यालय में पढ़ाए गए नए सम्प्रत्ययों को कितनी अच्छी तरह से समझाया गया है। स्व-मूल्यांकन के लिए प्रश्नावली से मिलती-जुलती परिसूची का प्रयोग किया जाता है।

निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए। यदि आपका उत्तर 'हाँ' हो तो प्रश्न के सामने 'हाँ' को, नहीं हो तो 'ना' को गोले से घेर दीजिए। प्रश्नों को ध्यान से पढ़िये।

1. क्या आपको किसी अपरिचित से बातें करने में कठिनाई होती है? हाँ/ना
2. क्या आपकी भावनाएँ जल्दी दुःख जाती हैं? हाँ/ना
3. क्या आपको झेंपने से परेशानी होती है? हाँ/ना
4. क्या आप आसानी से हिम्मत हार जाते हैं? हाँ/ना
5. क्या आपको मित्र बनाने में कठिनाई होती है? हाँ/ना
6. क्या आप अकसर अपने को परेशान पाते हैं? हाँ/ना
7. क्या आपको अपने ऊपर भरोसा है? हाँ/ना
8. क्या आप अकसर अकेलेपन का अनुभव करते हैं? हाँ/ना

Scanned with CamScanner

9. क्या बड़ों के सामने आपको अपना ध्यान आ जाता है? हाँ/ना

10. आपको साधारणतया अपनी योग्यता पर विश्वास रहता है? हाँ/ना

इस प्रकार प्रश्नों का उत्तर देकर व्यक्ति स्वयं निरीक्षण कर सकता है।

स्व-मूल्यांकन के परिणामों से छात्रों को विभिन्न के सबल तथा निर्बल पक्षों की जानकारी मिलती है। इससे छात्रों को प्रतिपुष्टि मिलती है। इससे उन्हें किसी विषय में अपनी प्रगति की पर्याप्त जानकारी मिलती है। साथ ही उन्हें अपने अध्ययन की आदतों, रुचियों, घर के वातावरण आदि जिनका प्रभाव उनके निष्पादन पर पड़ता है, उनकी उपयुक्तता का पता चलता है।

शिक्षण की अन्तःक्रियात्मक अवस्था में प्रतिपुष्टि व पुनर्बलन महत्त्वपूर्ण क्रियाएं हैं। ये वे परिस्थितियां हैं जो विशेष प्रतिक्रिया की सम्भावना को बढ़ा देती हैं। प्रतिपुष्टि से तात्पर्य है कि विद्यार्थियों को उनके निष्पादन (Performances) के बारे में सूचना प्रदान करना। ताकि उनके व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाए जा सकें। उदाहरण के लिए अध्यापक प्रश्न पूछता है बच्चे उनका उत्तर देते हैं और उसके बाद अध्यापक यह तुरंत बता देते हैं कि वह उत्तर सही है या गलत। विद्यार्थी को यह पता लग जाता है कि उसका उत्तर सही है या गलत, शिक्षण प्रक्रिया में प्रतिपुष्टि प्रदान करना कहलाता है। प्रतिपुष्टि को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है : शाब्दिक व अशाब्दिक। जब अध्यापक भाषा का प्रयोग करके विद्यार्थी को यह बताता है कि उसका उत्तर सही है या गलत है तो यह शाब्दिक प्रतिपुष्टि का उदाहरण है और अब वह संकेत, मुखाकृति व भाव भंगिमा के द्वारा उत्तर के सही या गलत होने की पुष्टि करता है यह अशाब्दिक प्रतिपुष्टि का उदाहरण है।

अध्यापक प्रतिपुष्टि के साथ पुनर्बलन का भी प्रयोग करता है। पुनर्बलन दो प्रकार का होता है : (i) धनात्मक पुनर्बलन (Positive Reinforcement) की उपस्थिति। इसमें अपेक्षित प्रतिक्रिया के होने की सम्भावना बढ़ जाती है, जैसे प्रशंसा, पुरस्कार आदि के द्वारा। (ii) अध्यात्मक पुनर्बलन की परिस्थिति। इसमें अवांछनीय प्रतिक्रिया (व्यवहार) के पुनः होने की सम्भावना कम हो जाती है, जैसे : डांटना, दण्ड आदि के द्वारा।

शिक्षण की क्रियाओं का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन लाना है। इसलिए प्रतिपुष्टि व पुनर्बलन की समुचित युक्तियों के प्रयोग से विद्यार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाए जा सकते हैं।

शिक्षण की अन्तःक्रियात्मक अवस्था में सम्पन्न होने वाली उपरोक्त सातों क्रियाएं एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं और इसी कारण ये शिक्षण व्यवहार का क्रमिक रूप (Sequential Pattern) उपस्थित करती है।

छात्रों को प्रतिपुष्टि प्रदान करना *(Feed Back to Students)*

रचनात्मक मूल्यांकन के आधार पर जहाँ विभिन्न प्रकार के उपलब्ध परीक्षण लगातार समय अंतराल पर दिए जाते हैं। हम व्यक्ति विशेष की क्षीणता व सामर्थ्य का क्षेत्र ज्ञात कर सकते हैं और उसे सुधार के लिए आवश्यक सुझाव दे सकते हैं।

उदाहरण के तौर पर :

1. यदि एक छात्र विज्ञान विषय में 45 अंक प्राप्त करता है, शिक्षक उसे मध्यम छात्र सोचेगा, परंतु यदि शिक्षक गहराई से सोचेगा तो उसे ज्ञात होगा कि कक्षा में विज्ञान विषय में अधिकतम अंक 55 और न्यूनतम अंक 10 हैं। इसमें पहले वाले परीक्षण में छात्र ने 35 अंक प्राप्त किए हैं, तो शिक्षक को अपनी धारणा बदलनी पड़ेगी। वह मानेगा कि छात्र एक अच्छा छात्र है और प्रगति कर रहा है।
2. यदि एक छात्र के विज्ञान में 80 तथा गणित में 40 अंक हैं। इसका अर्थ है कि विज्ञान में अत्युत्तम है और गणित में कमजोर है, परंतु यदि अध्यापक छात्र के अंकों का मिलान कक्षा के अंकों से करे, तो वह गणित में उच्चतम अंक 50 हैं तथा न्यूनतम प्राप्तांक 6 हैं तो उसे ज्ञात होगा कि छात्र के विषय में उसकी धारणा गलत है तथा वह उसे एक बहुत अच्छा छात्र मानेगा।

शिक्षक को दो रेखाचित्रों (चार्ट) जिन्हें निदानात्मक परीक्षण रेखाचित्र कहते हैं की रचना करनी चाहिए।

1. छात्र त्रुटि चार्ट : शिक्षक प्रत्येक प्रकरण पर ठीक (✓) या गलत (×) का चिह्न लगाएँ। वह निम्न आकार में वास्तविक त्रुटि का वर्णन करें–

Scanned with CamScanner

छात्र त्रुटि चार्ट

छात्र का नाम..... कक्षा ..... विषय .....

परीक्षण का नाम.....

प्रकरण संख्या.....सत्य या असत्य.....यदि असत्य तो वास्तविक त्रुटि

1.

2.

3.

4.

2. छात्र प्रकरण चार्ट : सभी उत्तर पुस्तिकाओं या उत्तर लेखों को अंकित करने के पश्चात् शिक्षक निम्न आकार में "छात्र प्रकरण चार्ट" बनाता है :

छात्र प्रकरण चार्ट

कक्षा.....विषय.....परीक्षण का नाम.....

क्रम सं..... छात्र का नाम.....

1.

2.

3.

4.

5.

6.

छात्र का नाम चार्ट में योग्यता के क्रम में लिखें सबसे ज्यादा अंक प्राप्त करने वाले छात्र को सबसे ऊपर रखें। प्रत्येक छात्र के नाम के सामने सत्य तथा असत्य उत्तरों को दो अलग-अलग चिह्नों क्रमशः (✓) तथा (×) से दर्शायें। इस चार्ट के अवलोकन से विशिष्ट प्रकरण का असत्य उत्तर देने वाले छात्रों के समूह को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त किया जा सकता है।

शिक्षक के लिए अगला कदम यह होना चाहिए कि वह छात्र की विशिष्ट गलती के लिए उस छात्र के "छात्र त्रुटि चार्ट" का अवलोकन करें।

इन सूचनाओं से सज्जित शिक्षक पुनर्निवेश प्राप्त कर सकता है तथा प्रतिकारक क्रियाओं को लागू कर सकता है। ये क्रियायें निम्न में से एक या अधिक हो सकती हैं।

प्रतिकार या उपचार

1. शिक्षक से व्यक्तिगत परामर्श : जब शिक्षक यह जान जाएगा कि की गई गलती का कारण लापरवाही है या भ्रान्ति, तो छात्र को गलती ठीक करने का अवसर प्रदान किया जा सकता है।

कुछ अवस्थाओं में गलती का कारण कुव्यवस्था या कुछ भावात्मक समस्या हो सकती है। इसका उपचार व्यक्तिगत परामर्श से किया जा सकता है। किसी-किसी व्यक्ति विशेष को मनोवैज्ञानिक चिकित्सालय के लिए निर्दिष्ट किया जा सकता है।

2. प्रतिकारी अभ्यास और दूसरी रणनीति : प्रतिकारी अभ्यास प्रदत्त करके शिक्षक छात्र की सहायता कर सकता है। प्रतिकारी अभ्यास, मौखिक ड्रिल, देखरेख में लिखित अभ्यास, पुस्तकालय अध्ययन, शिक्षक के समूह में आपसी सहायता, पूर्व योजित सामग्री से स्वयं अधिगम हो सकते हैं।

दृश्य-श्रव्य सामग्री, प्रयोगों का प्रदर्शन अथवा अपनी देख-रेख में छात्रों को वैज्ञानिक क्रियाओं को करने देने की अनुमति देना आदि के रूप में हो सकता है।

अतः रचनात्मक मूल्यांकन छात्रों को उनकी गलतियों या कठिनाइयों का पता लगाकर उपकारी पुनर्निदेशन प्रदान करता है। यह छात्र को इस विचार के प्रति सूचना प्रदान करता है कि उसे अभी और सीखने या दोहराने की आवश्यकता है।

Scanned with CamScanner

शिक्षक के लिए प्रतिपुष्टि *(Feed Back to Teachers)*

छात्र के द्वारा की गई गलतियों के विश्लेषण का उपयोग उन तथ्यों, धारणाओं, सिद्धांतों आदि की पहचान में किया जा सकता है, जिनके प्रति छात्र को कठिनाइयाँ हैं। यदि कक्षा में अधिकतर छात्र किसी धारणा का उत्तर देने के योग्य नहीं हैं, तो यह शिक्षण विधि या शिक्षण सामग्री की कमी को दर्शाती है। कुछ अवस्थाओं में गलती छात्रों के द्वारा ही की जाती है। इन दोनों ही अवस्थाओं में शिक्षक द्वारा निम्न उपचारिक उपायों को प्रयोग में लाया जा सकता है :

1. यदि किसी विशिष्ट धारणा के लिए कक्षा में अधिकतर छात्रों की उपलब्धि निम्न स्तर की है तो शिक्षक उस धारणा को दोबारा पढ़ाने की कोशिश कर सकता है।
2. यदि किसी धारणा को समझने में कुछ ही छात्र असमर्थ हैं, तो वे छात्र शिक्षक की सहायता ले सकते हैं या कक्षा में दूसरे योग्य छात्रों की सहायता प्राप्त कर सकते हैं।
3. शिक्षक के द्वारा रचनात्मक मूल्यांकन का उपयोग गुण नियंत्रण करने के लिए किया जा सकता है।
4. यदि विषय-वस्तु और उद्देश्य समरूप हैं तो शिक्षक एक वर्ष के कार्य को दूसरे वर्ष के कार्य से तुलना कर सकता है। इस अवस्था में एक वर्ष से दूसरे वर्ष में छात्र बदल जाते हैं, परंतु फिर भी सामान्य मूल्यांकन व्यापक छवि प्रस्तुत करेगा।
5. शिक्षक अपने ज्ञान व शिक्षण विधि को उन्नत कर सकता है।
6. कम से कम 5 वर्ष में एक बार शिक्षक के लिए अन्तःसेवा परीक्षण कार्यक्रम आयोजित कर सकते हैं।
7. शिक्षण संस्थान के मुखिया को शिक्षण की गुणवत्ता का परीक्षण करना चाहिए और शिक्षक की जब उसे जरूरत हो मदद करनी चाहिए।

◆◆◆

Scanned with CamScanner

खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था *(Open Book Examination System)*

खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था वह व्यवस्था है, जिसमें परीक्षार्थी को प्रश्नों के उत्तर देते समय अपनी पाठ्य-पुस्तकों, नोट्स तथा दूसरी पाठ्य-सामग्री से परामर्श करने की आज्ञा दी जाती है। खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था में समस्या-समाधान तथा आलोचनात्मक चिंतन के कौशलों की जांच की जाती है। खुली पुस्तक परीक्षा में परीक्षार्थी को शब्द-कोष, लोगरिथम टेबल आदि के प्रयोग की भी इजाजत होती है।

खुली पुस्तक परीक्षा का उद्देश्य सूचना तथा ज्ञान को ढूंढ़ना तथा उसका प्रयोग करने की योग्यता को जांचना है।

खुली पुस्तक परीक्षा परीक्षार्थी की याददाश्त का परीक्षण नहीं करती है। यह परीक्षा समस्या-समाधान के लिए सूचना को प्राप्त करना तथा उसको प्रयोग करने की योजना का परीक्षण करना है।

खुली पुस्तक परीक्षा की संरचना (Strcuture of Open Book Examination)-खुली पुस्तक परीक्षा की व्यवस्था में अनेक तरीके हैं–

1. परीक्षा के दौरान परीक्षार्थी को पाठ्य-पुस्तकें, परीक्षा नोट्स तथा अनेक संसाधनों तथा संदर्भों के प्रयोग करने की आज्ञा होती है।
2. परीक्षार्थियों को परीक्षा से पहले ही प्रश्न उपलब्ध करवा दिए जाते हैं और इस प्रकार परीक्षार्थी पहले से ही तैयार संसाधनों का प्रयोग परीक्षा में कर सकते हैं।
3. दूसरे प्रारूप में परीक्षार्थियों को प्रश्न पत्र घर पर ले जाने के लिए दे दिए जाते हैं। ये प्रश्न निबंधात्मक, लघूत्तरात्मक तथा बहु-विकल्पीय प्रश्न हो सकते हैं। परीक्षार्थियों को निश्चित अवधि के भीतर परीक्षा पेपरों को लौटाना होता है।

खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था के लाभ (Advantages of Open Book Examination)-खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था के लाभ निम्न हैं–

1. खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था में परीक्षार्थी को सामग्री रटने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। उन्हें तथ्यों तथा आकृतियों तथा पुस्तकों को परीक्षा में प्रयोग करने की आज्ञा होती है।
2. इससे विद्यार्थियों में समस्यात्मक समाधान के लिए आलोचनात्मक चिंतन का विकास होता है।
3. इससे बच्चों में बोध तथा संश्लेषणात्मक कौशलों का विकास होता है, क्योंकि इसमें विद्यार्थियों को पाठ्य-पुस्तक तथा अन्य अध्ययन सामग्री की परीक्षा के लिए उसे कम या संक्षिप्त करना पड़ता है।
4. इससे बच्चों में सूचना खोजने से संबंधित कौशलों का विकास होता है। जब वे पुस्तकों तथा अन्य संसाधनों से आवश्यक सूचना को इकट्ठा करते हैं।

◆◆◆

Scanned with CamScanner

9. परीक्षा में लचीलापन का क्या अर्थ है? माँग पर परीक्षा पर एक टिप्पणी लिखिए।

अथवा

परीक्षा में लचीलापन तथा मांग पर परीक्षा पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर–परीक्षा में लचीलापन का अर्थ है–परीक्षा में कठोर नियमों के स्थान पर उनमें लचीलापन लाना। विभिन्न अधिगमकर्ता अलग-अलग तरीके से सीखते हैं। इसलिए मूल्यांकन के भी विभिन्न माध्यमों का होना अनिवार्य है। मौखिक परीक्षा तथा सामूहिक कार्य को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए। खुली पुस्तक परीक्षा तथा मांग पर परीक्षा (Exam on Demand) को भी विद्यालय बोर्डों द्वारा शुरू किया गया है।

सभी के लिए एक जैसी परीक्षा (One Exams fits All) छात्र केन्द्रित परीक्षा नहीं है, इसलिए परीक्षा में लचीलापन अत्यंत आवश्यक है।

भारत में खुले विद्यालयों तथा खुले विश्वविद्यालयों में परीक्षा में लचीलापन शुरू किया गया है। विभिन्न मुक्त विद्यालय तथा मुक्त विश्वविद्यालय अपने ढंग से मूल्यांकन कार्य करते हैं। इनकी मूल्यांकन प्रक्रिया औपचारिक शिक्षा से भिन्न होती है। इनमें छात्र को एक बार में सभी विषयों में उत्तीर्ण होना आवश्यक नहीं है। हरियाणा खुले विद्यालय द्वारा अपनाई गई मूल्यांकन प्रक्रिया की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

1. **अंक संचय प्रणाली**–छात्र एक-एक करके कई बार में परीक्षा पास कर सकता है। इसके अंकों का संचय होता रहता है। सब विषयों में पास होने पर उसे उत्तीर्ण घोषित कर दिया जाता है।
2. **क्रेडिट ट्रांसफर नीति**–इस नीति के अनुसार किसी भी विद्यालय बोर्ड से असफल परीक्षार्थी को खुले विद्यालय में दाखिला दिया जाता है। परीक्षार्थी को केवल उन्हीं विषयों की परीक्षा देनी होती है, जिनमें वे असफल होते हैं। जिन विषयों में छात्र पहले से ही पास होता है, उन विषयों की दोबारा परीक्षा नहीं देनी पड़ती।

मांग पर परीक्षा (Exam on Demand) परीक्षा में लचीलापन लाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (National Institute of Open School) तथा अनेक मुक्त विद्यालयों में मांग पर परीक्षा शुरू की है। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान परीक्षा में लचीलापन लाने के लिए 2003 से 'मांग पर परीक्षा' पर कार्य कर रहा है। माँग पर परीक्षा का नया सम्प्रत्यय खुली तथा दूरस्थ शिक्षा में लचीलापन लाने का महत्वपूर्ण कदम है।

'मांग पर परीक्षा' के अनुसार विद्यार्थी जब यह महसूस करे कि वह परीक्षा के लिए तैयार है तो वह परीक्षा केन्द्र पर आकर परीक्षा दे सकता है। राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान में माध्यमिक स्तर पर 2003 में तथा वरिष्ठ माध्यमिक स्तर पर 2007 में 'मांग पर परीक्षा' शुरू की गई है।

मांग पर परीक्षा के लिए प्रश्न-पत्र विषय के पेपर प्रारूप तथा ब्लू-प्रिंट पर आधारित पहले से ही तैयार प्रश्न बैंक से कम्प्यूटर द्वारा निकाला जाता है। यह प्रश्न पत्र कठिनाई के स्तर के अनुसार निश्चित किया जाता है। मांग पर परीक्षा में बच्चों के अधिगम उद्देश्यों को जांचने के लिए ज्ञान, समझ, प्रयोग तथा कौशलों की परीक्षा ली जाती है।

परीक्षा में लचीलापन तथा मांग पर परीक्षा के लाभ–

1. मांग पर परीक्षा में परीक्षार्थी जब परीक्षा देता है जब वह परीक्षा देने के लिए तैयार होता है। तैयारी विद्यार्थी पर निर्भर करती है, न कि समस्या पर।
2. इससे बच्चों में परीक्षा से संबंधित तनाव कम हो जाता है।
3. इससे परीक्षा में असफल होने के भय से मुक्ति मिलती है।
4. परीक्षा का परिणाम अति शीघ्र प्राप्त होता है।
5. प्रत्येक परीक्षार्थी के लिए उनके कठिनाई स्तर के अनुसार पेपर तैयार किया जाता है।

Scanned with CamScanner

परीक्षा में लचीलापन लाने के लिए विभिन्न शिक्षा आयोगों के सुझाव

विभिन्न शिक्षा आयोगों ने पूर्व परीक्षा प्रणाली में लचीलापन लाने के लिए निम्नलिखित सुझाव दिए हैं–

1. **परीक्षाओं की संख्या कम (Number of Examinations should be Less)**– बाह्य परीक्षाएं एक वर्ष में एक बार ही ली जाएं और लिखित परीक्षाओं में निबंधात्मक प्रश्न कम, लघूत्तरात्मक और वस्तुनिष्ठ प्रश्न अधिक होने चाहिएं, जिससे मूल्यांकन सही प्रमाणित हो सके।
2. **आन्तरिक परीक्षाओं का महत्त्व (Importance should be given to Internal Examination)**–विद्यालयों, संस्थाओं में पाठ्यक्रम को विभागों में बांटकर समय-समय पर आंतरिक परीक्षाएं लेकर विद्यालयों में परीक्षाओं और अन्य शिक्षण संबंधी गतिविधियों का रिकार्ड रखा जाए, उसे वार्षिक अन्तिम परीक्षा के साथ जोड़कर परिणाम घोषित किया जाए।
3. **विद्यार्थियों का दैनिक, साप्ताहिक शिक्षण क्रियाओं का रिकॉर्ड रखा जाए (Records of the Students should be kept in School)**–विद्यालयों में विद्यार्थियों की दैनिक उपस्थिति, दैनिक शिक्षण गतिविधियों और समय-समय पर शिक्षा संबंधी क्रियाओं का रिकॉर्ड रखा जाए, जिसे वार्षिक मूल्यांकन में जोड़कर, सहगामी क्रियाओं में रुचि लेने के लिए प्रेरित किया जाए।
4. **मौखिक परीक्षाओं का महत्त्व (Importance of Oral Examination)**–अध्यापक और विद्यार्थी एक-दूसरे के सम्पर्क में होते हैं। अध्यापक को विद्यार्थी की रुचि, इच्छाशक्ति, व्यवहार, चरित्र, श्रद्धा भाव का पता रहता है। उसी के साथ-साथ मौखिक परीक्षाएं लेकर स्कूल प्रगति रिकॉर्ड प्रत्येक विद्यार्थी का अलग-अलग रखा जाए। मौखिक परीक्षाओं के अंकों को वार्षिक तथा अन्तिम परीक्षाफल में योग किया जाना चाहिए।
5. **आंशिक परीक्षा प्रणाली का प्रावधान (Provision of Compartment (Reapear) Examination)**–विद्यार्थी किसी भी कारण से परीक्षा में असफल रह जाता है, तो उसे वर्ष के बीच में Compartment अंशकालीन परीक्षा देने का प्रावधान होना चाहिए, जिससे विद्यार्थी का पूरा वर्ष बर्बाद न हो। बल्कि परीक्षा की तैयारी करके वर्ष के मध्य में सभी विषयों में उत्तीर्ण घोषित किया जा सके।
6. **अंक सुधार (Improvement of Marks)**–विद्यार्थी, बीमारी या अन्य कारणों से कम अंक ले पाता है तो उसे वार्षिक परीक्षा से पूर्व, वर्ष के बीच में या वार्षिक परीक्षा के साथ पिछली परीक्षा के किसी विषय की अंक सुधार की परीक्षा देने का प्रावधान होना चाहिए।
7. **लिखित परीक्षाओं में सुधार (Improvement in Written Examination)**– बालक के चरित्र, व्यवहार, रुचि और ललित कलाओं का लिखित परीक्षा से सही मूल्यांकन नहीं होता, इसलिए लिखित परीक्षा की अपेक्षा मौखिक एवं प्रायोगिक मूल्यांकन करना चाहिए।
8. वस्तुनिष्ठ प्रश्न और लघूत्तरात्मक प्रश्नों की संख्या प्रश्न-पत्रों में अधिक दी जाए ताकि मूल्यांकन सही एवं प्रमाणित हो।
9. **परीक्षकों की तकनीकी प्रशिक्षण देना (Increasing the Technical Tranining of the the Examiners)**–मूल्यांकन में समानता बनाए रखने के लिए परीक्षकों को मूल्यांकन से पूर्व प्रशिक्षण और सही निर्देश दिए जाएं ताकि मूल्यांकन न्यायसंगत हो।
10. **आंतरिक जांच हेतु प्रमाणीकृत परीक्षाओं का प्रयोग (Use of Standardized Examination for Internal Examinations)**–विद्यालय में आंतरिक जांच के लिए निर्मित परीक्षाओं, मौखिक परीक्षाओं, प्रायोगिक परीक्षाओं, विद्यार्थियों की मनोवृत्ति और अभिरुचियों को जांचने के लिए अध्यापकों को निश्चित समय, निश्चित पाठ्यक्रम का पूर्वाभ्यास करवाकर योग्यतानुसार, निस्वार्थ, निष्पक्ष मूल्यांकन करने के दिशा-निर्देश दिए जाएं।

Scanned with CamScanner

2. निदानात्मक परीक्षण
(Diagnostic Test)

निष्पत्ति परीक्षणों द्वारा बालक की शैक्षिक योग्यताओं का मापन किया जाता है, सरल शब्दों में उसका अर्थ यह हुआ कि छात्र ने किसी विषय से सम्बन्धित पाठ्यवस्तु को कितना सीख लिया है । उसे निष्पत्ति (Achievement) कहते हैं । इस प्रकार निष्पत्ति परीक्षणों द्वारा यह विदित होता है कि छात्र ने कितना सीखा है । इन परीक्षणों से यह ज्ञात नहीं किया जा सकता कि जो नहीं सीख सके उसका क्या कारण रहा ? इसके लिये निदानात्मक परीक्षणों (Diagnostic Tests) का प्रयोग किया जाता है । शैक्षिक निष्पत्ति मापन की दृष्टि से निष्पत्ति परीक्षण (Achievement Test) एवं निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test) एक दूसरे के पूरक हैं । शैक्षिक मापन के प्रत्यय को एक सरल उदाहरण से समझ सकते हैं ।

Scanned with CamScanner

उदाहरण – एक गिलास 60% पानी से भरा हुआ है, यह उसकी निष्पत्ति है और 40% खाली है, खाली होने का कारण निदान (Diagnosis) करने से विदित होता है ।

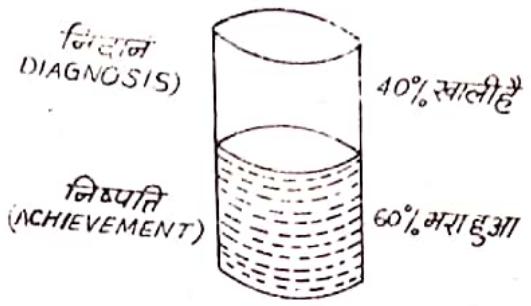

शैक्षिक मापन के लिए निष्पत्ति परीक्षण और निदानात्मक परीक्षण दोनों ही आवश्यक हैं। इस अध्याय में निदानात्मक परीक्षण का विवेचन किया गया है ।

निदान का प्रत्यय (Concept of Diagnosis)

इस प्रत्यय को निम्नलिखित उदाहरणों से स्पष्ट किया गया है –

1. दो समान योग्यताओं वाले छात्रों की निष्पत्तियों में अन्तर हो सकता है ।जिस छात्र को अधिक प्रेरणा दी गई है, उसके अंक या प्राप्तांक अधिक हो सकते हैं, और जिसको प्रेरणा नहीं मिली है उसके अंक कम हो सकते हैं ।यह कारण निदान से ही ज्ञात किया जा सकता है ।

(अ) किस प्रकार की अभिप्रेरणा दी गई है यह भी महत्वपूर्ण होता है क्योंकि एक ही प्रकार की प्रेरणा दो प्रकार के छात्रों के लिये प्रभावी नहीं हो सकती, अन्तर्मुखी (Introvert) छात्रों के लिए निरन्तर प्रेरणा की आवश्यकता होती, जबकि बहिर्मुखी छात्रों के लिये कभी-कभी प्रेरणा देना पर्याप्त होता है ।

(ब) अभिप्रेरणा के अतिरिक्त छात्र की परिस्थितियाँ जिनमें वह रहकर अध्ययन कर रहा है, वहभी उसकी निष्पत्ति को प्रभावित करती हैं ।जबकि विद्यालय में सभी को समान परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती हैं ।

(स) तृतीय कारण परीक्षा और परीक्षक की परिस्थितियाँ भी हो सकती है ।परीक्षण में छात्र की पाठ्यवस्तु एवं उसकी लेखन विधि अच्छे अंकों के लिये महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं ।

निदान के अन्तर्गत कम अंक प्राप्त करने के कारणों का सही पता लगाया जाता है । आधुनिक निदान की प्रक्रिया के अन्तर्गत केवल निदानात्मक परीक्षाओं तक ही सीमित नहीं रहते हैं छात्र की समस्त परिस्थितियों का अवलोकन करके विशिष्ट प्रभावों को ज्ञात किया जाता है, निदान के अन्तर्गत वस्तुनिष्ठ विधियों एवं प्रविधियों का प्रयोग किया जाता है ।

2. आधुनिक निदान के अन्तर्गत छात्र के व्यवहार के सभी क्षेत्रों को सम्मिलित किया जाता है, उसे एक क्षेत्र तक संकुचित रूप में सीमित नहीं रखते ।इस निदान के प्रारूप में सामान्य क्षेत्रों की अयोग्यतायें उद्देश्यों एवं विधियों का विभिन्न व्यक्तियों पर प्रभाव का अध्ययन किया जाता है, इसके अन्तर्गत सामूहिक निदान किया जाता है ।केवल एक व्यक्ति के निदान तक सीमित नहीं रखा जाता है ।

3. आधुनिक निदान की प्रक्रिया के अन्तर्गत संचयी आलेखों या सतत् परीक्षणों का प्रयोग होता है ।इस प्रकार के निदान अधिक शुद्ध एवं विश्वसनीय होते हैं ।

Scanned with CamScanner

निदान के कार्य (Functions of Diagnosis)

निदान की प्रक्रिया व्यक्तिगत अधिक होती है, फिर भी इसके अधोलिखित कार्य है –

1. **वर्गीकरण** (Classification) – निदान की प्रक्रिया का वर्गीकरण प्राथमिक सोपान या लक्ष्य माना जाता है । निदान की प्रक्रिया को आरम्भ करने के लिये यह है कि सभी छात्रों को सजातीय समूहों में विभाजित किया जाए । यह विभाजन अधोलिखित सामान्य गुणों पर आधारित होता है –

a— मानसिक स्तर (Intellectual Level)

b— व्यावसायिक स्तर (Vocational Level)

c— संगीत की प्रवणता (Musical Level) ।

इन स्तरों का प्रयोग प्रशासनिक अथवा निर्देश की दृष्टि से किया जाता है ।

2. **विशिष्ट योग्यताओं का मापन** (Assessment of Specific Ability) – निदान का दूसरा सोपान छात्रों की विशिष्ट योग्यताओं का मापन करना होता है, इसके अन्तर्गत अधोलिखित निम्नांकित योग्यताओं का स्तर ज्ञात किया जाता है –

a— समायोजन का स्तर (Level of Adjustment)

b— असमान्यता का स्तर (Level of Abnormality)

c— उत्सुकता का स्तर (Level of Anxeity)

d— हताशता का स्तर (Level of Depression)

e— शत्रुता का स्तर (Level of Hostility)

3. **निदान सम्बन्धी अध्ययन** (Etiology) – यह कार्य सबसे जटिल और कठिन होता है । इसके अन्तर्गत यह ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है कि उसके सीखने की कमजोरियां उसकी सामान्य योग्यताओं एवं विशिष्ट योग्यताओं से किस प्रकार सम्बन्धित हैं । इसके अन्तर्गत छात्रों के न सीखने के कारणों का पता लगाया जाता है ।

4. **सुधारात्मक** (Remediation) – निदान का अन्तिम कार्य यह होता है कि छात्रों की कमजोरियों को दूर किया जाय । जब उसकी कमजोरियों का कारण ज्ञात कर लेते हैं तो उन कारणों को दूर करने की विधियों का चयन करके उनका प्रयोग करते हैं जिससे उनकी कमजोरियों को दूर किया जा सके । इस प्रकार निदान के अन्तर्गत पूर्वकथन (Prediction) कार्य भी निहित होता है। छात्रों की कमजोरियों को दूर करके ही उनमें सुधार लाया जा सकता है । सुधार से छात्रों की निष्पत्तियों के स्तर को उठाया जाता है । इस प्रकार निदान का कार्य साफल्यता भी है और निदान की क्रिया गतिशील भी होती है । सुधारात्मक प्रक्रिया व्यक्तिगत (highly Individualized) अधिक होती है ।

निदान की विधियाँ (Methods of Diagnosis)

निदान की प्रक्रिया में प्रमुख रूप से दो प्रकार की विधियों का प्रयोग किया जाता है –

1. दार्शनिक विधि (Philosophical Method)
2. परीक्षण विधि (Testing Method) ।

Scanned with CamScanner

1. दार्शनिक विधि (Philosophical Method) — निदान एक पारस्परिक प्रक्रिया अधिक है । निदानात्मक परीक्षणों के आधार पर छात्रों का शुद्ध रूप में निदान नहीं किया जा सकता, जब तक शिक्षक का छात्रों से पारस्परिक सम्बन्ध न हो । निदानात्मक परीक्षणों से यह विदित होता है कि छात्र किस प्रकार की त्रुटि करते हैं, परन्तु त्रुटि करने का क्या कारण है, इसके कारण का पता शिक्षक ही लगा सकता है, जिसका छात्रों से सम्बन्ध है । क्योंकि त्रुटि के कारण अनेक हो सकते हैं, जो छात्र के व्यक्तिगत गुणों एवं परिस्थितियों पर निर्भर करते हैं । इस प्रकार निदानात्मक परीक्षण विश्वसनीय एवं वैध तभी हो सकता है जब परीक्षक का परीक्षार्थियों से पारस्परिक सम्बन्ध रहा हो अन्यथा उसका अर्थापन करना शुद्ध एवं वैध (Accurate & Validate) नहीं होगा ।

2. निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Tests) — निदान की दूसरी विधि निदानात्मक परीक्षण है । साधारणतया इसी विधि का प्रयोग निदान की प्रक्रिया में किया जाता है । निदानात्मक परीक्षण का प्रयोग मुख्य रूप से निर्देशन एवं सुधार के लिये किया जाता है । निदानात्मक परीक्षण से यह विदित होता है कि एक छात्र की निष्पत्ति पर्याप्त क्यों नहीं है, इसका कारण बताता है ।

निदानात्मक परीक्षणों का नियोजन एवं उनकी रचना इसी दृष्टि से की जाती है । निदानात्मक परीक्षण से केवल छात्रों की कमजोरियों का पता ही नहीं चलता, अपितु पाठ्यवस्तु के स्वामित्व की भी जानकारी होती है । इस प्रकार किसी भी विशेष क्षेत्र की निष्पत्ति एवं उस क्षेत्र की कमजोरियों का भी बोध होता है । इसलिये इन परीक्षण को विश्लेषणात्मक (Analytical Test) कहते हैं । इन परीक्षणों के द्वारा छात्र की मानसिक प्रक्रिया का विश्लेषण करके, कमजोरियों का कारण ज्ञात करके उनमें सुधार किया जाता है ।

निदानात्मक परीक्षण एवं निष्पत्ति परीक्षण में अन्तर (Difference between Diagnostic Test and Achievement Test) — साधारणतया (Diagnostic Test) निदानात्मक परीक्षण को शैक्षिक मापन में सम्मिलित किया जाता है परन्तु निष्पत्ति परीक्षणों से भिन्न होते हैं —

1. निष्पत्ति परीक्षणों के द्वारा यह मापन किया जाता है कि एक विषय के सम्बन्ध में छात्र ने कितना ज्ञान अर्जित किया है । यह मापन एक प्राप्तांक के रूप में होता है । परन्तु किसी छात्र के अधिक या कम अंक होने का कारण नहीं बताता है ।

एक निदानात्मक परीक्षण के द्वारा एक छात्र के कम अंक प्राप्त करने के कारणों का पता लगता है । परन्तु इसके द्वारा छात्रों की निष्पत्ति का मापन अंकों में प्राप्तांकों में नहीं होता है ।

निदानात्मक में सही प्रश्न के लिये अंक नहीं दिये जाते हैं अपितु गलत प्रश्न पर कारणों का विचार किया जाता है ।

2. निष्पत्ति परीक्षण में प्रश्नों को कठिनाई स्तर के क्रम में रखा जाता है अर्थात् सबसे सरल सबसे पहले और सबसे कठिन सबसे अन्त में रखा जाता है । जब कि निदानात्मक में प्रश्नों को सीखने के मनोवैज्ञानिक अथवा सीखने के तार्किक (Logical Sequence) में रखा जाता है या व्यवस्थित किया जाता है ।

3. निष्पत्ति परीक्षण की रचनाओं में साधारणतया सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु पर प्रश्न देने का प्रयास किया जाता है । जबकि निदानात्मक परीक्षण में पाठ्यवस्तु के साथ सीखने के क्रम को भी महत्व दिया जाता है ।

Scanned with CamScanner

निदानात्मक परीक्षण की रचना में पद विश्लेषण के लिये सही उत्तरों को महत्व दिया जाता है । जबकि निदानात्मक परीक्षण के पद विश्लेषण में गलत उत्तरों को महत्व देते हैं ।

4. निष्पत्ति परीक्षणों का प्रयोग शैक्षिक प्रशासन में अधिक होता है । जैसे – छात्रों का वर्गीकरण, करना, चयन करना, अगली कक्षा में प्रवेश देना छात्रों को श्रेणीबद्ध करना आदि । जबकि निदानात्मक परीक्षणों का प्रयोग शैक्षिक निर्देशन तथा सुधारात्मक शिक्षण में होता है । सुधारात्मक/शिक्षण में शिक्षक को बड़े सूझ-बूझ से कार्य करना होता है क्योंकि सुधारात्मक शिक्षण व्यक्तिगत होता है ।

5. निष्पत्ति परीक्षणों की तरह निदानात्मक परीक्षणों को अधिक विश्वसनीय एवं वैध नहीं बनाया जा सकता, निदानात्मक परीक्षण के मानक (Norm) का विकास करना संभव नहीं होता है । क्योंकि इसमें व्यक्तिगत विशेषताओं को ध्यान में रखा जाता है ।

6. कुछ परीक्षण ऐसे होते हैं, जो निदान एवं मूल्यांकन दोनों के लिये प्रयोग किये जा सकते हैं । परन्तु ऐसे परीक्षण अधिक प्रभावी नहीं होते हैं ।

7. निष्पत्ति परीक्षण परिमाणात्मक (quantitative) होते हैं । जबकि निदानात्मक परीक्षण गुणात्मक (qualitative) होते हैं । शैक्षिक मापन की दृष्टि से दोनों एक दूसरे के पूरक है, विरोधी नहीं ।

निदानात्मक परीक्षण के प्रकार (Types of Diagnostic Test)

निदान की परीक्षण विधि भी दो प्रकार की होती है :

1. निरीक्षण-विधि (Observational Method)
2. निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test)

1. निरीक्षण विधि (Observational Method) – सामान्य अर्थों में यह परीक्षण नहीं है, अपितु निरीक्षण विधि है, जिसमें साक्षात्कार भी किया जाता है । छात्रों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके उनकी परिस्थितियों के बारे में जानकारी की जाती है, अनौपचारिक ढंग से भी निरीक्षण करते हैं । इस प्रकार के निरीक्षणों के द्वारा उनकी कमजोरियों को जानने का प्रयास करते हैं, जिसके लिये शैक्षिक निर्देशन तथा व्यक्तिगत आवश्यकताओं के अनुसार सहायता दी जाती है । यह विधि अधिक विश्वसनीय नहीं है, इसलिए इसका प्रयोग नहीं होता है । इसमें व्यक्तिगत पक्षों का समावेश अधिक होता है ।

2. निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test) – निदानात्मक परीक्षणों का प्रयोग अधिक किया जाता है । इसमें वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को सम्मिलित किया जाता है । इस प्रकार के परीक्षण शाब्दिक तथा अशाब्दिक होते है । इनके प्रयोग से छात्रों के विभिन्न पक्षों के व्यवहारों का मापन किया जाता है, जैसे शैक्षिक योग्यता, बुद्धि, अभिरूचि, अभिवृत्ति अभिरूचि, प्रवणता, व्यक्तित्व के गुणों तथा विशिष्ट व्यावसायिक कौशलों का मापन किया जाता है ।

पिछले कुछ दशकों से प्रक्षेपित परीक्षण (Projective Test) का प्रयोग निदान के लिये किया जाने लगा है ।

Scanned with CamScanner

व्यक्तितव मापन में इसका प्रयोग अधिक किया जाने लगा है । व्यक्ति के अवांछित एवं असामान्य व्यवहारों का पता इसी प्रकार के परीक्षणों से किया जाता है । छात्रों के उत्तरों का विश्लेषण तीन पक्षों प्रकरण, प्रक्रिया एवं परिणाम में किया जाता है ।

निदानात्मक परीक्षणों के रचना के सोपान (Steps for Diagnostic Test Corstruction) – निदानात्मक परीक्षाओं की रचना के लिये अधोलिखित सोपानों का अनुसरण किया जाता है –

1. उद्देश्यों का निर्धारण तथा पाठ्यवस्तु के प्रकरणों की रूप रेखा –
2. पाठ्यवस्तु विश्लेषण-तार्किक क्रम में –

- a— पाठ्यवस्तु के प्रकरणों का क्रम –
- b— सीखने के सोपानों का क्रम –

3. पाठ्यवस्तु के कठिनाई क्रम का निर्धारण –
4. परीक्षण के पदों के प्रकार का निर्धारण –
5. परीक्षण के पदों का सुधार –
6. पाठ्यवस्तु के तार्किक क्रम का विश्लेषण –
7. परीक्षण के अन्तिम प्रारूप की तैयारी –

निदानात्मक परीक्षा के पदों के सुधार के लिये पद विश्लेषण भी किया जाता है । पद विश्लेषण के लिये गलत पदों को महत्व दिया जाता है । और इसमें स्टेनले (Stanlley) विधि का प्रयोग करते हैं । छात्रों की गलतियों के कारण अनेक हो सकते हैं, जैसे-कम सुनना एवं कम देखना, घर की परिस्थिति का अच्छी न होना, मानसिक योग्यता का अभाव तथा साथियों से अच्छे सम्बन्ध न होना ।

इस प्रकार ऐसे भी कारण होते हैं जो अध्यापक की पहुँच में नहीं होते, जिसमें माता-पिता तथा अन्य लोगों की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है ।

पढ़ने का निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Reading Test)

निदानात्मक परीक्षणों में यह माना जाता है कि पढ़ने के कौशलों का मापन में सबसे महत्वपूर्ण स्थान होता है । इसका प्रमुख कारण यह है कि शैक्षिक निष्पत्ति में पढ़ने की क्षमताओं या पढ़ने के कौशल की भूमिका महत्वपूर्ण होती है । पढ़ने का निदानात्मक परीक्षण आयोवा साइलेन्ट रीडिग टेस्ट (Iowa Silent Reading Test) एक विशेष प्रकार का परीक्षण हैं । जिसमें कई उपपरीक्षणों को सम्मिलित किया गया है । वे इस प्रकार हैं –

1. गद्य की बोधगम्यता तथा अध्ययन की गति –
   (Rate of Reading and Comprehension of prose)
2. पद्य की बोधगम्यता तथा सौन्दर्यानुभूति –
   (Poetry Comprehension and Appreciation)
3. विभिन्न प्रकार के पाठ्यवस्तु की शब्दावली –
   (Vocabulary in Different Content Area)

Scanned with CamScanner

4. वाक्यों का अर्थ –
(Meaning of Sentences)
5. परिच्छेद की बोधगम्यता –
(Paragraph Comprehension)

इन पाँच उप-परीक्षणों को पढ़ने के निदानात्मक परीक्षण में सम्मिलित किया गया है । छात्रों को यह परीक्षण दिया जाता है, और परीक्षण उनकी त्रुटियों को देखता है, और अधोलिखित त्रुटियाँ ज्ञात करता है । शब्दों के गलत उच्चारण, शब्दों की गलत वर्तनी, शब्दों का लोप, पुनरावृत्ति, शब्दों का स्थानापन्न, शब्दों को जोड़ना तथा विपरीत पढ़ना आदि त्रुटियाँ पायी जाती हैं ।

इन त्रुटियों के आधार पर पढ़ने की कठिनाई के कारणों के सम्बन्ध में संकेत मिलता है । जैसे-गलत उच्चारण में तुतलाना या शर्माना तथा गलत वर्तनी में दृष्टि का दोष आदि कारणों का बोध होता है । शिक्षक इन कारणों को ज्ञात करके छात्रों को समुचित निर्देशन तथा सुधारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करता है ।

गणित के कौशलों हेतु निदानात्मक परीक्षण (Diagnostic Test of Mathematical skills) – पढ़ने के निदानात्मक परीक्षणों के बाद दूसरा स्थान गणित के निदानात्मक परीक्षण का है, जो छात्रों की दृष्टि से बहुत ही आवश्यक है । गणित अपेक्षाकृत एक कठिन विषय है, इसलिये इसमें निदानात्मक परीक्षणों का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है । गणित में कम्पास डाइग्नोस्टिक टेस्ट इन अर्थमेटिक (Compass Diagnostic Test in Arithmetic) का प्रयोग अधिक किया गया है । इसमें कक्षा दो से आठ तक के लिए, प्रश्नों को सम्मिलित किया गया है । इसमें प्रमुख रूप से चार प्रकार के उपपरीक्षणों को सम्मिलित किया गया है ।

1. जोड़ना (Additon)
2. घटाना (Subtraction)
3. गुणा करना (Multiplication)
4. भाग करना (Division) ।

इन चारों को उप-परीक्षणों में निहित कौशलों में विभाजित किया गया है , और उनमें से प्रत्येक के परीक्षण के लिये अलग-अलग परीक्षणों की रचना की गयी है ।

इन परीक्षणों को छात्रों को सख्त करने के लिए दिया जाता है, परीक्षण गलतियों की प्रकृति पहचानने का प्रयास करता है । इसमें साधारणतया अधोलिखित कठिनाइयाँ पायी जाती हैं : –

1. जोड़ में हासिल लगाना नहीं आता –
2. घटाने में उधार लेने नहीं आता –
3. उधार लेकर अगले अंक में एक कम करना नहीं आता –
4. दशमलव लगाना नहीं आता –
5. गुणा में त्रलिका का न आना –
6. गुणा में हासिल लगाना नहीं आता –
7. गुणा में दशमलव लगाना नहीं आता –

Scanned with CamScanner

8. भाग में तालिका याद न होना —

9. अंको को उतारना —

10. दशमलव अंक लगाना — आदि ।

त्रुटियों से छात्रों की कठिनाइयों के बारे में पता चलता है और त्रुटियों के कारणों का भी बोध होता है ।शिक्षक को छात्रों की कठिनाइयों के लिये समुचित सुधारात्मक शिक्षण की व्यवस्था करनी होती है ।

निदानात्मक परीक्षणों का महत्व (Importance of Diagnostic Test)

शैक्षिक मापन में निष्पत्ति परीक्षण एवं निदानात्मक परीक्षण दोनों के महत्वपूर्ण कार्य हैं । छात्रों की कमजोरियों की दृष्टि से निदानात्मक परीक्षणों का विशेष महत्व है ।निदानात्मक परीक्षण के गुण दोष निम्नलिखित हैं :

1. छात्रों की कमजोरियों की दृष्टि से निदानात्मक परीक्षणों की सबसे अधिक आवश्यकता होती है ।

2. निदानात्मक परीक्षणों के आधार पर सुधारात्मक परीक्षण की व्यवस्था की जाती है ।

3. इनके आधार पर छात्र की उपलब्धियों के सम्बन्ध में विश्वसनीय अंक प्राप्त किये जाते हैं ।

4. निदानात्मक उप-परीक्षणों की वैधता एवं विश्वसनीयता कम होती है ।

5. निदानात्मक परीक्षण में अधिक समय लगता है और उनकी रचना करना भी कठिन होता है ।

Scanned with CamScanner

3.6 आकलन में मुद्दे (Issues in Assessment)

12. आकलन में विभिन्न मुद्दों का वर्णन कीजिए।
(Describe the different issues in assessment.)

उत्तर–विभिन्न स्तरों पर आकलन (Assessment at Different Stages)–विभिन्न स्तरों पर आकलन का स्तर भी भिन्न होता है। प्रारंभिक स्तर पर कक्षा I तथा II का आकलन विभिन्न क्षेत्रों में बच्चों के क्रियाकलापों के गुणात्मक निर्णयों पर आधारित होता है। यह आकलन बच्चों की प्रतिदिन की अंतःक्रियाओं के जरिए अवलोकन पर आधारित उनके स्वास्थ्य तथा शारीरिक स्तर का आकलन होता है। कक्षा I तथा II के बच्चों में आकलन के लिए किसी भी प्रकार की लिखित या मौखिक परीक्षा की आवश्यकता नहीं होती।

कक्षा III से कक्षा VIII तक के बच्चों का आकलन करने के लिए लिखित परीक्षा, मौखिक परीक्षा तथा अवलोकन आदि कई विधियों का प्रयोग किया जाता है। बच्चों को भी इस बात का पता होता है कि उनका आकलन किया जा रहा है। यह आकलन शिक्षण प्रक्रिया का एक हिस्सा होता है। इस स्तर पर बच्चों का सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन किया जाता है। कक्षा III से कक्षा VIII तक हरियाणा शिक्षा विभाग द्वारा मासिक परीक्षा व्यवस्था की शुरुआत की गई है। मासिक परीक्षा के माध्यम से बच्चों का सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन किया जाता है। इस स्तर पर उपलब्धि के गुणात्मक निर्णयों के साथ अंक या ग्रेड दिए जाते हैं। बच्चों को उनके आकलन से संबंधित प्रगति कार्ड भी दिए जाते हैं। अतः कक्षा VIII तक के बच्चों के आकलन के लिए सतत् एवं व्यापक मूल्यांकन किया जाता है।

कक्षा IX से XII तक का आकलन स्व-मूल्यांकन के साथ पाठ्यक्रम के ज्ञान पर आधारित क्षेत्रों के लिए परीक्षाओं तथा परियोजना रिपोर्ट पर आधारित होता है। दूसरे क्षेत्रों का आकलन अवलोकन तथा स्व-मूल्यांकन के जरिए होता है।

परियोजना कार्य में बच्चों के बारे में विश्लेषण उनके विभिन्न कौशल तथा प्रतिशतांक आदि का आकलन किया जाता है। परियोजना कार्य में छात्रों को विषय संबंधित परियोजना कार्य दिया जाता है। परियोजना कार्य के अंक प्रदान किए जाते हैं। इस स्तर पर प्रायोगिक विषयों से संबंधित प्रायोगिक अथवा मौखिक परीक्षा द्वारा भी आकलन किया जाता है।

आकलन का प्रारूप तथा संचालन (Design and Conduct of Assessment)–आकलन तथा परीक्षाएं विद्यार्थी के अधिगम को आंकने के ठोस तरीके होते हैं, ज्ञान आधारित विषय क्षेत्र में आकलन का उद्देश्य यह आंकना होता है कि बच्चे ने क्या सीखा है। आकलन बच्चे के समस्या समाधान के लिए इस ज्ञान को प्रयोग करने की योग्यता को भी आंकता है। इसलिए आकलन के प्रारूप तथा संचालन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

मूल्यांकन करने के लिए जिस परीक्षा विषय की आवश्यकता होती है, वह प्रश्न-पत्र कहलाता है। विभिन्न विचारकों का यह मत है कि एक अच्छा प्रश्न-पत्र पूर्व निश्चित ढाँचे के अनुसार होना चाहिए, जिसमें सत्यता, मान्यता, विश्वसनीयता, प्रयोगात्मकता और वस्तुनिष्ठता के गुणों का होना अनिवार्य है। इसके अलावा इसमें शैक्षणिक सार्थकता भी होनी चाहिए, तभी वह सही अर्थों में निर्धारित प्रयोजन की पूर्ति, छात्रों के मार्गदर्शन में उपयोगी माना जा सकता है। मूल्यांकन के लिए प्रश्न-पत्र के ढाँचे में निम्नलिखित पद रखे जाते हैं :

1. प्रश्न-पत्र के नमूने की तैयारी।
2. प्रश्न-पत्र बनाने का ढाँचा।
3. प्रश्न बनाना।
4. प्रश्न-पत्र का सम्पादन करना।
5. अंक तालिका और अंक प्रणाली।
6. मूल्यांकन।

1. प्रश्न-पत्र के नमूने की तैयारी

यह प्रश्न-पत्र का महत्त्वपूर्ण पद है। इसमें परीक्षक को निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिए–

Scanned with CamScanner

(i) उद्देश्य : इसमें उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए लक्ष्यों को चुनना चाहिए, जो परीक्षण करने है इसके साथ अंकों का भी निर्धारण होना चाहिए। उद्देश्यों को निम्न तालिका के अनुसार अधिगम प्रदान किय गया है :

क्रमांक	अनुदेशात्मक उद्देश्य (Instructional Objective)	1st Class
1.	ज्ञानात्मक उद्देश्य Knowledge Objective (K)	40%
2.	अवबोधात्मक उद्देश्य Understanding Objective (U)	32%
3.	प्रयोगात्मक उद्देश्य Application Objective (A)	20%
4.	कौशलात्मक उद्देश्य Skill Objective (S)	8%

प्रथम के लिए ज्ञानात्मक उद्देश्य 40% है। अगली कक्षाओं के लिए ज्ञानात्मक उद्देश्यों में 2-2 प्रतिशत घटाकर कौशलात्मक उद्देश्यों में जोड़ दिए जाएँगे। इसी प्रकार अवबोधात्मक उद्देश्यों से 2-2 प्रतिशत कम करके प्रयोगात्मक उद्देश्यों पर जोड़ दिए जाएँगे। उदाहरण : कक्षा सातवीं के लिए अनुदेशात्मक उद्देश्यों का निर्धारण बच्चे ने 6 कक्षाएं पास कर ली है। अतः अनुदेशात्मक उद्देश्यों का निर्धारण निम्न प्रकार से किया जाएगा :

ज्ञानात्मक	40-(6*2)% = 28%
अवबोधात्मक	32-(6*2)% = 20%
प्रयोगात्मक	20+(6*2)% = 32%
कौशलात्मक	8+(6*2)% = 20%

(ii) विषय-वस्तु : विषय-वस्तु के विभिन्न पक्षों को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रमानुसार मुख्य अंशों को चुनना, जिनका परीक्षण करना है, विशेष ध्यान देना चाहिए। विषय-वस्तु को अधिगम प्रदान करने से तात्पर्य पाठ्यक्रम की समस्त विषय-वस्तु को उसके महत्त्व के अनुसार अंक प्रदान करना है।

उदाहरण : कक्षा : 6th

विषय : E.V.S. (विज्ञान)

प्रस्तुत उदाहरण में विषय-वस्तु को किस प्रकार से अधिमान प्रदान करना है। यह तालिका कक्षा 6 जी के विज्ञान अध्ययन के विषय-वस्तु को दिया गया अधिमान दर्शाती है।

विषय वस्तु	पाठ संख्या	अधिमान प्रतिशतता	अंक	ज्ञानात्मक (K) 30%	अवबोधात्मक (U) 22%	प्रयोगात्मक (A) 30%	कौशलात्मक (S) 18%
भौतिक विज्ञान	17	47%	38	11	9	11	7
रसायन विज्ञान	10	28%	22	7	4	7	4
जीव विज्ञान	9	25%	20	6	4	6	4
योग	36	100%	80	24	17	24	15

प्रश्न के प्रकारों का अधिमान (Weightage to the Forms of Questions) : प्रश्नों के तीनों प्रकारों (निबंधात्मक, लघुउत्तरात्मक तथा वस्तुनिष्ठ) द्वारा छात्रों की विभिन्न योग्यताओं तथा विषय-वस्तु के ज्ञान की जाँच की जाती है। प्रश्न-पत्र बनाते समय यह ध्यान में रखना अति आवश्यक है कि किस प्रकार के प्रश्न को कितने अंक प्रदान किए जाएँ :

Scanned with CamScanner

उदाहरण : कक्षा : 6th

विषय : E.V.S. (विज्ञान)

क्रमांक	प्रश्नों के प्रकार	प्रश्नों की संख्या	अंक	प्रतिशत
1.	निबंधात्मक प्रश्न E = (Essay type)	05	21	26%
2.	लघु उत्तरीय प्रश्न A = (Short-answer)	14	35	44%
3.	वस्तुनिष्ठ प्रश्न Very Short Answer (V.S.A.)	24	24	30%
	योग	43	80	100%

विषय वस्तु	नि. E	ल.उ. S.A.	व.नि. V.S.A.
भौतिक विज्ञान	(2) 4 (1) 5	(4) 2 (2) 3	(11) 1
रसायन विज्ञान	(1) 4	(2) 2 (1) 3 (1) 4	(7) 1
जीव विज्ञान	(1) 4	(2) 2 (2) 2	(7) 1 (6) 1
योग	**4 (4) (1) 5**	**(8) 5 (5) 3 (1) 4**	**(24) 1**

निबंधात्मक	5	21
लघुउत्तरीय	14	35
वस्तुनिष्ठ	24	24
योग	43	80

(iii) निरीक्षण : प्रश्नों का निरीक्षण व ध्यान देना चाहिए।

2. प्रश्न-पत्र बनाने का ढाँचा

इस क्रिया में प्रश्न-पत्र के ब्लू प्रिंट को ठोस रूप दिया जाता है, जिसमें मुख्य रूप से तीन बातों पर विचार किया जाता है। परीक्षा के द्वारा उद्देश्य की पूर्ति हो, जो व्यावहारिक व सार्थक हो। विषय वस्तु हमेशा पाठ्यक्रम के अनुसार हो, जिसमें प्रश्नों की संख्या, प्रश्नों के प्रकार तथा प्रश्नों के अंक सम्मिलित हों।

3. प्रश्न-पत्र बनाना

प्रश्न-पत्र बनाने के लिए प्रश्न उसी आधार पर बनाने चाहिए, जो हमारे निश्चित उद्देश्य व पाठ्यक्रम को पूर्ण करता हो। इसके लिए परीक्षा का उद्देश्य स्पष्ट होना चाहिए, ताकि यह भी स्पष्ट हो सके कि हमें विद्यार्थी की अमुक योग्यता की जानकारी प्राप्त करनी है। इसके लिए इन बातों को अवश्य ध्यान में रखना जरूरी है–

(i) उद्देश्यों को निश्चित करना, ताकि परीक्षण में आसानी रहे।

Scanned with CamScanner

(ii) उद्देश्यों को विशिष्ट करना, ताकि उद्देश्यों की पूर्ति आसानी से हो सके।
(iii) विषय पूर्ण पाठ्यक्रम के अनुसार पूर्ण करता होना चाहिए।
(iv) प्रश्न तार्किक आधार पर तैयार होने चाहिए।

4. प्रश्न-पत्र का सम्पादन करना

जब पूरे प्रश्न-पत्र को तैयार कर दिया जाता है, तो उसका उद्देश्य के अनुसार निरीक्षण व सम्पादन करना आवश्यक है। जिसमें यह देखना कि सभी तरह के प्रश्न यथा लघु उत्तर वाले प्रश्न, रिक्त स्थान तथा निबन्धात्मक प्रश्न हमारे प्रश्न-पत्र में रखे गये हैं, जो निर्धारित संख्या के अनुसार रखे गये हैं। इसके बाद सम्पादन में उनको अलग-अलग कर लेना चाहिए।

5. अंक तालिका तथा अंक प्रणाली

अंक तालिका में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की अंक तालिका (सही उत्तर) तैयार होने चाहिए। अंक लगाने की विधि का निबंधात्मक व छोटे प्रश्नों के लिए पृथक-पृथक होना चाहिए। इसमें सम्भावित उत्तर व प्रत्येक भाग के लिए स्पष्ट विभाजन जरूरी है, जो यथायोग्य तर्क संगत भी होना चाहिए।

क्रमांक	प्रश्नों का स्तर	प्रश्नों की संख्या	अंक प्रतिशत
1.	अति सरल	24	30
2.	सरल	8	22
3.	कठिन	11	48
4.	योग	43	100

6. मूल्यांकन

प्रश्न-पत्र के अंत में अंकों को निश्चत करने के बाद उनका मूल्यांकन करना जरूरी है, जिसमें प्रश्नों के गुणों व दोषों को देखना चाहिए। इस परीक्षण में विद्यार्थियों की योग्यता, शिक्षा, आयु स्तर तथा पाठ्यक्रम को आधार मानना चाहिए, ताकि विद्यार्थियों की सही स्थिति का पता किया जा सके।

प्रश्न-पत्र का प्रारूप :

अखिल भारतीय विज्ञान शिक्षण सैमीनार तारादेवी (शिमला) द्वारा सुझाये गये सूझाव के अनुसार एक प्रश्न-पत्र का प्रारूप प्रस्तुत किया जा रहा है, जिसमें रसायन शास्त्र विषय है। कुल अंक 25, अवधि 40 मिनट है, जो IX कक्षा के लिये है। यह प्रश्न-पत्र तत्त्व, यौगिक, मिश्रण से संबंधित है।

1. वर्तमान परीक्षा पद्धति में विद्यालय कार्य को महत्त्व दकने के लिए परीक्षा व्यवस्था में बालक के आंतरिक व बाह्य कार्य का मूल्यांकन इस प्रकार से विभाजन करना चाहिए।

पाठ्य सामग्री	स्कूल का रिकार्ड	बाह्य परीक्षा
प्रयोगात्मक कार्य	50 प्रतिशत	50 प्रतिशत
सैद्धान्तिक कार्य	20 प्रतिशत	80 प्रतिशत

2. बाह्य परीक्षा में लघु उत्तर तथा वस्तुनिष्ठ व निबंधात्मक प्रश्न पूछे जाने चाहिए। इसमें आधे घंटे का प्रश्न-पत्र पहले वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का होना चाहिए। दूसरे भागों में 2 या 2½ घंटे का प्रश्न-पत्र लघु उत्तर व निबंधात्मक प्रश्नों का होना चाहिए।
3. वर्तमान परीक्षा पद्धति में सभी प्रकार की परीक्षाओं में यथा आंतरिक व बाह्य परीक्षा में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों को रखना चाहिए। विद्यालय में बालक के रिकार्ड को महत्त्व देना चाहिए।
4. प्रत्येक विद्यार्थी को व्यक्तिगत रूप से अंक प्रमाण-पत्र देना चाहिए, जिसमें उसका प्रतिशत अंक व ग्रेड भी दिखाना चाहिए, जो समय-समय पर अभिभावक को सूचित करते रहना चाहिए।

Scanned with CamScanner

प्रश्न पत्र का ब्लू प्रिंट

प्रकरण → / उद्देश्य ↓		तत्त्व			यौगिक			मिश्रण			सामान्य			कुल
ज्ञानात्मक	नि.	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
	ल.प्र.	-	2(1)	-	-	2(1)	-	-	2(1)	-	-	-	2(1)	8
	व.प्र.	-	-	1(1)	-	-	1(1)	-	-	-	-	-	-	2
बोधात्मक	नि.	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
	ल.प्र.	-	2(1)	-	-	2(1)	-	-	-	-	-	2(1)	-	6
	व.प्र.	-	-	2(2)	-	-	1(1)	-	-	-	-	-	-	4
क्रियात्मक	नि.	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-
	ल.प्र.	-	-	-	-	-	-	-	2(1)	-	-	2(1)	-	8
	व.प्र.	-	-	1(1)	-	-	1(1)	-	-	-	-	-	-	2
कुल अंकों		-	4	4	-	4	2	-	4	1	-	4	2	25

संकेत :1. नि. = निबन्धात्मक प्रश्न, ल. प्र. = लघु उत्तरात्मक प्रश्न, व. प्र. = वस्तुनिष्ठ प्रश्न।
2. कोष्ठक के अंदर प्रश्नों की संख्या तथा उसके बाहर अंकों को प्रदर्शित करती है।
3. लघु उत्तर वाले प्रश्नों की संख्या = 16
4. वस्तुनिष्ठ प्रश्नों की संख्या = 9

कुल योग = 25

वर्तमान परीक्षा पद्धति में सुधार हेतु कोठारी कमीशन के सुझाव

(1) मिडिल परीक्षा में लिखित परीक्षा के अलावा आंतरिक मूल्यांकन व मौखिक परीक्षा को महत्व देना चाहिए।
(2) परीक्षा में सुधार हेतु नई-नई तकनीकों का प्रयोग करना चाहिए।
(3) प्रश्न-पत्रों की बनावट, नवीनीकरण और प्रकृति में सुधार करना चाहिए।
(4) अंक देन की व्यवस्था में सुधार करना चाहिए।
(5) स्कूल शिक्षा बोर्ड परीक्षा में बाह्य परीक्षा के आधार पर दिये गये प्रमाण-पत्र में विभिन्न विषयों के कार्य का अलग-अलग स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।
(6) यदि कोई विद्यार्थी अपनी योग्यता बढ़ाना चाहता है, तो उसे क्रमशः एक विषय या सम्पूर्ण परीक्षा का पुनः देने की अनुमति अवश्य मिलनी चाहिए।
(7) विद्यार्थियों के आंतरिक मूल्यांकन में सभी पक्षों की पूर्ण व व्यापक जाँच होनी चाहिए।
(8) विद्यालय की लिखित परीक्षाओं में पूर्ण सुधार होना चाहिए तथा मासिक, त्रिमासिक व छःमाही के आधार पर होनी चाहिए।
(9) अध्यापन करने वाले अध्यापकों का उचित व समय-समय पर उचित प्रशिक्षण भी होते रहना चाहिए।
(10) आंतरिक व बाह्य मूल्यांकन को पृथक्-पृथक् दिखाना चाहिए, जिसमें ग्रेडिंग व प्रतिशत साथ में विषयानुसार दिखना चाहिए।

मूल्यांकन के संचालन के प्रचलित प्रयोग *(Existing Practicals of Conduct of Assessment)*

आकलन तथा मूल्यांकन के प्रचलित प्रयोगों का वर्णन इस प्रकार है–

Scanned with CamScanner

1. इकाई-परीक्षा (Unit Test)–विद्यार्थियों को वर्ष भर पढ़ाने के पश्चात् यदि वर्ष के अंत में परीक्षा ली जाए तो वर्ष भर में याद किया हुआ न हो तो बच्चों को याद ही रहता है और न ही बच्चे अच्छे नंबर प्राप्त कर सकते हैं। इसके साथ वह रटने की प्रवृत्ति पर जोर देते हैं उन पर काम का बोझ इतना बढ़ जाता है कि वह अपना स्वास्थ्य भी खराब कर लेते हैं। इसके लिए उपयोगी यही है कि हर महीने बच्चों में यूनिट टैस्ट ले लिया जाए। इससे बच्चों को याद करना आसान हो जाएगा। पढ़ाई के साथ-साथ अभ्यास भी हो जाएगा। बच्चे इसमें रुचि लेकर पढ़ेंगे। अच्छे अंक प्राप्त करने का उनका हौसला भी बढ़ेगा। बच्चों को आपस में अच्छी प्रतिस्पर्धा करने का अवसर प्राप्त हो जाएगा। बच्चों पर काम का बोझ कम पड़ने से वह सभी विषयों का अभ्यास अच्छी तरह से कर सकेंगे। यूनिट टैस्ट से अध्यापक पर भी काम का बोझ कम हो जाता है।

2. अर्ध वार्षिक परीक्षा (Half-yearly examination)–अर्धवार्षिक परीक्षा आधा सत्र समाप्त होने के बाद आयोजित की जाती है तथा इस परीक्षा द्वारा विद्यार्थियों की शैक्षिक योग्यता की जाँच की जाती है। इसमें आधुनिक परीक्षणों की संप्राप्ति को भी ध्यान में रखा जाता है। अर्ध वार्षिक परीक्षा के दो उद्देश्य होते हैं–प्रथम छात्रों की उपलब्धि की जाँच और दूसरा उनकी कमियों को सुधारना। इस परीक्षा का यह अर्थ नहीं है कि पाठ्यक्रम का एक भाग समाप्त हो गया है। और उसका दोबारा परीक्षण नहीं होगा। अर्धवार्षिक परीक्षा में जिस सामग्री को जाँचा जाता है उसको वार्षिक परीक्षा में पुनः जाँचा जा सकता है।

3. वार्षिक परीक्षा (Annual examination)–वार्षिक परीक्षा वह परीक्षा होती है जो एक वर्ष अथवा शैक्षिक सत्र के पूरा होने पर ली जाती है। उसका उद्देश्य एक सत्र में छात्रों की ज्ञान-संप्राप्ति को जाँचना होता है। इस परीक्षा का महत्त्वपूर्ण प्रयोजन वर्गीकरण, प्रमाणन और अगली कक्षा में पदोन्नति देना आदि है। इन प्रयोजनों के लिए वार्षिक परीक्षा के साथ आवधिक परीक्षा तथा अर्धवार्षिक परीक्षा के परिणामों को भी उपयुक्त स्थान दिया जाना चाहिए।

4. समेस्टर प्रणाली (Semester system)–सेमेस्टर प्रणाली वह प्रणाली होती है, जिसमें एक सेमेस्टर के लिए निर्धारित पाठ्यक्रम का मूल्यांकन किया जाता है। प्रायः एक शैक्षिक सत्र में दो सेमेस्टर होते हैं। एक सेमेस्टर की सामग्री को दूसरे सेमेस्टर में नहीं जाँचा जाता है। प्रत्येक सेमेस्टर की सामग्री को अलग-अलग निर्धारित कर दिया जाता है। प्रत्येक सेमेस्टर का मूल्यांकन भी अलग-अलग किया जाता है।

5. बोर्ड परीक्षाएँ (Board Examination)–बोर्ड परीक्षाएँ वे परीक्षाएँ होती है। जिनका संचालन विद्यालय शिक्षा बोर्ड द्वारा होता है। प्रत्येक राज्य में विद्यालय शिक्षा बोर्ड द्वारा होता है। प्रत्येक राज्य में विद्यालय शिक्षा बोर्डों का गठन किया गया है। मुख्यतः दसवीं तथा बारहवीं की परीक्षाएँ राज्यों से सम्बन्धित विद्यालयों बोर्डों द्वारा संचालित की जाती है। इन परीक्षाओं का संचालन तथा मूल्यांकन सम्बन्धित बोर्डों द्वारा किया जाता है। बोर्ड की परीक्षा उतीर्ण करने के बाद छात्रों को प्रमाण पत्र प्रदान किया जाता है, जो भविष्य में छात्र के काम आता है।

6. प्रवेश परीक्षा (Entrance Test)–प्रवेश परीक्षा वह परीक्षा होती है जो किसी कक्षा में प्रवेश लने से पहले ली जाती है। जब किसी संस्था में सीटों की संख्या सीमित हो तथा उसमें दाखिला लेने वाले छात्रों की संख्या अधिक होतो उस स्थिति में प्रवेश परीक्षा का आयोजन किया जाता है। प्रवेश परीक्षाएँ बोर्ड तथा विश्वविद्यालयों द्वारा भी ली जाती हैं। कई कोर्स ऐसे होते हैं जिनमें सीटों की संख्या काफी सीमित होती है। उस स्थिति में प्रवेश परीक्षा के माध्यम से उस कोर्स के लिए दाखिला दिया जाता है।

7. राज्य तथा राष्ट्रीय उपलब्धि सर्वेक्षण (State and National Achievement Surveys)–छात्रों की उपलब्धि स्तर को जाँचने के लिए राज्य स्तर पर तथा राष्ट्रीय स्तर पर उपलब्धि सर्वेक्षण किए जाते हैं। बच्चों के न्यूनतम अधिगम स्तर का आकलन किया जाता है। छात्रों से आशा की जाती है कि वे निर्धारित स्तर के आधार पर न्यूनतम अधिगम स्तर प्राप्त करले। आजादी से लेकर अब तक प्राथमिक शिक्षा एक चिन्ता का विषय बना हुआ है। राज्य सरकारों तथा केन्द्र सरकार द्वारा अनेक प्रकार के कार्यक्रम तथा योजनाएँ शुरू की गई हैं ताकि प्राथमिक शिक्षा को सार्वभौमिकरण के लक्ष्य को पूरा किया जा सके। अनेक नए विद्यालय खोले गए है। शिक्षा में गुणात्मकता लाने के लिए अनेक प्रयास किए गए हैं।

Scanned with CamScanner

शिक्षा की गुणात्मकता तथा प्रभावशीलता को जाँचने के लिए राज्य स्तर तथा राष्ट्रीय स्तर पर सर्वेक्षण करवाए गए है। ये सर्वेक्षण इसलिए करवाए जाते है ताकि शिक्षा में आने वाली कठिनाइयों का उपचारात्मक निदान किया जा सके और शिक्षा में गुणात्मकता लाई जा सके। अतः राज्य स्तर पर किए जाने वाली उपलब्धि सर्वेक्षण बच्चों के मूल्यांकन के लिए महत्त्वपूर्ण स्रोत है। इनसे शिक्षा व्यवस्था की कमियों का पता चलता है तथा इन कमियों को दूर करने के लिए निदानात्मक उपचार भी किया जाता है।

8. मूल्यांकन तथा परीक्षाओं का प्रबन्धन (Management of Assessment and Examination)–मूल्यांकन स्कूल प्रबन्ध प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण तन्त्र है। कोई भी कार्य तब तक पूर्ण नहीं माना जा सकता जब तक उसके परिणामों का उचित प्रकार से मूल्यांकन न कर लिया जाए। मूल्यांकन द्वारा हमें इस बात का ज्ञान होता है कि हमने अपने निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक कर ली है। इसके हमें यह भी पता चलता है कि अमुक कार्य में क्या दोष है और किन कारणों से हम वाँछित सफलता प्राप्त नहीं कर सकें।

कक्षा-कक्ष के समुचित रूप में प्रबन्ध हेतु अध्यापक का केवल छात्रों को पढ़ाना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि अध्यापक के द्वारा बौद्धिक रूप से तीव्र छात्रों को पढ़ाना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि अध्यापक के द्वारा बौद्धिक रूप से तीव्र छात्रों को और आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहित एवं प्रेरित करना, समय-समय पर उनकी पढ़ाई की जाँच करना तथा कमजोर या पढ़ाई में पिछड़े छात्रों पर नजर रखना भी अध्यापक का कर्तव्य होता है। इस कर्तव्य को पूरा करने हेतु अध्यापक को गृह परीक्षाओं का उचित रूप में आयोजन करना तथा विभिन्न विषयों से संबंधित प्रश्न-पत्रों के मूल्यांकन के साथ विकास नीति को सुनिश्चित करके छात्रों के कक्षा परिणामों को तैयार करने वाली वार्ता आदि पर भी ध्यान रखना होता है। इसके अतिरिक्त छात्रों के उचित मूल्यांकन हेतु उसे नवीन विधि की परीक्षाओं, विषय से संबंधित बातों और अंकन विधि (Scoring Method) का पर्याप्त ज्ञान भी होना चाहिये।

मुख्याध्यापक को परीक्षाओं के सम्बन्ध में विस्तृत अधिकार प्राप्त होते हैं। निःसन्देह किसी भी विद्यालय में विद्यार्थियों की परीक्षा तथा उन्नति का सम्बन्ध सीधे-सीधे मुख्याध्यापक के साथ होता है।

विद्यार्थियों की प्रगति का मूल्यांकन (evaluation) अध्यापकगण करते हैं। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं हुआ कि इस क्षेत्र में मुख्याध्यापक की स्थिति तथा हस्तक्षेप पूर्णरूप से नगण्य होता है। वास्तव में अध्यापक जो मूल्यांकन करते हैं उस काम की वास्तविक पड़ताल मुख्याध्यापक करता है। यह दायित्व उसे अध्यापकों के कक्षीय कार्य (classroom work) में भागीदार बनाता है।

यदि हम गहराई से अवलोकन करें तो पाएँगे कि आधुनिक शिक्षा प्रणाली में अनेकों दोष हैं। इन दोषों को आधुनिक खोजों के आधार पर दूर करना मुख्याध्यापक का काम है और यह भी मुख्याध्यापक का कर्तव्य है कि वह अध्यापकों को विद्यार्थियों की प्रगति आँकने के लिए विश्वसनीय साधनों के निर्माण के लिए प्रेरित करे।

मुख्याध्यापक को इस बात का विशेष ध्यान रखना है कि वह विद्यार्थियों की उन्नति (Promotion) के लिए कोई भी ऐसा कार्य न करे, जिससे विद्यालय के नियमों तथा प्रतिष्ठा पर आँच आती हो। उसे अनुत्तीर्ण (Fail) विद्यार्थियों के लिए बोधक साधनों की अपेक्षा उपचारात्मक साधनों का प्रोत्साहन देना चाहिए। उसे इस बात को भी देखना है कि कहीं कोई अध्यापक बदले की भावना या ईर्ष्या के कारण किसी विद्यार्थी के साथ अन्याय न कर दे।

बोर्ड की परीक्षाओं का प्रबन्धन सम्बन्धित बोर्ड द्वारा किया जाता है। बोर्ड की परीक्षाओं के आयोजन तथा मूल्यांकन के प्रबन्धक की जिम्मेदारी सम्बन्धित बोर्ड की ही होती है।

पाठ्यक्रम के क्षेत्र जिनका अंकों के लिए परीक्षण नहीं हो सकता (*Curricular Areas that cannot be Tested for Marks*)

पाठ्यक्रम के अनेक क्षेत्र ऐसे हैं जिनका अंकों के लिए परीक्षण नहीं किया जा सकता। इसमें कार्य, स्वास्थ्य, योगा, शारीरिक शिक्षा, संगीत, कला आदि क्षेत्र शामिल है। यद्यपि शारीरिक शिक्षा तथा योगा

Scanned with CamScanner

में कौशल आधारित घटकों का परीक्षण किया जा सकता है, लेकिन स्वास्थ्य पहलुओं के लिए सतत् तथा गुणात्मक आकलन की आवश्यकता पड़ती है। चाहे इन क्षेत्रों में बच्चों को अंक नहीं दिए जाते, फिर भी इन क्षेत्रों में बच्चों के विकास के लिए उनका आकलन किया जाता है। मुख्य रूप से महत्वपूर्ण पाठ्यक्रम के क्षेत्र जिनका अंकों के लिए परीक्षण नहीं किया जा सकता निम्नलिखित हैं–

1. शारीरिक विकास का मूल्यांकन (Evaluation of the physical development) –समय-समय पर छात्र के शारीरिक विकास के माप का महत्त्व है। केवल डाक्टरी निरीक्षण द्वारा ही उन शारीरिक अयोग्यताओं एवं दोषों का पता लगाया जा सकता है, जिनका बुरा प्रभाव पाठ्य-विषयों की प्रगति पर पड़ रहा हो। ऐसा होने पर ही उनके उपचार के लिए पग उठाए जा सकते हैं। शारीरिक विकास का सीधा प्रभाव मानसिक विकास तथा स्कूल की उपलब्धियों पर पड़ता है। अतः यह आवश्यक है कि–

1. प्रत्येक स्तर में नहीं तो कम से कम वर्ष में एक बार छात्रों के शरीर का डाक्टरी निरीक्षण करवाया जाए।
2. शारीरिक दोषों का रिकार्ड रखा जाए उनके उपचार के लिए पग उठाए जाएँ तथा प्रगति का निरीक्षण किया जाए।
3. प्रत्येक छात्र द्वारा खेलों में तथा मल्ल विद्या (Athletics) में लिए गए भाग का रिकार्ड रखा जाए।
4. प्रत्येक छात्र की शारीरिक योग्यता का अनुमान लगाने के लिए मूल्य निर्धारण सूची (Rating scale) प्रयोग में लायी जाए।
5. एक अंशकालिक चिकित्सक की नियुक्ति की जाए। छात्रों की आवयश्कताओं को पूरा करने के लिए डिस्पैंसरी का प्रबन्ध किया जाए।

2. छात्रों के व्यक्तित्व तथा चरित्र विकास का मूल्यांकन (Evaluation ofthePupil's Personality and character Development)–वास्तविक शिक्षा अर्थात् अच्छी शिक्षा, पहल कदमी (Initiative), एकता, लगन, आत्म-विश्वास, भावनाओं पर नियंत्रण, सामाजिक दृष्टिकोण, सच्चाई, उत्साह, परिश्रम, ईमानदारी, आत्म नियंत्रण तथा प्रसन्नता आदि गुणों के विकास पर निर्भर करती है। अतः इन गुणों पर बल देना बहुत आवश्यक है।

यह आवश्यक है कि अध्यापक छात्र के कक्षा के कमरे के भीतर तथा बाहर शैक्षिक कार्य, स्कूल की गतिविधियों, भ्रमण तथा शिविर इत्यादि रुचि तथा व्यवहार का गहन निरीक्षण करे। इसमें अध्यापक की व्यक्ति निष्ठा (Subtectivity) का भी भय है। उसे कम करने के लिए मूल्यांकन तीन पक्षीय (Threefold) किया जाए–

(क) छात्र की डायरी का अवलोकन जिसमें वह अपने दैनिक निरीक्षणों, कुछ अवस्थाओं में उसकी प्रतिक्रिया, व्यक्तिगत अरुचियों तथा रुचियों, महत्त्वपूर्ण घटनाओं तथा विवेकशील विचारों का रिकार्ड रखता है।

(ख) अध्यापक द्वारा एक ही डायरी रखकर अनुमान लगाना जिसमें वह प्रत्येक छात्र के व्यवहार से सम्बन्धित घटनाओं तथा सामाजिक चिह्नों का रिकार्ड रखे। उसका मौन निरीक्षण इस दिशा में अधिक लाभदायक है।

(ग) समय-समय पर व्यक्तित्व का निरीक्षण तथा परीक्षण।

अध्यापक ही प्रत्येक छात्र के व्यक्तित्व के गुण के लिए मिश्रित मूल्य-कार्ड तैयार करेगा।

3. छात्र के सामाजिक विकास का मूल्यांकन (Evaluation of the social Development) –सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक चेतना की ओर अग्रसर करने वाले दृष्टिकोण अथवा विचार जिनमें नागरिकता, अनुशासन, सहयोग तथा सामाजिक सेवा इत्यादि शामिल हैं, सभी प्रजातान्त्रिक ढाँचे में उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं, जितने कि विद्यक उपलब्धियाँ। सामाजिक गुणों के विकास के लिए क्योंकि स्कूल में एक विशेष वातावरण होता है, प्रत्येक छात्र की सामाजिक परिपक्वता में प्रगति के मूल्य का अनुमान लगाना इसका एक

Scanned with CamScanner

शैक्षिक साँख्यिकी
(EDUCATIONAL STATISTICS)

आज मानव के समक्ष अनेक समस्याएँ हैं तथा वह इन समस्याओं का समाधान चाहता है। इसी कारण सांख्यिकीय सिद्धान्त तथा विचारों को दिन-प्रतिदिन प्रोत्साहन दिया जाने लगा है। व्यक्ति की अनेक समस्याएँ ऐसी हैं जिन्हें मात्र अवलोकन से ही नहीं जाना जा सकता है; बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्ति के व्यवहार को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से समझा जा सकता है। एक व्यक्ति का समाज में क्या व्यवहार है ? एक समाज का अन्य समाज से कैसा सम्बन्ध है ? एक धर्म या जाति के व्यक्ति अन्य धर्म जाति के व्यक्तियों के साथ कैसा व्यवहार करते हैं ? इसके अतिरिक्त एक व्यक्ति विभिन्न स्थितियों में कैसा व्यवहार करता है ? आदि समस्याओं का समुचित रूप से समाधान करने के लिए मनोवैज्ञानिक, शिक्षाविद् एवं समाजशास्त्री प्रयत्नशील हैं। इसके अतिरिक्त हम यह भी चाहते हैं कि प्रत्येक स्तर पर एक निश्चित मानक स्थापित किया जावे जिसके द्वारा ज्ञात किया जा सके कि अमुक आयु एवं कक्षा वाले छात्र की प्रामाणिक शिक्षा क्या होनी चाहिए, किसी विशेष अवस्था के बालक के विकास या किसी जनसंख्या की अमुक विशेषता का आलेखीय चित्र किस प्रकार बनेगा। अत: स्पष्ट है कि आज के वैज्ञानिक एवं भौतिकवादी जगत में व्यक्ति के जीवन एवं समाज से सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं—जन्म-मरण दर का अनुमान, प्रति व्यक्ति प्रतिदिन आय, व्यापार में लाभ-हानि, योजनाओं के अनुमान का ब्यौरा, औसत वृद्धि आदि समस्त स्थानों पर सांख्यिकीय विधियों का अनुप्रयोग अत्यन्त आवश्यक हो गया है। आधुनिक युग में तो सांख्यिकी हमारे जीवन का एक अंग बन गयी है। व्यक्ति के जन्म से मृत्यु तक इसका निरन्तर महत्व बना रहता है। व्यावहारिक जीवन तथा ज्ञान-विज्ञान की सभी शाखाओं में सांख्यिकी नियमों एवं विधियों का आज व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है।

सांख्यिकी का अर्थ एवं स्वरूप

सांख्यिकी अंग्रेजी भाषा के शब्द 'स्टेटिस्टिक्स' (Statistics) का हिन्दी अनुवाद है। 'स्टेटिस्टिक्स' लैटिन भाषा के 'स्टेटस' (status) तथा इटैलियन के 'स्टेटिस्टा' (Statista) से जन्मा है। वर्तमान अर्थ में 'स्टेटिस्टिक्स' का प्रयोग सम्भवतया एक शताब्दी पूर्व हुआ। चूँकि 'स्टेटिस्टिक्स' का शब्द 'स्टेट' (State) से सम्बन्धित है अत: यह इंगित करता है कि प्राचीन समय में इस शब्द का प्रयोग राज्य के काम-काज के सन्दर्भ में किया जाता रहा है। राज्य की जनसंख्या गणना, जीवन-मरण अनुपात, कर की दर, आय-व्यय

Scanned with CamScanner

आदि राज्य के अन्य विवरण आँकड़ों द्वारा व्यक्त किये जाते थे। इन्हीं आँकड़ों को 'स्टेटिस्टिक्स' कहा जाता था। शायद इसी आधार पर सांख्यिकी को 'स्टेटिस्टिक्स' (Statistics) कहते हैं।

आज जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्ति सांख्यिकी का अनुप्रयोग अपने-अपने अर्थ लगाकर करता है। **एक साधारण व्यक्ति अथवा गहगीर** (layman) सांख्यिकी को नम्बरों का खेल मात्र समझता है तथा सांख्यिकीशास्त्री को नम्बरों से खेलने वाला खिलाड़ी। एक **अर्थशास्त्री** की दृष्टि में, सांख्यिकी का प्रयोग विभिन्न आर्थिक पहलुओं की मात्रा एवं गुणों का विश्लेषण करने के लिए किया जाता है। **भौतिकशास्त्री** के अनुसार, सांख्यिकी एक ऐसा विषय है जो सत्यता की व्याख्या कम तथा समूह एवं सम्भावना की अभिव्यक्ति अधिक करता है। एक **शिक्षाविद्** सांख्यिकी को ऐसा विषय समझता है जो कि शैक्षिक आँकड़ों को व्यवस्थित क्रम में एकत्र करने की विभिन्न विधियों का अनुप्रयोग करता है। **मनोवैज्ञानिक** के लिए सांख्यिकी, विज्ञान की वह शाखा है जो कि प्रदत्तों की निष्कर्षात्मक व्याख्या करती है एवं उनके विश्लेषण से भिन्न भिन्न निष्कर्ष ज्ञात होते हैं। अतः सांख्यिकीय विधियों का प्रत्येक क्षेत्र में व्यावहारिक रूप से अनुप्रयोग होता है। चूँकि इसके नियम मुख्यतः गणित के नियमों पर आधारित होते हैं, अतः इसके प्रयोग करने वाले को गणितज्ञ की उपाधि देते हैं। वर्तमान में इसका सम्बन्ध किसी एक विषय तक ही सीमित न होकर विभिन्न सामाजिक, भौतिक, जैविक विज्ञानों, कृषि, वाणिज्य आदि से है। आज के प्रचलित सभी विषयों में इसकी व्यावहारिकता सिद्ध हो चुकी है, अतः निःसन्देह कहा जा सकता है कि सांख्यिकी सब विषयों का विषय तथा समस्त विज्ञानों का विज्ञान है।

प्रारम्भ में सांख्यिकी को अर्थशास्त्र की एक शाखा समझा जाता रहा किन्तु आज कोई भी इस कथन में विश्वास नहीं करता है। आज के युग में सांख्यिकी का अध्ययन अन्य स्वतन्त्र विषयों के समान ही आवश्यक है। यह अन्य विज्ञानों के शोध कार्यों में महत्वपूर्ण कार्य करता है। प्रकृतिवादी, जीवशास्त्री, ज्योतिषी, अर्थशास्त्री, प्रकाशक, व्यापारी, कृषक, समाजशास्त्री, शिक्षाशास्त्री, मनोवैज्ञानिक, आयुर्विज्ञानी एवं अभियान्त्रिक आदि अपने-अपने क्षेत्र में प्रदत्तों को सार्थक बनाने के लिए सांख्यिकीय विधियों का सदुपयोग करते हैं। अनेक विषय तो स्वतः ही इसके अन्तर्गत आ जाते हैं। आज यह विषय इतना अधिक विकसित हो चुका है कि प्रत्येक क्षेत्र में इसकी आवश्यकता का अनुभव होने लगा है।

सांख्यिकी वह विज्ञान है जो आँकड़ों के संकलन, विश्लेषण, व्यवस्थापन एवं निष्कर्षों से सम्बन्ध रखता है। **लौविट** (Lovitt) ने सांख्यिकी को इन शब्दों में व्यक्त किया है, "सांख्यिकी वह विज्ञान है जो घटनाओं की व्याख्या, उनका वर्णन तथा उनकी तुलना के लिए आवश्यक आंकिक तथ्यों के संग्रह, वर्गीकरण एवं सारणीयन से सम्बन्ध रखता है।"

("Statistics is the science which deals with the collection, classification and tabulation of numerical facts as the basis for explanation, description and comparison of phenomena.") **सटक्लिफ (Sutcliffe)** के अनुसार, "सांख्यिकी उन तथ्यों के संकलन, वर्गीकरण, प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण से मिलकर बना है जो कि विधिपूर्वक संकलित किये जाते हैं, जिनके संकलन में किसी प्रकार का पक्षपात नहीं किया जाता हो ओर जो एक पूर्व निश्चित उद्देश्य हेतु संकलित किये गये हों।" (Statistics comprises the collection, tabulation, presentation and analysis of an aggregate of facts collected in a methodical manner, without bias and related to a predetermined purpose.) **टाटे (Tate)** लिखते है "सांख्यिकी, अनुसन्धान का उपकरण है जिसका सम्बन्ध आंकिक तथ्यों के संग्रह एवं व्याख्या की विधियों से है।" (Statistics, is a tool in research, which deals with the methods of collecting and interpreting numerical facts.)

उपर्युक्त समस्त परिभाषाएँ सांख्यिकी को विज्ञान के रूप में स्वीकारती हैं। इनके अनुसार, सांख्यिकी **एक ऐसा विज्ञान है जिसमें समस्त तथ्यों से सम्बन्धित प्रदत्तों को एकत्रित किया जाता है,** उन्हें सारणीबद्ध

Scanned with CamScanner

किया जाता है, व्यवस्थित किया जाता है एवं विश्लेषण करके निष्कर्ष ज्ञात किया जाता है जिससे तुलनात्मक अध्ययन संभव हो सके एवं साथ ही साथ निष्कर्षों की सत्यता एवं शुद्धता की भी जाँच की जाती है।

सांख्यिकी का स्वरूप समझने के पश्चात् एक स्वाभाविक विवादास्पद प्रश्न उठता है कि **सांख्यिकी विज्ञान है या कला**। इस प्रश्न के उत्तर में यह कहना न्यायसंगत होगा कि यह कला तथा विज्ञान दोनों है। सांख्यिकी विज्ञान इसलिए है क्योंकि इसकी विधियाँ अन्य विधियों की भाँति मूलरूप से वैज्ञानिक एवं व्यावहारिक हैं। यह कला इसलिए है क्योंकि प्राप्त निष्कर्षों की सफलता, चयन की गयी विधि के प्रयोग, व्यक्ति की क्षमता, योग्यता तथा अनुभव पर आधारित है। अतः इसे दोनों ही वर्गों में सम्मिलित किया जाता है।

सांख्यिकीय चिन्तन

यह निश्चित है कि सांख्यिकी एक विधि है तथा शोध प्रक्रिया के लिए अनिवार्य है। सांख्यिकीय चिन्तन से हमारा आशय है कि किसी समस्या के समाधान के लिए सांख्यिकीय विधियों में प्रयुक्त होने वाले मॉडल, प्रत्यय, परिकल्पनाएँ एवं तार्किक आगमन एवं निगमन का प्रयोग किया जाता है। जब समस्या समाधान के लिए किसी विचार श्रृंखला के निर्माण में सांख्यिकीय के इन उपभागों का प्रयोग किया जाता है, उसी प्रक्रिया को सांख्यिकी चिन्तन कहते हैं। सांख्यिकीय चिन्तन प्रक्रिया में अग्र-प्रत्ययों का प्रयोग होता है।

1. आंकिक तथ्यों का प्रयोग—सांख्यिकीय चिन्तन में तथ्यों को आंकिक रूप में परिवर्तित किया जाता है क्योंकि सांख्यिकीय विधियों के आधार पर प्राप्तांक एवं आँकड़े होते हैं।

2. मॉडल का प्रयोग—सांख्यिकीय चिन्तन में कुछ पूर्व मान्यताओं के आधार पर किन्हीं विशेषताओं के वितरण के निश्चित स्वरूप की कल्पना करते हैं। सांख्यिकीय चिन्तन में यह अवलोकन किया जाता है कि वर्तमान अध्याय में प्राप्त प्रदत्तों का वितरण पूर्व निर्धारित मॉडल के अनुकूल है या प्रतिकूल। इन मॉडल का सामान्य वितरण (normal distribution), टी-वितरण (t-distribution) या एफ-वितरण (F-distribution) आदि के नाम से जाना जाता है।

3. तर्क का प्रयोग—सांख्यिकीय चिन्तन तार्किक होता है क्योंकि इसमें निगमनात्मक एवं आगमनात्मक (deductive and inductive) दोनों विधियों का प्रयोग होता है।

4. परिकल्पना (Hypothesis) का प्रयोग—अपनी-अपनी अन्तर्दृष्टि एवं पूर्व अनुभव के आधार पर सांख्यिकीवेत्ता परिकल्पना की रचना कर लेता है तथा फिर प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर यह देखता है कि उसके द्वारा निर्मित परिकल्पना स्वीकृत हुई या अस्वीकृत। इस जाँच विधि को सांख्यिकीय परिकल्पना का परीक्षण कहते हैं।

5. सम्भावनापूर्ण होना—सांख्यिकीय चिन्तन में प्रत्येक निष्कर्ष सम्भावना के रूप में व्यक्त किया जाता है। चूँकि हम व्यावहारिक विज्ञानों में मानव व्यवहार से सम्बन्धित समस्याओं का अध्ययन करते हैं जो कि सदैव गतिशील होता है, अतः विश्वास के साथ शत-प्रतिशत रूप से सही निष्कर्ष प्रस्तुत नहीं किये जाते हैं, ऐसी स्थिति में सम्भावना का प्रयोग किया जाता है जो सत्य या असत्य की सम्भावना व्यक्त करता है।

6. संकेतों एवं समीकरण का प्रयोग—सांख्यिकीय चिन्तन की शुद्धता के लिए एक निश्चित भाषा का प्रयोग करना पड़ता है। इसका अपना शब्दकोष (vocabulary), संकेत (symbols), समीकरण (equations) है। इसका प्रयोग करने वाले को इसकी भाषा, संकेत आदि का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।

Scanned with CamScanner

सांख्यिकीय अध्ययन हेतु आवश्यक बातें

1. सांख्यिकी शब्द भण्डार (Vocabulary) का जानना—किसी नये विषय को पढ़ने से पहले उसके उचित शब्द भण्डार को जानना बहुत आवश्यक होता है। उसी प्रकार सांख्यिकी में प्रयुक्त शब्दों, प्रत्ययों, चिन्हों आदि को भली-भाँति समझना चाहिए।

2. प्रदत्तों को संगठित करने का ज्ञान होना—सांख्यिकी गणना के अन्तर्गत प्रदत्तों को संगठित करने की योग्यता बहुत महत्व रखती है। इसके अन्तर्गत सूत्रों का प्रयोग तथा उचित व्यवस्था आते हैं।

3. निष्कर्षों को सही ढंग से विवेचित करना—सांख्यिकी परिणाम भी उसी समय लाभदायक हो सकते हैं जबकि वे सही प्रकार से विवेचित किये गये हों। गलत विवेचन द्वारा परिणामों का महत्व ही समाप्त हो जाता है।

4. सांख्यिकीय तर्क (Logic) को समझना—सांख्यिकी एक तर्क विधि है। अत: सांख्यिकी के विद्यार्थियों को इस तर्क को समझने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिए। इस ज्ञान के अभाव में आँकड़ों का व्यवस्थापन तथा निष्कर्ष असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

5. उपयुक्त प्रयोग का ज्ञान होना—सांख्यिकी के छात्रों को इस बात का उचित ज्ञान होना चाहिए कि किस प्रकार के आँकड़ों को किस विधि के द्वारा सूत्रों में प्रयुक्त करें। कहाँ कौन-सी विधि प्रयोग करनी चाहिए, प्रयोग की गई विधि की क्या-क्या सीमाएँ हैं ?

6. सम्बन्धित तथ्यों को जानना—सांख्यिकी का आधार गणित है। अत: सांख्यिकी में प्रयुक्त होने वाले गणित के साधारण नियमों का ज्ञान होना बहुत ही आवश्यक है।

सांख्यिकी की उपयोगिता

1. इसके द्वारा वैज्ञानिक तथा सूक्ष्म वर्णन सम्भव होता है।

2. यह निश्चित विधियों का प्रयोग करती है—वैज्ञानिक शोध तथा सर्वेक्षणों के परिणाम प्रयुक्त विधियों पर आधारित रहते हैं। निश्चित विधियों का प्रयोग करने से हम आवश्यकतानुसार परिणामों का सत्यापन (verification) भी कर सकते हैं। सांख्यिकी विधियों में वस्तुनिष्ठता, शुद्धता एवं संक्षिप्तता पायी जाती है।

3. यह अपने द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की व्याख्या करती है—वास्तविक आँकड़े प्राय: संख्या में अधिक होते हैं तथा इन आँकड़ों से हम किसी विशिष्ट निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकते। परन्तु सांख्यिकी विधियाँ इन प्रदत्तों को संगतिपूर्ण व्यवस्थित करके सार्थक बना देती हैं। सार्थक प्रदत्तों को सुविधापूर्वक समझा जा सकता है और इनसे आवश्यक निष्कर्ष भी निकाले जा सकते हैं।

4. यह पूर्वकथन करने में सहायक होती है—सांख्यिकी से प्राप्त निष्कर्षों की भूतकालीन प्रदत्तों से तुलना करके भविष्य में होने वाले परिवर्तनों की व्याख्या प्रस्तुत कर सकते हैं, जैसे हम यह जानते हैं कि इस समय मृत्यु दर क्या है ? भूतकाल में मृत्यु दर क्या थी ? इन दोनों की सांख्यिकी गणनाओं द्वारा भविष्य की मृत्यु दर ज्ञात कर सकते हैं। पूर्वकथन की सम्भावना त्रुटि को हम प्रामाणिक त्रुटि (SE) के मान से ज्ञात कर सकते हैं। प्रामाणिक त्रुटि सम्भावना से हमारा तात्पर्य यह है कि यदि ज्ञात किये हुए परिणामों में कुछ त्रुटि की सम्भावना है तो उसका मान मालूम हो सकता है। हम इस सम्भावना त्रुटि पर विश्वास कर लेते हैं क्योंकि यह सांख्यिकीय विधियों द्वारा ज्ञात मान है।

5. जटिल समस्याओं का विश्लेषण करती है—प्राय: सामाजिक विज्ञानों के लिए यह सत्य है कि कोई भी व्यवहार एक ही कारण मात्र से नहीं होता है। इस कारण-कार्य (cause effect) के प्राय: अनेकों कारण होते हैं। बहुत से सामाजिक कारकों को हम प्रयोगात्मक विधि द्वारा भी ज्ञात नहीं कर पाते। सांख्यिकी

Scanned with CamScanner

विधियाँ इन जटिल परिस्थितियों से आवश्यक परिणाम निकालने में सहायता करती हैं। अगर हम प्रयोगात्मक विधि द्वारा भी मूल प्राप्तांक (raw scores) तैयार कर लेते हैं तो इन प्रदत्तों से नियम ज्ञात करना, निष्कर्ष निकालना, नियमीकरण आदि करने के लिए सांख्यिकी का प्रयोग करना पड़ता है। **जे. पी. गिलफोर्ड** ने सांख्यिकी के महत्व का विवेचन करते हुए लिखा है कि "सांख्यिकी विधियाँ प्रयोगों की स्थिर साथी हैं।" अत: कहा जा सकता है कि सांख्यिकी विधियों के ज्ञान बिना प्रयोगात्मक तथा शोध कार्य प्राय: असम्भव और अधूरे रहेंगे।

सांख्यिकी की सीमाएँ

1. सांख्यिकीय नियम गणित, भौतिक-विज्ञान, रसायन-विज्ञान आदि के नियमों की भाँति सत्य नहीं है। सांख्यिकी नियम बहुतायत या समूह जाति के लिए ही सत्य होते हैं।

2. सांख्यिकीय विधियाँ अलग-अलग आँकड़ों को महत्व नहीं देती हैं। जब हम यह कहते हैं कि मध्यमान लम्बाई 1.7 मीटर है तो इससे हमारा तात्पर्य यह होता है कि किसी एक समूह के अध्ययन के बाद यह मध्यमान प्राप्त हुआ है। समूह के सभी सदस्यों की लम्बाई 1.7 मीटर मानना गलत होगा।

3. सांख्यिकी में हम गणनात्मक अंकों को ही महत्व देते हैं। जिन गुणों या मापों को हम अंकात्मक दृष्टि से नहीं माप पाते, उन गुणों का हम सांख्यिकीय विधियों द्वारा अध्ययन नहीं कर सकते। लेकिन आजकल सभी प्रकार के मापों को सांख्यिकी विधियों के अन्तर्गत लाया जा रहा है।

महत्वपूर्ण सांख्यिकीय प्रत्यय

1. अंकात्मक प्रदत्त (Numerical Data)—यह प्रदत्त प्राय: दो प्रकार के होते हैं—गणनाश्रित (enumerative) एवं मैट्रिक (metric)। जब हम वस्तुओं को गिन सकें तो इससे प्राप्त आवृत्तियों को **गणनाश्रित प्रदत्त** कहते हैं, जैसे—4 बालक, 1 कलम, 3 स्त्रियाँ आदि। इस प्रकार के प्रदत्तों की गणना शुद्धता के साथ हो जाती है। किन्तु जब वस्तुओं की गणना असम्भव हो एवं उनका मापन सम्भव हो सके उनसे प्राप्त आँकड़ों को हमें **मैट्रिक प्रदत्त** की श्रेणी में सम्मिलित कर लेते हैं; जैसे—1 मीटर कपड़ा, 4 किलो लड्डू, 2 लीटर पानी आदि। यह अंक सामग्री कम शुद्ध रहती है।

2. सांख्यिकीय श्रृंखला (Statistical Series)—जब वस्तुओं को गिनकर या मापकर उन्हें किसी निश्चित क्रम में व्यवस्थित कर दिया जावे तो उस श्रृंखला को हम सांख्यिकीय श्रृंखला कहते हैं। अत: **सांख्यिकीय श्रृंखला** वह प्रत्यय है जिसमें कि हम प्रदत्तों को एक सुनिश्चित (systematic) एवं तार्किक क्रम (logical order) में प्रदर्शित करते हैं।

जब हम प्रदत्तों को उनकी प्रकृति एवं आकार के अनुकूल एकत्रित करते हैं तो इस व्यवस्था को आवृत्ति वितरण कहते हैं। इसमें वर्गान्तर (C.I.) तथा आवृत्तियाँ (f) सम्मिलित रहती हैं। जब प्रदत्तों को समय की उपस्थिति के क्रम में प्रस्तुत किया जावे तो उन्हें **ऐतिहासिक श्रृंखला** कहते हैं; यदि प्रदत्त को उनकी भौगोलिक स्थिति के अनुसार क्रमबद्ध किया जावे तो इस प्रकार की श्रेणी को **दूरी सम्बन्धी श्रृंखला** कहते हैं। जब प्रदत्तों को उनके क्रम एवं गुणों के अनुसार उचित प्रकार से व्यवस्थित किया जावे ; जैसे—बुद्धिलब्धि के अनुसार छात्रों को व्यवस्थित करना अथवा आयु के क्रम में व्यवस्थित करना। इस श्रृंखला को **स्थिति श्रृंखला** (condition series) कहा जाता है। जब अंकों को कम या अधिक किया जा सकता है अर्थात् जिस माप में अनेक खण्ड होने के गुण हों; उसे **निरन्तर श्रृंखला** (continuous series) कहा जाता है—जैसे 5 मीटर कपड़ा, इस 5 मीटर कपड़े को अन्य कई छोटे-छोटे टुकड़ों में भी विभक्त किया जा सकता है, यदि इस कपड़े के एक मीटर के अन्य 5 टुकड़े कर दिये जावें तो सभी पाँचों टुकड़ों की लम्बाई समान होगी। जब दो विभाजित समूहों में अन्तर तो वास्तविक हो किन्तु इस अन्तर को मापनी पर मापा जा सके। इस प्रकार के प्रदत्तों को **खण्डित** (discrete) **श्रृंखला** में शामिल किया जाता है। जैसे हमारे पास

Scanned with CamScanner

3 ऐसे छात्र हैं जिन्होंने क्रमश: 50, 60 एवं 70 अंक प्राप्त किये हैं। यहाँ हम देखते हैं कि 50 एवं 60 अंक प्राप्त करने वाले छात्र में जितना अन्तर है, उतना 60 एवं 70 अंक प्राप्त करने वाले छात्रों में नहीं है।

3. पूर्ण संख्याएँ (Rounded Numbers)—चूँकि सांख्यिकी में सेन्टीमीटर, ग्राम, सैकिण्ड आदि का प्रयोग किया जाता है, अत: यह ज्ञात करना कि दशमलव चिन्ह के बाद कितनी संख्याओं का मान ज्ञात करना चाहिए, एक आवश्यक प्रश्न है। प्राय: दशमलव के बाद दो अंक तक ही गणना की जाती है तथा दूसरे अंक को तीसरे की तुलना में महत्व देते हैं—जैसे .579 को .58 लिखा जाता है। यदि मान 5.456 हो तो 5.46 एवं यदि 5.454 हो तो 5.45 लिखा जावेगा। इसका तर्क यह है कि यदि दशमलव के बाद तीसरा अंक 5 से कम हो तो उसे छोड़ देते हैं, यदि बड़ा हो तो दूसरे अंक के मूल्य में एक बढ़ा देते हैं, किन्तु यदि तीसरा अंक 5 हो तो हमें चौथे अंक को भी देखना पड़ता है। शेष अंकों को वैसे ही छोड़ देते हैं।

4. वास्तविक एवं लगभग संख्याएँ (Exact and Approximate Numbers)—वास्तविक अंक वे हैं जिन्हें हम गिन सकें तथा लगभग संख्याएँ वे हैं जिन्हें हम गिन न सकें, केवल माप सकें। उदाहरणार्थ—बी. ए. के 110 छात्र, 80 पुस्तकें, 300 व्यक्ति वास्तविक संख्याएँ हैं, 1.7 मीटर कपड़ा, 1.6 तथा 1.75 मीटर का लगभग मान है।

5. सार्थक अंक (Significant Figures)—दशमलव अंक अंकों की स्थिति एवं सत्यता स्तर के द्योतक हैं। किसी वस्तु का 47.5 माप, इस बात की सूचना देता है कि सेन्टीमीटर के 10वें भाग तक इस वस्तु की माप की गई है, अतएव इसके अन्तर्गत तीनों अंक सार्थक हैं। यदि किसी वस्तु की माप 47,005 कहें तो इसके अन्तर्गत केवल तीन ही सार्थक अंक हैं, दशमलव के बाद वाले दोनों शून्य केवल मात्र अंक 5 की स्थिति के सूचक हैं। निम्न उदाहरण द्वारा अंकों की सार्थकता को स्पष्ट किया जा सकता है :

213 में तीनों सार्थक अंक हैं।

213.000 में भी तीन (213) ही सार्थक अंक हैं, तीनों शून्य सार्थक अंकों की स्थिति को सूचित करते हैं।

2130.00 में चार सार्थक अंक हैं क्योंकि दशमलव के बाद के शून्य अंक हमें ज्ञात हैं। .213 में तीनों सार्थक अंक हैं।

.2130 में चारों सार्थक अंक हैं, शून्य चौथे अंक की स्थिति को स्पष्ट करता है।

.00213 में तीन (213) सार्थक अंक हैं, प्रथम दो शून्य दशमलव लगाने के लिए लगा दिये गये हैं।

सांख्यिकी के प्रकार

सांख्यिकी की उपशाखाओं का वर्गीकरण दो आधारों पर किया जाता है :

(अ) प्रक्रिया की आधारभूत मान्यताओं के अनुसार

सांख्यिकी के दो रूप प्रचलित हैं—प्राचल (parametric) एवं अप्राचल (non-parametric) सांख्यिकी।

1. प्राचल सांख्यिकी (Parametric Statistics)—इस प्रकार की सांख्यिकी की यह मान्यता है कि जिस समूह का अध्ययन किया जा रहा है उसकी कुछ अटल विशेषताएँ हैं। यदि उपलब्ध प्राप्तांक इस मान्यता के अनुसार है उसी स्थिति में इस प्रकार की सांख्यिकी का प्रयोग सम्भव है अन्यथा नहीं। इसमें इस मान्यता का दृढ़ रूप से प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ, प्रतिदर्श की अनियमितता (randomness of the sample), विचलन की समजातीयता (homogencity of variation), वितरण की सामान्यता (normality of distribution), आदि मान्यताओं के सन्तोषजनक होने पर ही क्रान्तिक अनुपात (critical ratio), टी-परीक्षण (t-test), एफ-परीक्षण (F-test) का अनुप्रयोग वैध है। इसी प्रकार प्रतिगमन की एक

Scanned with CamScanner

खिकता (rectilinearity of regression) एवं विचलन की सम्भागता (homoscedasticity) आदि ान्यताओं के सन्तुष्ट होने पर ही पियरसन r की गणना वैध होती है।

2. अप्राचल सांख्यिकी (Non-parametric Statistics)—जहाँ प्राचल सांख्यिकी की आधारभूत ान्यताओं का पालन नहीं हो पाता, वहाँ ऐसी स्थिति में अप्राचल सांख्यिकी विधियों का अनुप्रयोग किया ाता है। इस प्रकार की सांख्यिकी में किसी प्रकार की मान्यताओं का प्रतिबन्ध दृढ़ नहीं होता है, अत: इसे वितरण मुक्त सांख्यिकी भी कहा जाता है। अप्राचल सांख्यिकियों में मध्यांक, स्पीयरमैन का सह-सम्बन्ध ुणांक, काई-वर्ग परीक्षण, मध्यांक परीक्षण (median test), चिन्ह परीक्षण (sign test), चिन्ह क्रम रीक्षण (sign rank test) उल्लेखनीय हैं।

ब) कार्य के अनुसार

सांख्यिकी के दो रूप प्रचलित हैं—

(1) वर्णनात्मक (descriptive) एवं (2) निष्कर्षात्मक (inferential)।

वर्णनात्मक सांख्यिकी (Descriptive Statistics)—इसके अन्तर्गत किसी समय अथवा वर्ग का अंकात्मक वर्णन किया जाता है। अत: वर्णनात्मक सामग्री किसी व्यक्ति, समूह अथवा वर्ग की प्रकृति, स्वरूप, स्थिति आदि का वर्णन आधारभूत मान्यताओं, सिद्धान्तों, संकेतों एवं सम्बन्धों के आधार पर प्रस्तुत करती है। इसके द्वारा फैले हुए प्रदत्तों को व्यवस्थित रूप से सारणीबद्ध किया जाता है। केन्द्रीय प्रवृत्ति इस ओर इंगित करती है कि समूह के किसी मापन का मध्यमान क्या है ? किसी समूह की आयु, आय, लम्बाई, वजन, बुद्धि, शिक्षा आदि की मध्यस्थनीय प्रवृत्ति क्या है ? मध्यमान (mean), मध्यांक (median) एवं बहुलांक (mode) की गणना इन प्रश्नों का समाधान करती है। सांख्यिकी का दूसरा वर्णनात्मक माप विचलन है। औसत विचलन (A.D.), चतुर्थांश।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. सांख्यिकी के महत्वपूर्ण प्रत्यय कौन-कौन से हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. सांख्यिकी अध्ययन के लिए किन-किन मुख्य बातों को ध्यान में रखना आवश्यक है?
2. सांख्यिकी की वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए। ❑❑

Scanned with CamScanner

4.2

केन्द्रीय प्रवृत्तियों के मापन
(MEASURES OF CENTRAL TENDENCY)

अव्यवस्थित संख्याओं का सारणीकरण करने के पश्चात् उनका आवृत्ति वितरण ज्ञात किया जाता है और केन्द्रीय प्रवृतियों की माप की जाती है। केन्द्रीय प्रतिनिधित्व करता है। विभिन्न विद्वानों ने इसकी व्याख्या विभिन्न प्रकार से की है।

केन्द्रीय प्रवृत्ति माप की दो प्रकार से उपयोगिता है। प्रथमत: यह एक औसत है, जो समूह के कार्य का एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करता है। दूसरे इसके द्वारा हम दो या अधिक समूहों के कार्य की तुलना कर सकते हैं।

"The value of measure of central tendancy is twofold, first it is an 'average' which represents all of the scores made by the group and as such gives a exercise description of the group as a whole and second is enables us to every one two or more groups in terms of typical performance."

सी.सी रौस के अनुसार, "यह प्राप्तांकों की केन्द्र के आस-पास एकत्रित व समूहबद्ध होने की प्रवृत्ति है। यह वह मान है जो सम्पूर्ण आँकड़ों का सर्वोत्तम प्रतिनिधित्व करता है।"

"It is the tendency of the scores to concentrate some where near the centre. It is that value which dypifies or best represents the whole distribution."—**C.C. Ross**

केन्द्रीय प्रवृतियों की शिक्षा में उपयोगिता एवं महत्व (Importance of central tendency)— मनोविज्ञान व शिक्षा के क्षेत्र में केन्द्रीय प्रवृतियों का अत्याधिक महत्व है। परीक्षणों के प्राप्तांकों की तुलना, विश्लेषण आदि के लिए अध्यापक को सांख्यिकी का ज्ञान होना आवश्यक है। केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापों का प्रयोग व उपयोगिता निम्न प्रकार से है—

(1) सामग्री का संक्षिप्त चित्र—केन्द्रीय प्रवृत्ति के विभिन्न माप अंक सामग्री का एक संक्षिप्त चित्र प्रस्तुत करते हैं। इनकी सहायता से साधारण व्यक्ति भी अंकों को शीघ्रता व सरलता से समझ सकता है जबकि उसके लिए अव्यवस्थित आँकड़ों को समझना कठिन होता है।

(2) वर्गों की तुलना—केन्द्रीय प्रवृत्ति मापों की सहायता से दो या दो से अधिक वर्गों की तुलना सरल हो जाती है। दो समूहों के किसी विषय सम्बन्धी केवल प्रदत्तों से ही तुलना करना सम्भव नहीं होता जबकि दोनों के मध्यांक की सहायता से यह कार्य सरल हो जाता है।

(3) सम्पूर्ण समूह का चित्र—इनकी सहायता से सम्पूर्ण समूह की उपलब्धि आदि का पता लगाया जा सकता है तथा उनकी सफलता आदि का अनुमान लगाया जा सकता है।

(4) भावी क्रियाओं व योजनाओं का आधार—इनकी सहायता से ऐसे मूल्य प्राप्त होते हैं जो भावी योजनाओं व क्रियाओं के अनुमान में सहायक होते हैं।

Scanned with CamScanner

(5) गणितीय अथवा सांख्यिकीय क्रियाओं का आधार—जब दो विभिन्न श्रेणियों के सम्बन्ध को अंक गणित के रूप में प्रकट करना होता है, तो इनकी सहायता अनिवार्य हो जाती है।

मध्यमान
(MEAN)

मध्यमान (Mean) या औसत (Average) की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए कहा गया है कि, प्राप्तांकों के वितरण का मध्यमान प्राप्तांक मापदण्ड का वह बिन्दु है जो संख्याओं के योग में उनकी संख्या से भाग देने पर प्राप्त होता है।

"The mean of distribution of scores is the point on the score scale corresponding to the sum of the scores divided by their number."

इंगलिश तथा इंगलिश के अनुसार, "मध्यमान केन्द्रीय प्रवृत्ति का वह माप है जो संख्यात्मक शृंखला की उपलब्ध संख्याओं को जोड़कर संख्याओं के कुल योग से भाग देने पर प्राप्त होता है।"

"A measure of central tendency calculated by dividing the sum of all the values by the number of cases in a statistical series." **—English and English**

इन परिभाषाओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि मध्यमान समस्त प्राप्तांकों के योग में प्राप्तांकों की संख्या से भाग देकर ज्ञात किया जाता है। उदाहरण—स्वरूप एक बालक के विभिन्न विषयों में अंक निम्न रूप से प्राप्त हुए—

हिन्दी-10, गणित-15, सामाजिक अध्ययन-5, अंग्रेजी-6

$$\frac{10+15+5+6}{4} = \frac{36}{4} = 9.00$$

इस प्रकार इस बालक के प्राप्तांकों का मध्यमान 9.00 है। उपर्युक्त मध्यमान अव्यवस्थित (ungrouped) संख्याओं का मध्यमान है जबकि सांख्यिकी में व्यवस्थित (grouped) आँकड़ों से भी औसत निकाला जाता है।

अव्यवस्थित आँकड़ों का मध्यमान (Mean of Ungrouped Data)

जब आँकड़ों वर्गीकृत नहीं होते हैं और प्रत्येक अंक बिना आवृत्ति के दिया हुआ होता है, तब उनका मध्यमान निकालने के लिए संख्याओं को जोड़ दिया जाता है तथा उस योग को उन संख्याओं की गिनती से भाग दे दिया जाता है। इसके लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है—

$$M = \frac{\Sigma x}{N}$$

सूत्र की व्याख्या—

M = मध्यमान (Mean)

Σ = कुल योग (Sum of all)

x = कुल आँकड़े (Total Data)

Σx = आँकड़ों का योग (Total of Scores)

N = आँकड़ों की संख्या (No. of Scores)

Scanned with CamScanner

उदाहरण—कक्षा 9 के विद्यार्थियों के भूगोल की परीक्षा के प्राप्तांक निम्नलिखित प्रकार से हैं—8, 15, 13, 18, 24, 18

$$\text{Mean} = \frac{\Sigma x}{N}$$

$$\Sigma x = 8 + 15 + 13 + 18 + 24 + 18 = 96$$

$$N = 6$$

$$M = \frac{96}{6} = 16$$

मध्यमान = 16 **उत्तर**

व्यवस्थित आँकड़ों का मध्यमान (Mean of Grouped Data)

दीर्घ विधि (Long method)—जब संख्याओं के साथ उनकी आवृत्ति (frequency) दी गयी हो तब संख्याओं को उनकी आवृत्ति से गुणा किया जाता है और गुणनफल के योग को आवृत्तियों (frequencies) के जोड़ से भाग दिया जाता है।

सूत्र— $$M = \frac{\Sigma fx}{N}$$

नोट—यह चिह्न (Σ) ग्रीक भाषा का एक अक्षर दीर्घ सिग्मा (Capital Sigma) है जिसका अर्थ होता है योग।

सूत्र की व्याख्या—

M = मध्यमान (Mean)

Σ = योग (The Sum of)

f = आवृत्ति (Frequency)

fx = आवृत्ति एवं संख्याओं के गुणनफल (Product of Frequency and Scores)

Σfx = आवृत्ति एवं संख्याओं का योग (Sum of the product of Frequency and Scores)

N = कुल आवृत्तियाँ (Total no. of frequencies)

उदाहरण—23 छात्रों के निम्नलिखित प्राप्तांकों का मध्यमान निकालिए।

प्राप्तांक (Scores)	26	25	24	23	22	21	20
छात्र संख्या (No. of students)	1	3	5	7	4	2	1

प्राप्तांक (Scores) x	आवृत्ति (Frequency) f	गुणनफल (Product) fx
26	1	26
25	3	75
24	5	120
23	7	161
22	4	88
21	2	42
20	1	20
	N = 23	Σfx = 532

Scanned with CamScanner

$$\text{मध्यमान (Mean)} = \frac{\Sigma fx}{N} = \frac{532}{23} = 23.13$$

जब संख्याएँ वर्गान्तर (Class Interval) की अवस्था में दी गयी हों, तो मध्यबिन्दु (Midpoint) ज्ञात किया जाता है।

प्राप्तांक (Scores)	आवृत्ति (Frequency)	गुणनफल (Product)	गुणनफल (Product)
38—42	40	6	240
33—37	30	12	420
28—32	30	24	720
23—27	25	12	300
18—22	20	6	123
13—17	15	0	0
		N = 60	Σfx = 1800

$$M = \frac{\Sigma fx}{N} = \frac{1800}{60} = 30$$ उत्तर

संक्षिप्त विधि (Short Method)

संक्षिप्त विधि द्वारा मध्यमान ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र प्रयोग किया जाता है—

$$M = Am + \left(\frac{\Sigma fd}{N}\right) \times i$$

M = मध्यमान (Mean)
Am = कल्पित मध्यमान (Assumed mean)
D = कल्पित मध्यमान से विचलन (Deviation from assumed mean)
f = आवृत्ति (Frequency)
N = आवृत्तियों का योग (Total of frequencies)
I = वर्गान्तर का विस्तार (Length of class interval)

संक्षिप्त विधि द्वारा मध्यमान निकालने के लिए हम निम्न पदों का प्रयोग करते हैं—

(1) सबसे पहले एक कल्पित मध्यमान (Assumed mean) चुनते हैं। यह कल्पित मध्यमान वितरण के मध्य में चुना जाना अच्छा रहता है। अधिकतर हम उस वर्गान्तर के मध्य बिन्दु (mid point) को चुनते हैं, जिसकी आवृत्तियाँ सबसे अधिक होती हैं।

(2) कल्पित मध्यमान ज्ञात करने के पश्चात् विचलन (Deviation) ज्ञात किया जाता है। अर्थात् इससे प्रत्येक वर्गान्तर की दूरी ज्ञात की जाती है। कल्पित मध्यमान की दूरी शून्य (zero) अर्थात् वर्गान्तरों का मान बढ़ता है उस ओर विचलन क्रमशः + 1, + 2, + 3, + 4, आदि लिखा जाता है और वितरण के जिस ओर मध्य बिन्दुओं का मान घटता है उस ओर विचलन क्रमशः – 1, – 2, – 3, – 4, आदि लिखा जाता है।

(3) इस *d* को उसी वर्ग की आवृत्ति (*f*) से गुणा किया जाता है। इस प्रकार *fd* प्राप्त होता है।

Scanned with CamScanner

(4) इस *fd* में दो प्रकार के मान होते हैं—धन (+) अर्थात् शून्य से ऊपर के तथा ऋण (–) अर्थात् शून्य से नीचे के। इन दोनों प्रकार के मानों को अलग-अलग जोड़ा जाता है। इसके पश्चात् धनात्मक तथा ऋणात्मक संख्याओं के योग का अन्तर ज्ञात किया जाता है।

उदाहरण—निम्नलिखित व्यवस्थित आँकड़ों का संक्षिप्त विधि से मध्यमान ज्ञात कीजिए—

C.I.	*f*	*d*	*fd*	
32—34	1	+ 4	4	
29—31	3	+ 3	9	
26—28	1	+ 2	2	+ 15
23—25	0	+ 1	0	
20—22	3	0	0	
17—19	1	– 1	– 1	
14—16	3	– 2	– 6	
11—13	5	– 3	– 15	– 35
8—10	2	– 4	– 8	
5—7	1	– 5	– 5	
	N = 20			

$$M = Am + \frac{\Sigma fd}{N} \times i$$

$$M = 21 + \left[\frac{-20}{20} \times 3\right]$$

$$M = 21 - 1 \times 3 = 21 - 3 = 18$$ **उत्तर**

मध्यांक
(MEDIAN)

किसी वितरण के मध्य बिन्दु को जिसके नीचे 50 प्रतिशत और जिसके ऊपर 50% स्थितियाँ होती हैं मध्यमान कहते हैं। मध्यमान एक बिन्दु है जो वितरण को दो भागों में बाँटता है।

गैरट के अनुसार, "जब अव्यवस्थित प्राप्तांक या अन्य मापन विस्तार क्रम के अनुसार व्यवस्थित हो, तो शृंखला का मध्य बिन्दु मध्यांक कहलाता है।"

"When ungrouped scores of other measures are arranged in order of size, the median is the mid point in the series." **—H.E. Garrett**

"मध्यांक प्राप्तांक मापदण्ड पर वह बिन्दु है, जिसके ऊपर पचास प्रतिशत प्राप्तांक हो और जिसके नीचे भी पचास प्रतिशत प्राप्तांक स्थित हों।"

"Median is that point on the scale of scores, below which are half of the scores lie." **—Lindguist**

मध्यांक की गणना

अव्यवस्थित संख्याओं का मध्यांक—

$$\text{मध्यांक (Median)} = \frac{N+1}{2}$$

N = प्राप्तांकों की संख्या

Scanned with CamScanner

(1) मध्यांक ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम दिए हुए अंकों को आरोही (Ascending) अथवा अवरोही (Descending) क्रम में व्यवस्थित किया जाता है।

(2) 'N' प्राप्तांकों की संख्या में एक जोड़कर उसे दो से भाग देकर भजनफल ज्ञात किया जाता है।

(3) भाग देने पर प्राप्त संख्या का मान मध्यांक होता है। इस संख्या को किसी भी ओर से गिना जा सकता है।

उदाहरण—निम्नलिखित संख्याओं का मध्यांक ज्ञात कीजिए।

15, 21, 17, 13, 22, 25, 18

संख्याओं का आरोही क्रम—13, 15, 17, 18, 21, 22, 25

$$\text{Median} = \left(\frac{N+1}{2}\right)^{th} \text{ term} = \left(\frac{7+1}{2}\right)^{th} \text{ term}$$

$$= \frac{8}{2}^{th} \text{ term} = 4^{th} \text{ term}$$

क्रम में रखे हुए प्राप्तांकों का चौथा पद (Term) 18 है किसी भी ओर से मिलने वाली चौथी संख्या 18 है इसलिए मध्यांक 18 है।

व्यवस्थित संख्याओं का मध्यांक निकालने का सूत्र निम्नलिखित है—

$$Md = L + \frac{\left(\frac{N}{2} - F\right)}{fm} \times i$$

Md = मध्यांक (Median)

L = मध्यांक वाले वर्गान्तर की ठीक निम्न सीमा (Exact lower limit of the C.I. in which median lies)

F = मध्यांक वाले वर्गान्तर से नीचे वाली आवृत्तियों का योग (Sum of frequencies below) or (cumulative frequency below)

fm = मध्यांक वाले वर्गान्तर की आवृत्ति (Frequency with in the class interval in which the median falls)

i = वर्गान्तर का विस्तार (Length of the class Interval)

N/2 = कुल प्राप्तांकों का आधा भाग (One half of the total number of frequencies in scores)

मध्यांक निकालने के विभिन्न चरण निम्नलिखित हैं—

(1) संचयी आवृत्ति (Cumulative frequencies) ज्ञात करना।

(2) N/2 का मान ज्ञात करना।

(3) संचयी आवृत्ति वाले वर्ग को देखकर यह ज्ञात करना कि N/2 का मान किस वर्गान्तर में है—वही मध्यांक का वर्ग होगा।

(4) यह ज्ञात करने के पश्चात् कि मध्यांक किस वर्गान्तर में है F *fm* तथा *i* के मूल्यों को ज्ञात किया जा सकता है तथा सूत्र में रखकर मध्यांक की गणना की जा सकती है।

Scanned with CamScanner

उदाहरण—निम्नलिखित व्यवस्थित अंकों का मध्यांक ज्ञात कीजिए।

Class Interval	Frequency	Cumulative Frequency
45—49	2	30
40—44	3	28
35—39	5	25
30—34	2	20
25—29	6	11
20—24	4	5
15—19	1	1
	N = 30	

$$\text{Median} = L + \frac{\left(\frac{N}{2} - F\right)}{fm} \times i = 29.5 + \left(\frac{15 - 11}{9}\right) \times 5$$

$$= 29.5 + \frac{4}{9} \times 5 = 29.5 + 2.22 = 31.7$$

बहुलांक
(MODE)

बहुलांक वह अंक है जिसकी आवृत्ति वितरण में सर्वाधिक होती है अवर्गीकृत आँकड़ों में बहुलांक वह प्राप्तांक है, जो सबसे अधिक बार घटित होता है। इसे अशोधित बहुलांक कहते हैं और यह प्राय: वितरण के केन्द्र के पास स्थित होता है।

गैरट के अनुसार, "मध्यांक अव्यवस्थिति श्रृंखला का वह एकमात्र मापन या प्राप्तांक होता है जो सर्वाधिक बार घटित होता है।"

"In a ungrouped series mode is that single measure or score which occurs most frequently." **–Garrett**

इंगलिश तथा इंगलिश के अनुसार, "किसी आवृत्ति वितरण का बहुलांक प्राप्तांक मापनी का वह बिन्दु है जो अन्य आवृत्ति मूल्यों की अपेक्षा अधिक बड़ा है। यह श्रृंखला का सर्वाधिक सामान्य मूल्य (मान) या मूल्य वर्ग अथवा आवृत्ति वक्र का शीर्षस्थ मान है।"

"A mode in a frequency distribution is a part on the score scale corresponding to a frequency which is large in relation to other frequency values. It is the most common value or class of value in series or the peak in frequency curve." **—English and English**

उदाहरण—निम्नलिखित प्राप्तांकों का बहुलांक ज्ञात कीजिए।

प्राप्तांक (Scores)	6,	9,	8,	17,	22,	22,	18,	20,	30,	40
		40,	30,	22,	20,	18,	17,	9,	8,	6
आवृत्ति (Frequency)		1	1	2	1	1	1	1	1	1

उपर्युक्त अंक सामग्री में 22 की आवृत्ति सबसे अधिक है अत: इसका मध्यांक 22 है।

Scanned with CamScanner

व्यवस्थित प्राप्तांकों का बहुलांक (Mode of Grouped Scores)

सूत्र—(1) Mode = 3 Median – 2 mean

सूत्र—(2) $$\text{Mode} = L + \frac{f_1 - f_0}{(f_1 - f_0) + (f_1 - f_2)} \times i$$

$$= L + \frac{f_1 - f_0}{2f_1 - f_0 - f_2} \times i$$

L = उस वर्गान्तर की निम्नतम सीमा जिसकी आवृत्तियों की संख्या सबसे अधिक है। (Lower limit of the class interval in which mode lies)

fi = जिस वर्गान्तर में बहुलांक हो, उसके सामने की आवृत्ति (Frequency of the class interval lower than the modal class)

f_0 = बहुलांक मान वाले वर्गान्तर के नीचे वाले वर्गान्तर की आवृत्ति (Frequency of the calss interval lower than the modal calss)

f_2 = बहुलांक मान वाले वर्गान्तर के ऊपर वाले वर्गान्तर की आवृत्ति (Frequency of the class interval higher than the modal class)

i = वर्गान्तर का विस्तार (Length of the class interval)

निम्नलिखित व्यवस्थित प्राप्तांकों का बहुलांक ज्ञात कीजिए—

Class Interval	Frequencies	*ef*	*d*	*f* × *d*
40—44	3	24	+ 3	9
35—39	4	21	+ 2	8
30—34	7	17	+ 1	7
25—29	3	10	0	
20—24	3	7	– 1	– 3
15—19	2	4	– 3	– 4
10—14	1	2	– 3	– 3
5—9	1	1	– 4	– 4

$$\text{Mean} = \text{Am} + \left(\frac{\Sigma fd}{N}\right) \times i = 27 + \frac{10}{24} \times 5$$

$$= 27 + \frac{50}{24} = 27 + 2.08 = 29.08$$

$$\text{Median} = L + \left(\frac{N/2 - F}{fm}\right) \times i$$

$$= 29.5 + \left(\frac{12 - 10}{7}\right) \times 5$$

$$= 29.5 + \frac{10}{7}$$

$$= 29.5 + 1.43 = 30.93$$

Scanned with CamScanner

$$\text{Mode} = 3 \text{ median} - 2 \text{ mean}$$
$$= 3 \times 30.93 - 2 \times 29.08$$
$$= 92.79 - 58.16 = 34.73$$

$$\text{Mode} = L + \frac{f_1 - f_0}{(f_1 - f_0) + (f_1 - f_2)} \times i$$

$$= 29.5 + \frac{7-3}{(7-3)+(7-4)} \times 5$$

$$= 29.5 + \frac{4}{4+3} + 5 = 29.5 + 2.86$$

$$= 32.36$$

नोट—पहले और दूसरे सूत्र की सहायता से प्राप्त बहुलांक भिन्न है ऐसा स्वाभाविक है। किसी भी सूत्र की सहायता से बहुलांक प्राप्त किया जा सकता है।

केन्द्रीय प्रवृत्तियों की उपयोगिता (Use of Various Measures of Central Tendency)

मध्यमान की उपयोगिता

(1) मध्यमान को निकालना सरल है और प्रत्येक दशा में इसे निर्धारित किया जा सकता है।

(2) मध्यमान की गणना उस समय अधिक उपयोगी होती है। जब प्रदत्तों का वितरण समान है। किसी एक ओर उसका झुकाव नहीं है।

(3) मध्यमान सबसे अधिक विश्वसनीय मान है। इसकी गणना सम्पूर्ण आँकड़ों के आधार पर की जाती है। जब विश्वसनीय केन्द्रीय प्रवृत्ति मान की गणना करनी हो तब मध्यमान का उपयोग करना चाहिए।

(4) जब प्रमाणिक विचलन, सह-सम्बन्ध गुणांक आदि की गणना करनी होती है तब इसका प्रयोग करना चाहिए।

मध्यांक की उपयोगिता

(1) वर्ग विस्तार (Range of Class Interval) के मान को ज्ञात करने के लिए मध्यांक उपयोगी होता है।

(2) मध्यांक में निश्चितता अधिक होती है। अंक सामग्री का मध्यबिन्दु बड़ी सुगमता एवं निश्चितता के साथ निर्धारित किया जा सकता है।

(3) जब वितरण पूर्ण नहीं होता तो मध्यमान ज्ञात नहीं किया जा सकता; तब मध्यांक ही निकालना चाहिए।

(4) मध्यांक में अगले तथा पिछले पदों के मूल्य में परिवर्तन आ जाने पर मध्य का मान नहीं निकलता है।

(5) मध्यांक अधूरे आँकड़ों से भी मापा जा सकता है। यदि मध्यांक वर्ग (Median) के अतिरिक्त कुछ वर्गों की आवृत्ति अज्ञात हो, फिर भी मध्यांक ज्ञात किया जा सकता है।

बहुलांक की उपयोगिता

(1) जब बहुत कम समय में केन्द्रीय आवृत्ति का मान ज्ञात करना हो। तब बहुलांक निकालना चाहिए। क्योंकि बहुलांक की गणना सरल है। यह सबसे अधिक आवृत्ति वाले वर्गान्तर का मान होता है।

Scanned with CamScanner

(2) किसी भी पद में साधारण परिवर्तन आ जाने से बहुलांक पर विशेष प्रभाव नहीं पड़ता।

(3) निकटतम (Approximate) केन्द्रीय मान निकालने में इसकी गणना करना उपयुक्त होता है।

(4) प्रदत्तों के वितरण के उच्चतम तथा निम्नतम अंक ज्ञात होने पर बहुलांक से शुद्धता ज्ञात हो सकती है।

(5) बहुलांक का प्रयोग विज्ञान, जीव विज्ञान की अंक सामग्री में किया जाता है। व्यापारिक क्षेत्रों में इसकी बहुत उपयोगिता है।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. व्यवस्थित एवं अव्यवस्थित आँकड़ों से मध्यमान निकालने की विभिन्न विधियों का विवरण दीजिए।
2. निम्नलिखित व्यवस्थित अंक सामग्री का मध्यमान (Mean), मध्यांकमान (Median) तथा बहुलांकमान (Mode) ज्ञात कीजिए–

Scores	f
40–44	5
35–39	7
30–34	9
25–29	12
20–24	6
15–19	5
10–14	4
5–9	0

उत्तर—Mean = 28.04, Median = 28.25, Mode = 28.67

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. केन्द्रीय प्रवृत्तियों की शिक्षा में क्या उपयोगिता है?
2. बहुलांक से क्या आशय है?
3. केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक से क्या तात्पर्य है?
4. केन्द्रीय प्रवृत्ति के मापक कितने प्रकार के होते हैं?

❑❑

Scanned with CamScanner

4.3

विचलनशीलता के माप
(MEASURES OF VARIABILITY)

केन्द्रीय प्रवृत्ति के मानों से हमें महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ तो प्राप्त होती हैं परन्तु इनसे आँकड़ों की सही स्थिति पूर्णत: स्पष्ट नहीं हो पाती। क्योंकि ये माप हमें यह नहीं बता पाते कि प्रदत्तों में कितनी पारस्परिक भिन्नता अथवा समानता है और प्राप्तांक मध्यमान से कितनी दूर या पास हैं। कितने कम हैं या कितने अधिक हैं इस प्रकार एक समूह की दूसरे समूह से तुलना करना भी कठिन हो जाता है। यह कार्य विचलन के मापों की सहायता से सरल हो जाता है। इन मापों को विभिन्न नामों से सम्बोधित किया जाता है। जैसे—प्रसार, विक्षेपण, भिन्नता या विचलन के माप (Measures of spreadness, variability, variation or deviation.)

विचलन का अर्थ अन्तर से होता है। यह अन्तर अनेक प्रकार का हो सकता है—

(1) एक श्रेणी के प्रत्येक पद की संख्याओं के आपसी अन्तर को विचलन कहते हैं।

(2) एक श्रेणी के उच्चतम अंक और न्यूनतम अंक के अन्तर को विचलन कहते हैं।

(3) एक श्रेणी के मध्यमान से उस श्रेणी के विभिन्न प्राप्तांकों के अन्तर को विचलन कहते हैं।

रेमन (Reigheman) ने विचलन की परिभाषा इस प्रकार से दी है—

"विचलन एक सीमा है, जो पदों के गुणों में अन्तर बताती है अर्थात् यह भिन्नता या अन्तर का माप है।"

"Dispersion is the extent to which the magnitude or qualities of the item differ, that is the degree of diversity."

गैरट के अनुसार, "विचलन विभिन्न प्राप्तांकों का केन्द्रीय माप के चारों और फैलाव या प्रसार है।"

"Variability is the 'seatter' or 'spread' of the separate scores around their central tendancy." **–Garret**

विचलन के मापकों का प्रकार (Kinds of Measures of Variability)

विचलन मान ज्ञात करने की चार प्रमुख विधियाँ हैं—

(1) प्रसार क्षेत्र (Range)

(2) चतुर्थांश विचलन (Quartile Deviation)

(3) औसत या मध्यमान विचलन (Average or Mean Deviation)

(4) मानक या प्रामाणिक विचलन (Standard Deviation)

प्रसार
(RANGE)

प्राप्तांकों की उच्चतम व निम्नतम सीमा के मध्य की दूरी को प्रसार क्षेत्र कहते हैं। यह विचलन का सबसे सरल और सामान्य मान है।

Scanned with CamScanner

सूत्र— विस्तार (Range, R) = उच्चतम प्राप्तांक (Highest Score)
– निम्नतम प्राप्तांक (Lowest Score)

उदाहरण—निम्नलिखित प्राप्तांकों का प्रसार क्षेत्र ज्ञात कीजिए—

40, 35, 60, 51, 42, 62, 75, 85

विस्तार (Range, R) = उच्चतम प्राप्तांक (Highest Score)
– निम्नतम प्राप्तांक (Lowest Score)

= 85 – 35 = 50 **उत्तर**

चतुर्थांश विचलन
(QUARTILE DEVIATION—QD)

चतुर्थांश विचलन का मान प्रथम चतुर्थांश (Q) तथा तृतीय चतुर्थांश (Q_3) के अन्तर के बराबर होता है। उदाहरण–स्वरूप यदि श्रृंखला में प्राप्तांकों की कुल संख्या 100 है, तो उन्हें 25, 25 के चार समूहों में बाँटा जा सकता है। सबसे नीचे के 25 प्राप्तांकों अथवा 25% प्राप्तांकों को प्रथम चतुर्थांश (Q_1) तथा उसके ऊपर के दूसरे 25% प्राप्तांकों को द्वितीय चतुर्थांश (Q_2) कहते हैं। यही मध्यांक (Median) भी होता है। इसी प्रकार नीचे से 75% प्राप्तांकों को तृतीय चतुर्थांश (Q_3) कहा जाता है।

गैरट के अनुसार, "चतुर्थांश विचलन किसी आवृत्ति-वितरण के प्रथम और तृतीय चतुर्थांश के अन्तर का आधा होता है।"

"The quartile deviation (Q) one-half of the scale distance between the 75th and 25th percentile in a frequency distribution." **—Garret**

स्किनर के अनुसार, "चतुर्थांश के तीन बिन्दु हैं जो संख्याओं के वितरण को चार बराबर भागों में बाँटते हैं।

"Quartile are three points that divide a distribution into four equal portions." **—Skinner**

सूत्र (Formual)—

$$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2}$$

Q = चतुर्थांश विचलन (Quartile Deviation)
Q_3 = तृतीय चतुर्थांश (Third Quartile)
Q_1 = प्रथम चतुर्थांश (First Quartile)

प्रथम तथा तृतीय चतुर्थांश ज्ञात करने का सूत्र—

$$Q_1 = L + \frac{N/4 - F}{fq} \times i$$

$$Q_3 = L + \frac{3N/4 - F}{fq} \times i$$

Q_1 = प्रथम चतुर्थांश (First Quartile)
Q_3 = तृतीय चतुर्थांश (Third Quartile)
N/4 = कुल आवृत्तियों का 25% (25% of total frequencies)
8N/4 = कुल आवृत्तियों का 75% (75% " " ")

Scanned with CamScanner

q = उस वर्गान्तर की वास्तविक निम्नतम सीमा जिसमें Q_1 या Q_3 है। (Exact lower limit of c.i. in which Q_1 or Q_3 falls)

fq = चतुर्थांश वाले वर्गान्तर की आवृत्तियाँ (Frequency of the Interval containing Quartile)

f = चतुर्थांश वाले वर्गान्तर के नीचे की संचयी आवृत्तियाँ (Cumulative Frequencies to the Interval Containing Quartile)

i = वर्गान्तर का विस्तार (Length of Class Interval)

व्यवस्थित प्राप्तांकों मे चतुर्थांश विचलन (Q) ज्ञात करने के लिए सबसे पहले Q_1 तथा Q_3 की गणना करते हैं। इसके लिए सबसे पहले दी हुई आवृत्तियों को संचयी आवृत्तियों (Cumulative Frequencies) में परिवर्तित कर लेते हैं। संचयी आवृत्तियों को बना लेने के पश्चात् संचयी आवृत्तियाँ देखकर यह पता लगाया जाता है कि Q_1 तथा Q_3 किन वर्गान्तरों में है। N/4 के मान की सहायता से Q_1 ज्ञात किया जाता है और फिर Q_3 ज्ञात किया जाता है।

निम्नलिखित व्यवस्थित प्राप्तांकों का चतुर्थांश विचलन ज्ञात कीजिए।

वर्गान्तर (Class Interval)	आवृत्ति (Frequency)	संचयी आवृत्तियाँ (Cumulative Frequencies)
100—104	4	40
95—99	2	36
90—94	2	34
85—89	5	32 ← Q_3
80—84	3	27
75—79	2	24
70—74	1	22
65—69	3	21
60—64	10	18 → Q_1
55—59	2	8
50—54	2	6
45—49	2	4
40—44	2	2

$$Q_1 = L + \frac{N/4 - F}{fq} \times i$$

$$= 59.5 + \frac{10-8}{10} \times 5 = 59.5 + \frac{2\times5}{10}$$

$$= 59.5 + 1 = 60.5$$

$$Q3 = L + \frac{3N/4 - F}{fq} \times i$$

Scanned with CamScanner

$$= 84.5 + \frac{30-27}{5} \times 5$$

$$= 84.5 + \frac{3\times5}{5}$$

$$= 84.5 + 3 = 87.5$$

$$Q = \frac{Q_3 - Q_1}{2} = \frac{87.5 - 63.5}{2} = 13.5$$

Scanned with CamScanner

प्रमाणिक विचलन
(STANDARD DEVIATION)

विचलन मापकों में प्रमाणिक विचलन सबसे उत्तम समझा जाता है। प्रसार, मध्यमान विचलन तथा चतुर्थांश विचलन, समजातीयता व विषम जातीयता (Homogenity and Heterogeneity) ज्ञात करने के लिए प्रयोग किए जाते हैं परन्तु प्रमाणिक विचलन एक श्रेष्ठ माप होने के कारण अनुसंधानों में अधिक प्रयोग किया जाता है। इसमें मध्यमान विचलन को ऋण चिह्न (–) को धन चिह्न (+) मानकर जोड़ने का भी दोष दूर हो जाता है।

रीकमैन के अनुसार, " प्रमाणिक विचलन को वर्गमूल मध्यमान वर्ग विचलन भी कहते हैं। यह वितरण के मध्यमान से सब विचलनों के वर्गमूल का औसत होता है।"

"The standard deviation is also called root mean square deviation. It is the square root of the mean value of the square of all the deivation from the distribution mean."

—Reichmann

जेम्स ड्रेवर के अनुसार, "श्रेणी के मध्यमान से प्रत्येक अंक के विचलनों के वर्गों के मध्यमान का वर्गमूल ही प्रमाणिक विचलन है।"

"Standard deviation is the square root of mean of the squares of individuals deviations from the mean in a series."

—James Drever

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि प्रमाणिक विचलन किसी समूह के प्राप्तांकों के मध्यमान से लिए गए विचलनों के वर्ग (Square deviation) का औसत है। सामान्यत: प्रमाणिक विचलन को सिग्मा σ (Sigma) से सूचित करते हैं।

Scanned with CamScanner

अव्यवस्थित आँकड़ों का प्रमाणिक विचलन ज्ञात करने की विधि

सूत्र—

$$\text{S.D.} = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}}$$

S.D. = प्रमाणिक विचलन (Standard Deviation)

Σ = कुल योग (Sum of)

d_2 = विचलन का वर्ग (Square of deviation)

N = प्राप्तांकों की संख्या (Number of Scores)

इस विधि द्वारा S.D. ज्ञात करने के लिए सबसे पहले प्राप्तांकों का मध्यमान निकालते हैं। इसके पश्चात् प्राप्तांकों के मध्यमान से विचलन (d) ज्ञात करते हैं। विचलन ज्ञात करने के पश्चात् विचलन (d) वर्ग को (d^2) में बदलते हैं फिर सब वर्गों का योग कर देते हैं। इसके पश्चात् वर्गों के योग (Σd^2) को प्राप्तांकों की संख्या से भाग देते हैं। भजनफल का वर्गमूल (Square root) निकाल कर प्रमाणिक विचलन ज्ञात किया जाता है।

उदाहरण—निम्नलिखित अव्यवस्थित प्राप्तांकों का प्रमाणिक विचलन ज्ञात कीजिए।

16, 11, 13, 8, 9

$$m = \frac{16+11+13+8+9}{5}$$

$$= 11.11 = 11$$

प्राप्तांक (Score)	मध्यमान (Mean)	विचलन $d(x-m)$ (Deviation)	
16	11	5	25
11	11	0	0
13	11	2	4
8	11	3	9
9	11	2	4
			42

$$\text{S.D.} = \sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}} = \sqrt{\frac{42}{5}}$$

व्यवस्थित आँकड़ों का प्रमाणिक विचलन (Calculation of S.D.) from grouped scores)—व्यवस्थित आँकड़ों या प्राप्तांकों का प्रमाणिक विचलन ज्ञात करने की निम्नलिखित दो विधियाँ हैं—

दीर्घ विधि (Long Method)—

सूत्र—

$$\text{S.D.} = \sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{}}$$

Scanned with CamScanner

S.D. = प्रमाणिक विचलन (Standard Deviation)

Σ = कुल योग (Sum of)

f = वर्गान्तर की आवृत्ति (Frequency of class interval)

d = मध्यमान से विचलन (Deviation from mean)

m = आवृत्तियों का कुल योग (Sum of frequencies)

इस विधि से सबसे पहले प्राप्तांकों का मध्यमान ज्ञात किया जाता है। इसके पश्चात् प्रत्येक वर्गान्तर का मध्यबिन्दु ज्ञात किया जाता है। फिर प्रत्येक वर्गान्तर का मध्यमान से विचलन (d) ज्ञात कर लिया जाता है।

उदाहरण—निम्नलिखित व्यवस्थित प्राप्तांकों का प्रमाणिक विचलन ज्ञात कीजिए।

C.I.	f	d	fd	fd^2
82—86	2	5	10	50
77—81	0	4	0	0
72—76	3	3	9	27
67—71	7	2	14	28
62—66	12	1	12 (45)	12
57—61	18	0	0	0
52—56	15	− 1	− 15	15
47—51	8	− 2	− 16	32
42—46	3	− 3	− 9	27
37—41	1	− 4	− 4 (− 44)	16

$$\text{S.D. or } (\sigma) = i\sqrt{\frac{\Sigma fd^2}{N} - \left(\frac{\Sigma fd}{N}\right)^2} = 5\sqrt{\frac{207}{69} - \left(\frac{1}{69}\right)^2}$$

$$= 5\sqrt{3-(.01)^2} = 5\sqrt{3-.0001}$$

$$= 5\sqrt{2.9999} = 5 \times 1.73 = 8.65$$

उत्तर

विभिन्न विचलन मापकों की उपयोगिता
(UTILITY OF VARIOUS MEASURES OF VARIABILITY)

1) प्रसार क्षेत्र की उपयोगिता (Utility of Range)

(i) प्रसार विचलन का सबसे सरल माप है। इसका प्रयोग तभी किया जाता है जब विचलन की शीघ्रता से अनुमान लगाना हो।

(ii) जब आँकड़े बहुत बिखरे हुए हों तथा आरम्भिक तथा अन्तिम संख्या को महत्व देना हो।

(iii) जब संख्याओं का कुल प्रसार ज्ञात करना हो।

2) चतुर्थांश विचलन की उपयोगिता (Utility of Quartile Deviation)

(i) जब विचलन ज्ञात करने के लिए सभी पद उपलब्ध नहीं हों अर्थात् वितरण पूर्ण नहीं हो।

Scanned with CamScanner

4.4

सह-सम्बन्ध गुणांक
(COEFFICIENT OF CORRELATION)

मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक सांख्यिकी में जिस अंक के द्वारा किन्हीं दो चरों, व्यक्तियों, शीलगुणों आदि के आपसी सम्बन्धों को व्यक्त किया जाता है, उसे सह-सम्बन्ध गुणांक (coefficient of correlation) कहते हैं। यह एक ऐसा संकेतांक (index) है जो कि दो चरों के बीच में होने वाले सह सम्बन्ध के गुण (quality) तथा मात्रा (quantity) को इंगित करता है। जब पियरसन की विधि द्वारा सह सम्बन्ध ज्ञात किया जाता है तब यह सह-सम्बन्ध गुणांक r के संकेत से एवं जब स्पीयरमैन की विधि का प्रयोग होता है, तब यह ग्रीफ अक्षर ρ (rho रो) के रूप में प्रयोग किया जाता है।

सह-सम्बन्ध गुणांक का विस्तार
(MAGNITUDE OF CORRELATION)

सह-सम्बन्ध गुणांक का एक निशिचर प्रसार होता है। यह सदैव ± 1 के मध्य में होता है अर्थात् यह - 1.00 से कम तथा + 1.00 से अधिक नहीं होता है। धनात्मक एवं ऋणात्मक सह-सम्बन्ध की उच्चतम एवं निम्नतम सीमाएँ तथा भिन्न-भिन्न मान निम्न चित्र में स्पष्ट हैं—

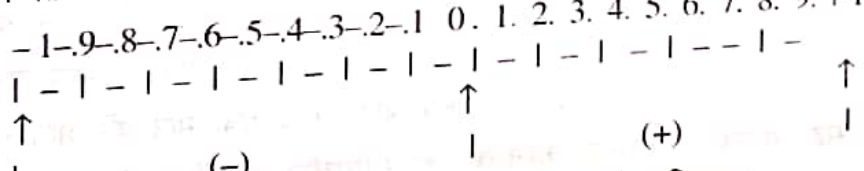

चित्र—सह-सम्बन्ध गुणांक विस्तार

अत: यह स्पष्ट है कि सह-सम्बन्ध गुणांक इन सीमाओं के मध्य में किसी भी मूल्य के समान हो सकता है। उदाहरणार्थ, विभिन्न स्थितियों में r का मान + .86, + .94, + .72, + .51, + .34, + .12, .00, - .17, – .28, – .48 या –.97 हो सकता है किन्तु किसी भी स्थिति में पूर्ण + 1.00 या – 1.00 नहीं हो सकता है। अतएव सह-सम्बन्ध गुणांक – 1.00 → 00 → + 1.00 की निरन्तरता की मापनी पर कहीं भी हो सकता है।

सह-सम्बन्ध गुणांक की व्याख्या
(MAGNITUDE OF INTERPRETATION)

सह-सम्बन्ध गुणांक की व्याख्या, इसके साथ वाले चिह्न और इसके मान पर आधारित होती है सह-सम्बन्ध गुणांक से पूर्व लगे चिह्न से सम्बन्ध की दिशा का पता लगाते है अर्थात् सह-सम्बन्ध धनात्मक है अथवा ऋणात्मक है और सह-सम्बन्ध के मान से सम्बन्ध की घनिष्ठता का पता लगता है अर्थात् सह-सम्बन्ध गुणांक 1.00 के जितना समीप होगा, सम्बन्ध उतना ही अधिक घनिष्ठ होगा।

Scanned with CamScanner

सह-सम्बन्ध गुणांक मात्रा में जितना कम होगा, दो चरों में आपसी सम्बन्ध उतने ही कम होंगे। + 1.00 पूर्ण धनात्मक सह-सम्बन्ध (perfect positive) तथा – 1.00 पूर्ण ऋणात्मक सह-सम्बन्ध (perfect negative) का सूचक माना जाता है। जब गुणांक शून्य होता है तो दोनों में कोई सम्बन्ध नहीं होता है। इसका आशय यह हुआ कि दोनों चर एक-दूसरे से पूर्णरूप से स्वतन्त्र हैं तथा एक का दूसरे पर कोई प्रभाव नहीं होता है। व्यापक रूप में जब सह-सम्बन्ध गुणांक ± .5 से ऊपर अर्थात् ± 1.00 की ओर होता है तो यह उच्च धनात्मक या उच्च ऋणात्मक सह-सम्बन्ध को तथा जब ± .5 से कम परन्तु शून्य की ओर होता है तो यह निम्न धनात्मक या निम्न ऋणात्मक सह-सम्बन्ध गुणांक कहा जाता है। गिलफोर्ड ने सह-सम्बन्ध गुणांक की मात्रा के आधार पर सह-सम्बन्ध को अग्र श्रेणियों में वर्गीकृत किया है—

गुणांक (coefficient)	सह-सम्बन्ध (relationship)
.00 ± .20 तक	लेशमात्र (negligible)
± .21 ± .40 तक	कम (low or slight)
± .41 ±. 60 तक	साधारण, सामान्य (moderate)
± .61 ± .80 तक	अधिक (substantial or high)
± .81 ±. 99 तक	बहुत अधिक(very high)
± .10	पूर्ण सह-सम्बन्ध (Perfect correlation)

'±' से हमारा तात्पर्य यह है कि अगर सह-सम्बन्ध धनात्मक (+) है तो हम कहेंगे कि धनात्मक बहुत कम या धनात्मक कम या धनात्मक सामान्य अथवा धनात्मक अधिक और धनात्मक बहुत अधिक और यदि सह-सम्बन्ध ('–') में आता है तो हम धनात्मक के स्थान पर ऋणात्मक शब्द का प्रयोग करेंगे।

सह-सम्बन्ध की उपर्युक्त व्याख्या मात्र इसकी विवेचना के प्रारम्भिक ज्ञान के लिए दी गयी है। यहाँ इस तरह की व्याख्या करने का सबसे बड़ा दोष यह है कि यहाँ केवल सह-सम्बन्ध गुणांक के मान को ही विचारा जाता है जबकि सह-सम्बन्ध गुणांक को अध्ययन किये जाने वाले समूह की योग संख्या भी प्रभावित करती है, यदि विशाल समूह पर अध्ययन किया गया है तो सह-सम्बन्ध गुणांक को कम मान की आश्यकता होगी। इसके विपरीत लघु समूह पर अध्ययन किये जाने पर अधिक मान की आवश्यकता होगी। वैज्ञानिक शोधों के सह-सम्बन्ध की व्याख्या करने के लिए स्पीयरमैन rho में N को तथा पीयरसन के प्रोडक्ट मोमेन्ट r में df = N – 2 को ध्यान में रखकर तालिका 4 में दिये गये प्रत्येक N एवं df के सामने दिये गये .05 एवं 01 स्तरों पर सह-सम्बन्ध गुणांक के आवश्यक मानों की किसी अध्ययन में प्राप्त किये हुए सह-सम्बन्ध गुणांक से तुलना की जाती है। यदि प्राप्त किये सह-सम्बन्ध गुणांक अधिक हैं तो वह उस अमुक स्तर पर सार्थक (significant) होगा तथा यदि कम है तो वह उस स्तर पर असार्थक (insignificant) होगा। इस सम्बन्ध में विस्तृत तालिका एवं उनके विवेचन के लिए निम्न पुस्तक का अवलोकन किया जा सकता है।

सह-सम्बन्ध गणना की विधियाँ

सह-सम्बन्ध की गणना के लिए मुख्य रूप से तीन विधियों का प्रयोग किया जाता है—(i) क्रम अन्तर विधि, (ii) प्राप्ति विधि, (iii) प्रोडक्ट मोमेनट विधि। यहाँ इन्हीं विधियों के सैद्धान्तिक पहलुओं एवं गणना करने की विधि पर प्रकाश डाला जायेगा।

Scanned with CamScanner

क्रम अन्तर विधि
(RANK DIFFERENCE METHOD)

संकेत चिह्न (Rho = ρ)

सह-सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने की इस विधि का सर्वप्रथम अनुप्रयोग प्रोफेसर स्पीयरमैन ने किया था। इस विधि द्वारा किये गये सह-सम्बन्ध गुणांक को 'ρ' (Rho) से प्रदर्शित करते हैं। इस विधि द्वारा सह-सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे व्यक्तियों की तुलना में स्थान क्रम दिया जाता है। जैसे कि 5 छात्रों को कोई परीक्षण दिया गया, उसके प्राप्तांक इस प्रकार हैं— 5, 35, 40, 20 और 30। यहाँ तीसरे छात्र ने सबसे अधिक अंक (40) प्राप्त किये हैं। अत: उसे हम पहला क्रम देंगे, दूसरा क्रम 35 प्राप्तांक वाले छात्र को, तीसरा क्रम 30 प्राप्तांक वाले छात्र को, चौथा तथा पाँचवाँ क्रम क्रमश: 25 तथा 20 प्राप्तांक वाले छात्रों को देंगे। इसी प्रकार दूसरे परीक्षण में प्राप्तांकों को ध्यान में रखकर छात्रों के क्रम निर्धारित करते हैं। फिर से एक-एक छात्र लेकर उसके क्रमों का अन्तर ($R_1 - R_2$) ज्ञात कर लेते हैं। इन अन्तरों के वर्ग तथा इन वर्गों के कुल योग से हम ρ (Rho) की गणना करते हैं।

क्रम अन्तर विधि द्वारा भिन्न-भिन्न गुणों, दो विषयों, दो परीक्षणों के अंकों, दो परीक्षणों के परिणामों आदि में सुविधापूर्वक सह-सम्बन्ध ज्ञात किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, हिन्दी या इंगलिश का एक लेख 5 छात्रों से लिखवाया गया। प्रत्येक लेख दो परीक्षकों को जाँच के लिए दिया गया। दोनों परीक्षक प्राय: भिन्न भिन्न अंक प्रदान करेंगे। अर्थमेटिक में तो भिन्न भिन्न अंक प्रदान करने की सम्भावना प्राय: कम रहती है लेकिन अन्य सभी विषयों में भिन्न-भिन्न परीक्षक अपने भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण से अंक प्रदान करते हैं। लेकिन फिर भी एक बात अवश्य है, जिस छात्र का लेख सबसे अच्छा है, उसको अन्य छात्रों की अपेक्षा सबसे अधिक अंक ही प्राप्त होंगे और उसे प्रत्येक परीक्षक प्राय: प्रथम स्थिति ही प्रदान करेगा। अत: स्थान क्रम ज्ञात करने से वास्तविक अंकों के परिवर्तन में कोई अन्तर नहीं पड़ता। दूसरे यह विधि अन्य विधियों से सरल भी है। यह विधि में अधिक गुणा, भाग आदि गणनाएँ नहीं करनी पड़तीं और सह-सम्बन्ध गुणांक शीघ्रता से ज्ञात किया जा सकता है। इस विधि के प्रयोग में त्रुटि की सम्भावना भी प्राय: कम रहती है। इतना होते हुए भी इस विधि की कुछ परिसीमाएँ हैं।

क्रम अन्तर विधि के गुण (Properties)

(i) इसकी गणना सरलता से होती है।
(ii) इसे सुगमता से समझा जा सकता है।
(iii) इसकी गणना केवल क्रमों से ही की जा सकती है।
(iv) विषमजातीय प्रदत्तों में यह उपयोगी होता है।
(v) लघु प्रतिदर्श के प्रयोग में ही उपयुक्त रहता है।
(vi) इसमें वास्तविक अंकों की शुद्धता आवश्यक नहीं है।

क्रम अन्तर विधि की सीमाएँ (Limitations)

(i) क्रमों से वास्तविक मापन नहीं होता है। यदि क्रम ही दिये हों तो वास्तविक अंकों के बिना भी सह-सम्बन्ध की गणना की जा सकती है।

(ii) इस विधि द्वारा ज्ञात किया गया सह-सम्बन्ध प्रोडक्ट मोमेन्ट विधि द्वारा ज्ञात किये गये r की अपेक्षा कम निकलता है।

(iii) अधिक संख्याओं वाले चरों पर इसका प्रयोग सम्भव नहीं हो पाता है।

(iv) यह व्यक्ति के वास्तविक प्राप्तांकों का मापन न करके केवल क्रमों को ही मापता है।

Scanned with CamScanner

क्रम अन्तर विधि के प्रयोग की विधियाँ

(i) जब संख्याएँ 30 या उससे कम हों।

(ii) जब क्रम दिये हों।

(iii) जब सामान्यता न हो तथा विषमजातीय समूह हो।

(iv) जब अंक अव्यवस्थित हों।

क्रम अन्तर सह-सम्बन्ध की गणना (ρ or Rho)

इस विधि द्वारा सह-सम्बन्ध गुणांक की गणना के लिए निम्नलिखित सूत्र प्रयोग किया जाता है—

सूत्र : $$\text{Rho or } \rho = 1 - \frac{6\Sigma D^2}{N(N^2 - 1)}$$

यहाँ ρ = क्रम अन्तर विधि द्वारा ज्ञात किया गया सह-सम्बन्ध

ΣD^2 = क्रमों के अन्तरों के वर्गों का योग

N = संख्या

N^2 = संख्या का वर्ग

सह-सम्बन्ध गुणांक (ρ) ज्ञात करने के चरण

(i) प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्तांकों के आधार पर क्रम (rank) प्रदान करना।

(ii) अगर दो व्यक्तियों ने समान अंक प्राप्त किये हों तो क्रमशः अगले दोनों क्रमों (ranks) को जोड़कर दो से भाग देना, जैसे—नागरिक शस्त्र में 'D' तथा 'E' छात्रों ने '40', '40' अंक प्राप्त किये, 41 अंक तक हम 6 का स्थान क्रम (6th rank) दे चुके हैं, अब हम दोनों 40 अंक प्राप्त करने वाले छात्रों को 7वें तथा 8वें (rank) स्थान क्रम के मध्य का स्थान 7.5 $\left(\frac{7+8}{2} = \frac{15}{2}\right)$ देंगे। इसके बाद 'F' छात्र को स्थान क्रम (rank) '9' प्रदान करेंगे।

(iii) एक-एक व्यक्ति लेकर, उसके दोनों विषयों के स्थान क्रमों का अन्तर (R_1 तथा R_2 का अन्तर) 'D' स्तम्भ में लिखना ($D = R_1 - R_2$ or $R_2 - R_1$)।

(iv) अन्तरों का वर्ग 'D' स्तम्भ में लिखना।

(v) ΣD^2 ज्ञात करना अर्थात् D^2 स्तम्भ के मानों का योग करना।

(vi) 'D' वाले कालम में धनात्मक और ऋणात्मक मानों का पृथक-पृथक योग करना। यह योग बराबर आना चाहिए अर्थात् ΣD शून्य होगा चाहिए। इस चरण में हमें मालूम हो जायेगा कि हमने (ranking) सही किया है या नहीं।

उदाहरण : यदि पाँच छात्रों को दो परीक्षकों ने रुचि सूची पर निम्न क्रम (rank) प्रदान किये तो परीक्षकों के द्वारा दिये प्राप्तांकों के मध्य-सम्बन्ध गुणांक ज्ञात कीजिये।

तालिका : क्रम अन्तर विधि से सह-सम्बन्ध की गणना

विद्यार्थी	पहला परीक्षक R_1	द्वितीय परीक्षक R_2	$R_1 - R_2$ D	$(R_1 - R_2)^2$ D^2
अ	1	2	– 1	1
ब	2	1	1	1
स	3	5	– 2	4
द	4	3	1	1
य	5	4	1	1
N = 5				$\Sigma D^2 = 8$

Scanned with CamScanner

नोट—'D' की गणना के लिये R_1 एवं R_2 का अन्तर लेते हैं। इस प्रश्न में R_1 में से R_2 घटाया गया परन्तु R_2 में से R_1 भी घटाया जा सकता है।

हल : सूत्र :

$$\rho = 1 - \frac{6\Sigma D^2}{N(N^2 - 1)}$$

यहाँ,

$$N = 5, \Sigma D^2 = 8$$

$\therefore$

$$\pi = 1 - \frac{6 \times 8}{5(5^2 - 1)}$$

$$= + .60$$

उत्तर : $\rho = + .60$

उदाहरण : 10 छात्रों को नागरिकशास्त्र तथा इतिहास के प्रश्न पत्र करने के लिये दिये गये। अगर उनके प्राप्तांक निम्न हों तो दोनों विषयों का सह-सम्बन्ध गुणांक r ज्ञात कीजिए।

तालिका

विद्यार्थी	ना. शा. प्राप्तांक	इति. प्राप्तांक	ना. शा. R_1	इति. R_2	D	D^2
A	35	30	10.0	10.0	0	0
B	40	35	7.5	8.5	– 1	1
C	50	40	3.0	6.5	– 3.5	12.25
D	45	35	4.0	8.5	– 4.5	20.25
E	40	40	7.5	6.5	1	1
F	39	41	9.0	5.0	4	16
G	53	43	2.0	4.0	– 2	4
H	54	51	1.0	2.0	– 1	1
I	43	52	5.0	1.0	4	16
J	41	50	6.0	3.0	3	9
N = 10						$\Sigma D^2 = 80.50$

हल : सूत्र :

$$\rho = 1 - \frac{6\Sigma D^2}{N(N^2 - 1)}$$

यहाँ,

$$N = 10, \Sigma D^2 = 80.5$$

$\therefore$

$$\rho = 1 - \frac{6 \times 80.5}{10(10^2 - 1)} = .51$$

उत्तर—नागरिकशास्त्र तथा इतिहास का सह-सम्बन्ध गुणांक = + .51 है जो कि धनात्मक तथा सामान्य श्रेणी का है।

Scanned with CamScanner

सूचक चिह्न R

प्राप्ति विधि से प्राप्त किये गये सह-सम्बन्ध गुणांक को 'R' संकेत से सूचित करते हैं। यह विधि क्रम अन्तर विधि से भिन्न है क्योंकि क्रम अन्तर विधि में क्रमों (ranks) को निर्धारित करने के पश्चात्

Scanned with CamScanner

क्रमों का अन्तर ज्ञात कर उनका वर्ग मालूम कर लिया जाता है जबकि प्राप्ति विधि में क्रम प्रदान करने के पश्चात् यह देखा जाता है कि एक विषय के क्रम के दूसरे विषय के क्रम पर क्या प्राप्त किया।

दूसरे क्रम अन्तर विधि में क्रमों के अन्तर का वर्ग करना पड़ता है जबकि प्राप्ति विधि में प्राप्ति (G) का वर्ग नहीं किया जाता है। तीसरे, क्रम अन्तर विधि में $6\Sigma D^2$ को $(N_2 - 1)$ से विभक्त किया जाता है जबकि प्राप्ति विधि में $6\Sigma G$ को केवल $(N^2 - 1)$ से भाग दिया जाता है। अत: यह सम्बन्ध ज्ञात करने के लिए प्राप्ति विधि श्रेष्ठतम विधि है। किन्तु इससे प्राप्त सह-सम्बन्ध गुणांक कम विश्वसनीय होते हैं।

इस विधि से सह-सम्बन्ध गुणांक ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है—

सूत्र : $$R = 1 - \frac{6\Sigma G}{(N^2 - 1)}$$

यहाँ ΣG = प्राप्ति का योग, N = संख्या

उदाहरण : निम्न तालिका में दिये हुए प्रदत्तों से इतिहास तथा नागरिकशास्त्र का सह-सम्बन्ध गुणांक (R) ज्ञात कीजिए—

तालिका

छात्र	(1) ना.शा. प्राप्तांक X	(2) इति. प्राप्तांक Y	(3) ना.शा. क्रम R_1	(4) इति. क्रम R_2	(5) स्तम्भ 4 की 3 के ऊपर प्राप्ति $R_2-R_1 = G_1$	(6) स्तम्भ 3 की 4 के ऊपर प्राप्ति $R_2-R_1 = G_1$
1	35	30	10.0	10.0	0.0	0
2	40	35	7.5	8.5	1.0	–
3	50	40	3.0	6.5	3.5	–
4	45	30	4.0	8.5	4.5	–
5	40	40	7.5	6.5	–	1
6	39	41	9.0	5.0	–	4
7	52	43	2.0	4.0	2.0	–
8	53	51	1.0	2.0	1.0	–
9	43	52	5.0	1.0	–	4
10	41	50	6.0	3.0	–	3
N = 10					$\Sigma G_1 = 12$ $\Sigma G_2 = 12$ जहाँ (Check) $\Sigma G_1 = \Sigma G_2$	

नोट—जाँच 'ΣG_1' और 'ΣG_2' का मान हमेशा बराबर होगा। इस मूल्य से हम गणना की जाँच करते हैं। अग किसी प्रश्न में 'ΣG_1' तथा 'ΣG_2' का मूल्य समान न हो तो समझना चाहिए कि गणना में कहीं गलती है।

हल : सूत्र : $$R = 1 - \frac{6\Sigma G}{(N^2 - 1)}$$

Scanned with CamScanner

यहाँ, $N = 10, \Sigma G = 12$

$$\therefore \quad R = 1 - \frac{6 \times 12}{(10^2 - 1)}$$

$$= + .27$$

उत्तर : $R = + .27$ धनात्मक एवं निम्न श्रेणी का सह-सम्बन्ध गुणांक।

प्रोडक्ट मोमेन्ट (PRODUCT MOMENT) सह-सम्बन्ध

Scanned with CamScanner

4. अन्तर विधि (Difference Method) द्वारा r की गणना

अन्तर विधि द्वारा r की गणना करने में दोनों के विचलन के अन्तर को बीजगणित के सिद्धान्त के अनुसार ज्ञात करते हैं तथा x विचलन में से y विचलन को घटाते हैं $(d = x - y)$। चूँकि यहाँ x एवं y चर के अन्तर द्वारा r की गणना की जाती है, अतः इस विधि को अन्तर विधि कहते हैं। इसके लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

सूत्र :

$$r = \frac{(\Sigma x^2 + \Sigma y^2) - \Sigma d^2}{2\sqrt{\Sigma x^2 \times \Sigma y^2}}$$

Σx^2 = X चर के प्राप्तांकों से विलचन के वर्गों का योग

Σy^2 = Y चर के प्राप्तांकों से विचलन के वर्गों का योग

Σd^2 = विचलनों के अन्तरों के वर्गों का योग

Scanned with CamScanner

की गणना के चरण

(i) X तथा Y दोनों चरों के मध्यमान ज्ञात करना।

(ii) मध्यमान से प्राप्तांकों का विचलन ज्ञात करना।

(iii) 'd' अथवा अन्तर ज्ञात करना। ($d = x - y$)। x विचलन में से y विचलन को बीजगणित सिद्धान्त के अनुसार घटाते हैं, जैसे X = – 4.8; Y = – 4.7; d = – .01; क्योंकि y का मान पहले से ही ऋणात्मक है, जब हम इन घटाने वाले (–) मानों को घटाते हैं तब बड़े घटाने वाले मान से छोटे घटाने वाले मान के घटाने पर – मान आता है। इसी प्रकार – 1.8 में से जब + 2.3 को घटायेंगे तो (+) वाला वह घटाने पर (–) का हो जायेगा और दोनों का अन्तर बीजगणित सिद्धान्त के अनुसार – 4.1 हो जायेगा।

(iv) x^2, y^2 ज्ञात करना अर्थात् X तथा Y दोनों के लिए अलग-अलग प्राप्तांकों के मध्यमान से विचलन के वर्ग ज्ञात करना।

(v) 'd' ज्ञात करना अर्थात् विचलान्तरों के वर्ग ज्ञात करना।

(vi) Σx^2 तथा Σy^2 ज्ञात करना।

(vii) Σd^2 ज्ञात करना अर्थात् विचलान्तरों के वर्गों का योग मालूम करना।

(vii) प्राप्त मानों को सूत्र में प्रयुक्त करना।

उदाहरण 7. निम्न तालिका में दिये गये प्राप्तांकों की सहायता से सह-सम्बन्ध गुणांक (r) ज्ञात कीजिए :

तालिका : अन्तर विधि के प्रयोग द्वारा r की गणना

परीक्षण अ X	परीक्षण ब Y	मध्यमान से विचलन x	मध्यमान से विचलन y	विचलन वर्ग x^2	विचलन वर्ग y^2	विचलन अन्तर d	विचलन अन्तरों का वर्ग d^2
25	10	–4.8	–4.7	23.04	22.09	–0.1	0.01
22	13	–7.8	–1.7	60.84	2.89	–6.1	37.21
28	17	–1.8	2.3	3.24	5.29	–4.1	16.81
30	14	0.2	–0.7	0.04	0.49	0.9	0.81
30	13	0.2	–1.7	0.04	2.89	1.9	3.61
31	15	1.2	0.3	1.44	0.09	0.9	0.81
30	16	0.2	1.3	0.04	16.90	–1.1	1.21
33	15	3.2	0.3	10.24	0.09	2.9	8.41
34	14	4.2	–0.7	17.64	0.49	4.9	24.01
35	20	5.2	5.3	27.04	28.09	–0.1	0.01
ΣX = 298	ΣY = 147			Σx^2 = 143.6	Σy^2 = 64.1		Σd^2 = 92.90

हल : परीक्षण 'अ' का मध्यमान

$$M_x = \frac{\Sigma X}{N} = \frac{298}{10} = 29.80$$

परीक्षण 'ब' का मध्यमान

$$M_y = \frac{\Sigma Y}{N} = \frac{147}{10} = 14.70$$

$$r = \frac{(\Sigma x^2 + \Sigma y^2) - \Sigma d^2}{2\sqrt{\Sigma x^2 \times \Sigma y^2}}$$

Scanned with CamScanner

यहाँ, $\Sigma x^2 = 143.6,\ \Sigma y^2 = 64.10,\ \Sigma d^2 = 92.90$

$$r = \frac{(143.6 + 64.1) - 92.90}{2\sqrt{143.6 \times 64.10}}$$

$$= \frac{114.8}{191.98} = .60$$

उत्तर : $r = +.6$

Scanned with CamScanner

4.5

सामान्य सम्भाव्यता वक्र
(NORMAL PROBABILITY CURVE)

सामान्य सम्भाव्यता वक्र का 19वीं शताब्दी के मध्य तक अनेक गणित विशेषज्ञों द्वारा अध्ययन किया गया। डेमोइवर (Demoiver) ने 1733 में सर्वप्रथम इस वक्र के लिए समीकरण निकाला, जिसका उपयोग धनी जुआरियों की समस्याओं के समाधान में किया जाता था। इसके पश्चात् फ्रांस में लेपलास (Laplass), जर्मनी में गास (Gauss) ने इस सिद्धान्त के विकास में अनेक महत्वपूर्ण योगदान दिये। आधुनिक युग में प्रत्येक विज्ञान में सामान्य सम्भाव्यता वक्र का महत्व है। जब कोई वितरण घंटाकर (Bell Shaped) है तो उसे सामान्य या सामान्य सम्भाव्यता वक्र कहते हैं। चित्र में सामान्य वक्र का आदर्श उदाहरण है। किसी भी आवृत्ति वितरण को इस सामान्य वक्र द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। शिक्षा और मनोविज्ञान के बहुत से माप सामान्य वितरण वक्र के द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं। उदाहरण के लिए स्कूल के बच्चों की बुद्धि के प्राप्तांक, भूलभुलैया द्वारा सीखने में त्रुटियों आदि को सामान्य वक्र द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त अनेक समस्याओं के अध्ययन में सामान्य सम्भाव्यता वक्र का प्रयोग किया जाता है। साहचर्य, प्रत्यक्षीकरण, विस्तार, प्रतिक्रिया काल, शारीरिक और मानसिक शीलगुण, वेतन, उत्पादन, भार, ऊँचाई आदि कुछ मानसिक मापन की प्रमुख समस्याएँ हैं जिनके अध्ययन में सामान्य सम्भाव्यता वक्र का सहारा लिया जाता है। सामान्य वक्र पूरी तरह एक गणितीय कार्य है।

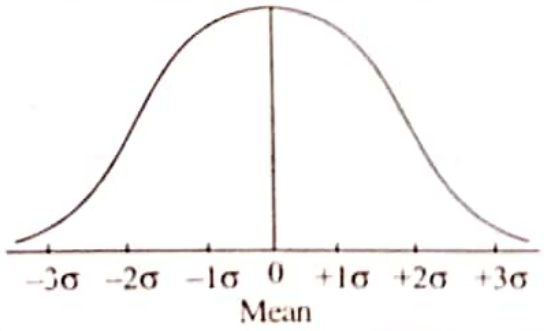

सामान्य सम्भाव्यता वक्र की विशेषताएँ
(CHARACTERISTICS OF NORMAL PROBABILITY CURVE)

1. सामान्य सम्भाव्यता वक्र की X अक्ष का विस्तार तथा Y अक्ष की ऊँचाई का निर्धारण प्राप्तांकों के आधार पर किया जाता है।

2. सामान्य सम्भाव्यता एक समरूप (Symmetrical) एवं बहुलकी (Unimodal) होता है। अत: वक्र के मध्य आवृत्तियों की संख्या या प्राप्तांकों की संख्या सबसे अधिक होती है। सामान्य सम्भाव्यता वक्र के मध्य से किनारों की ओर बढ़ने से आवृत्तियों की संख्या कम हो जाती है।

Scanned with CamScanner

3. सामान्य सम्भाव्यता वक्र के दोनों अन्तिम छोर X अक्ष को स्पर्श नहीं करते हैं और न ही इसके सामान्तर होते हैं। सामान्य वक्र की यह विशेषता अन्त तक होती है।

4. सामान्य सम्भाव्यता वक्र के मध्य यदि लम्ब डालें तो ये सामान्य वक्र को दो बराबर भागों में बाँट देता है तथा दोनों भागों का क्षेत्रफल एक दूसरे के बराबर होता है।

5. सामान्य सम्भाव्यता वक्र के मध्य भाग में मध्यमान स्थित होता है इस वक्र का मध्यमान, मध्यांक, तथा बहुलांक का मान समान होता है। प्रत्येक सामान्य वितरण में मध्यमान के ऊपर 50 अंक तथा मध्यमान से नीचे 50 अंक होते हैं।

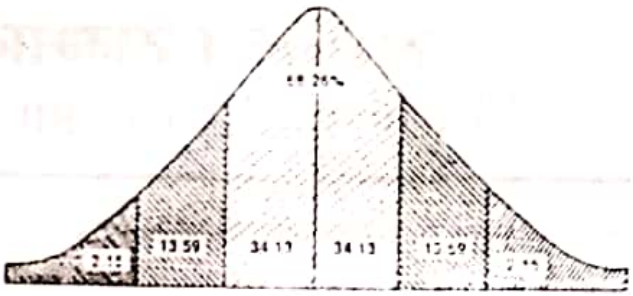

सामान्य वितरण वक्र में क्षेत्रों का अनुपात

6. सामान्य सम्भाव्यता का विस्तार –3σ तथा + 3σ के अन्तर्गत होता है। –3σ और + 3σ के अन्तर्गत 1000 की जनसंख्या में से 99.74 केसेज आते हैं –3σ और + 3σ के परे सामान्य सम्भावना वक्र में 1000 की जनसंख्या में केवल 26 कैसेज रह जाते हैं। इनका विशेष व्यावहारिक महत्व नहीं है। वास्तव में X अक्ष पर इसका विस्तार ऋण अनन्त से धन अनन्त (+ σ) तक हैं।

सम्भाव्यता के आधारभूत सिद्धान्त
(BASIC PRINCIPLES OF PROBABILITY)

किसी घटना की सम्भाव्यता समान घटनाओं में उस घटना के घटित होने की अपेक्षित आवृत्ति है। घटित होने की अपेक्षित आवृत्ति का पता उन दिशाओं के तथ्यों पर विचार करके किया जा सकता है जिनकी उस घटना के घटित होने को प्रभावित करने की सम्भावना है। किसी घटना की सम्भाव्यता सम्भावना की गणितीय विधि (Mathematieal method) द्वारा गणना की जा सकती है। मान लीजिए, हम एक सिक्का उछालते हैं, सिक्के का चित्त (Head) आने की सम्भावना दो में से एक है। इसको इस प्रकार अभिव्यक्त करते हैं। P = 1/2 या 0.5। सिक्के के पट्ट आने की सम्भावना भी 1/2 या 0.5 है। किसी आवृत्ति की सम्भावना P तथा q का योग P + q मिलाकर हमेशा 1 के बराबर होती है। सिक्का उछालने के उदाहरण के $P + q = \frac{1}{2} + \frac{1}{7}$ या 0.5 + 0.5 = 1 इसी प्रकार एक घनाकार पासा फेंकने पर दो बिन्दु वाले फलक के आने की सम्भावना 1/6 होती है तथा अन्य फलकों के ऊपर आने की सम्भावना के 5 अवसर होते हैं। अतः P = 1/6 = 5/6 तथा P + q = 1/6 + 5/6 = 1। जब सम्भावना कार्य करती है तो यहाँ हम केवल अपेक्षित परिणाम ही बता सकते हैं।

संभावना अनुपातों (Probable Ratio) में रेखा के ऊपर वाला अंक वांछित परिणामों के बराबर होता है। रेखा के नीचे वाला अंक सम्पूर्ण सम्भावित परिणामों के बराबर होता है। अतः सम्भाव्यता अनुपात की परिभाषा वांछित परिणामों के सम्पूर्ण परिणाम की संख्या से विभक्त करने के पश्चात् प्राप्त अंश से की जाती है। यह सम्भाव्यता का मुख्य विषय है जिसके अनुसार किन्हीं दो या अधिक परस्पर विशिष्ट घटनाओं

Scanned with CamScanner

के घटित होने की सम्भाव्यता सभी अलग-अलग सम्भावनाओं के योग के बराबर होती है। सामान्यत: सम्भाव्यता अनुपात 0 घटित होने की असम्भावना और 1.00 के बीच होता है जिसका तात्पर्य घटित होने की पूर्ण निश्चितता होती है।

सामान्य वक्र के अन्तर्गत क्षेत्र
(AREAS UNDER NORMAL CURVE)

सामान्य वितरण वक्र का सम्पूर्ण क्षेत्र वितरण की कुल संख्या अर्थात् सम्पूर्ण स्थितियों के बराबर होता है। यदि हम इसे मानक वक्र (Standard Curve) के रूप में लें जिसमें N = 100 हो तो प्रतिशतों से कार्य कर सकते हैं। वक्र का 50% मध्यम के ऊपर की ओर तथा दूसरा 50% नीचे की ओर रहता है। मध्यम से +1σ तक एक तिहाई (1/3 स्थितियाँ) और मध्यम से दूसरी ओर −1σ तक अन्य एक तिहाई स्थितियाँ आपेक्षित होती हैं। अत: मध्य के दोनों ओर फैले हुए एक मानक विचलन में 2/3 स्थितियाँ आ जाती हैं। यदि उसे प्रतिशत के रूप में व्यक्त करें तो प्रत्येक ओर 34.13% स्थितियाँ होंगी। अत: −1σ तक के अंतराल में 60.26% स्थितियाँ आ जाती हैं।

सामान्यता के विचलन
(DEVIATIONS FROM NORMALITY)

सामान्यता से विचलन दो प्रकार का हो सकता है–

1. विकृत वितरण (Skewed Distribution)
2. वितरण में कुकुदता (Kurtosis)

1. विकृत वितरण (Skewed Distribution)

किसी भी वितरण को विकृत वितरण उस समय कहते हैं, जब वातावरण में मध्यमान, मध्यांक और बहुलांक भिन्न-भिन्न बिन्दुओं पर पड़ते हैं तथा जब आँकड़े बीच में एकत्रित न होकर वितरण के दाहिने या बाईं ओर अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाते हैं।

When the mean, median, and mode fall at different point and the balance is shifted to right or left of the distribution, the distribution is said to be skewed.

सामान्य वितरण में मध्यमान तथा मध्यांक बराबर होते हैं। वितरण की विकृति शून्य होती है। किसी आवृत्ति वितरण के मध्यमान और मध्यांक जितने ही पास होते हैं, वितरण सामान्य के उतना ही पास होता है तथा विकृति उतनी ही कम होती है।

किसी भी वितरण की विकृति दो प्रकार की होती है। धनात्मक विकृति (Positive Skewness) तथा ऋणात्मक विकृति (Negative Skewness)। इन दोनों विकृतियों को अग्रांकित चित्र में दिखाया गया है। जब दाहिने ओर आँकड़ों का एकत्रीकरण होता है तो धनात्मक विकृति और बाईं ओर आँकड़ों का एकत्रीकरण होता है तो ऋणात्मक विकृति कहलाती है।

धनात्मक विकृति (Positive Skewness)—एक अंक वितरण में धनात्मक विकृति उस समय होती है, जब इस वितरण का मध्यमान वितरण के मध्यमान और बहुलांक से अधिक होता है। इस धनात्मक विकृति की दूसरी पहचान यह है कि वितरण में अंकों का जमाव ऋणात्मक दिशा में अधिक होता है। धनात्मक विकृति उस समय आती है जब एक परीक्षण अधिक कठिन होता है। इस अवस्था में प्राप्तांकों का केन्द्रीयकरण अंक वितरण के कम मूल्य वाले अंकों की ओर हो जाता है। दूसरे शब्दों में कठिन परीक्षण की अवस्था में विद्यार्थियों के अंक मध्यमान से न्यूनतम सीमा या ऋणात्मक दिशा में अधिक जाते हैं। इस प्रकार के प्राप्तांकों से यदि पोलीगन (Polygon) बनाया जाये तो मध्यमान से बाईं ओर मध्यांक (Median) और बहुलांक (Mode) होंगे।

Scanned with CamScanner

धनात्मक विकृति

ऋणात्मक विकृति (Negative Skewness)—एक अंक वितरण में ऋणात्मक विकृति उस समय होती है, जब एक परीक्षण अपेक्षाकृत सरल होता है। इस स्थिति में विद्यार्थियों में प्राप्तांक मध्यमान से धनात्मक दिशा में केन्द्रित हो जाते हैं। इस अवस्था में यदि पोलीगन (Polygon) खींचा जाये, तो मध्यमान से मध्यांक और बहुलांक दाहिनी ओर होंगे अर्थात् मध्यमान का मान इन दोनों से कम होगा।

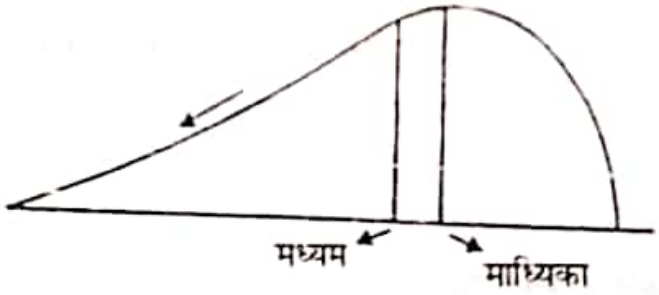

ऋणात्मक विकृति

2. कुकुदता (Kurtosis) वक्रता मात्रा

सामान्य वितरण की अपेक्षा यदि किसी वितरण का वक्र चपटा (Flat) या शिखरीय (Peaked) है तो यह सामान्य वक्र न कहलाकर कुर्टोसिस (Kurtosis) कहलाएगा।

Kurtosis refers to the degree of flatness or peakness in the region about the mode of a frequency curve.

—Simpson

आकृति वक्र को चपटेपन या नुकीलेपन के आधार पर वर्गीकृत किया जा सकता है, जिसे वक्रता की मात्रा या Kurtosis कहते हैं। वक्रता की मात्रा दो प्रकार की होती है—

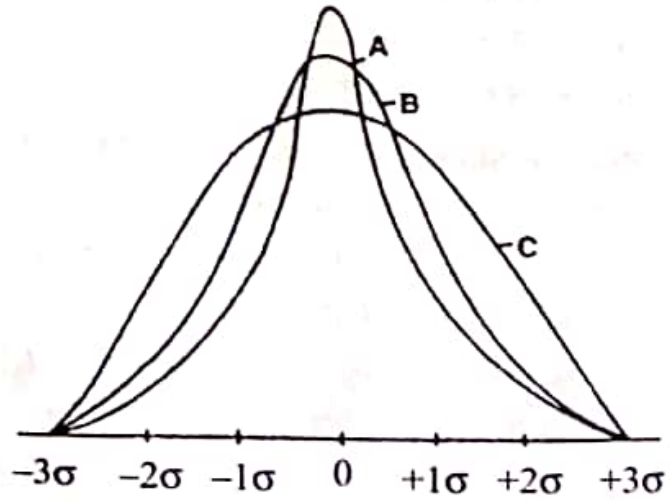

तीन प्रकार की वक्रता मात्रा

Scanned with CamScanner

1. Laptokurtic—यदि सामान्य सम्भावना वक्र की अपेक्षा वक्र अधिक शिखरीय है तो ऐसे वक्र को लैप्टोकर्टिक कहेंगे।

2. Platykurtic—यदि सामान्य सम्भावना वक्र से वक्र अधिक चपटा होता है तो ऐसे वक्र को प्लेटीकर्टिक कहेंगे।

3. Mesokurtic—सामान्य वितरण वक्र को मैसोकर्टिक या मध्य शंकु वक्रता कहते हैं।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. सामान्य सम्भाव्यता वक्र की विशेषताएँ एवं सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. विकृत वितरण से क्या आशय है?
2. कुकुदता वक्रता मात्रा से क्या समझते हैं?

❑❑

Scanned with CamScanner

शंताशीय
(PERCENTILES)

शतांशीय मान वह मान है जो कि समस्त व्यवस्थित प्राप्तांकों को सौ सम अंशों में विभक्त करता है। अत: किसी भी समूह में इनकी संख्या निन्यानवे होती है। किसी संदर्भ समूह में अमुक व्यक्ति की क्या स्थिति है ? एक कक्षा के किसी छात्र के प्राप्तांक 30 हैं तो उसकी उस समूह में क्या स्थिति है ? अथवा उस छात्र का क्या प्राप्तांक होगा जो कि 65% छात्रों से कमजोर या 35% छात्रों से श्रेष्ठ है आदि ऐसे ही प्रश्नों का उत्तर देने के लिए शतांशीय (percentiles) एवं शतांशीय क्रमों (percentile ranks) का अनुप्रयोग किया जाता है।

मान लीजिए 300 छात्रों के हिन्दी उपलब्धि प्राप्तांकों का एक वितरण दिया हुआ है। अब हमें यह ज्ञात करना है कि वह प्राप्तांक क्या है, जिसके नीचे 60% या 40% छात्रों ने अंक प्राप्त किये हैं। यह इस वितरण का 60वाँ या 40वाँ शतांशीय कहलायेगा। अत: शतांशीय को इन शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है—कोई xवाँ शतांशीय प्राप्तांकों के वितरण में वह मान प्राप्तांक या बिन्दु है जिसके नीचे x प्रतिशत प्राप्तांक स्थित होते हैं। x का मान 0 और 100 के मध्य में कुछ भी हो सकता है। शतांशीय को निम्न भाँति लिखते हैं—

xवें शतांशीय को P_x लिखते हैं

20वें शतांशीय को P_{20} लिखेंगे

72वें शतांशीय को P_{22} लिखेंगे

चूँकि किसी भी शतांशीय मापनी (scale) पर 100 प्राप्तांक होते हैं। अतएव शतांशीय P_1 से P_{100} तक होते हैं।

कुछ शतांशीयों को अन्य संकेतों के माध्यम से भी लिखा जा सकता है, जैसे—

$P_{10} = D_1$	$P_{60} = D_6$
$P_{20} = D_2$	$P_{70} = D_7$
$P_{25} = Q_1$	$P_{75} = Q_3$
$P_{30} = D_3$	$P_{80} = D_8$
$P_{40} = D_4$	$P_{90} = D_9$
$P_{50} = D_5$ या Q_2 या Md	$P_{100} = D_{10}$

यहाँ D से दशांशीय (decile) एवं Q से चतुर्थांशीय (quartile) व Md से मध्यांक (Medium) का बोध होता है।

(अ) अव्यवस्थित प्रदत्तों से शतांशीय (Percentile) ज्ञात करना

अव्यवस्थित प्रदत्तों से शतांशीय ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

सूत्र— $$P_n = \frac{n(N+1)}{100} \text{ th score} \qquad (12)$$

यहाँ P_n = गणना करने वाली कोई भी शतांशीय (Percentile)

n = ज्ञातव्य शतांशीय की संख्या

N = प्राप्तांकों की संख्या

Scanned with CamScanner

अतः $P_{16} = \frac{16(N+1)}{100}$ th score

$P_{64} = \frac{64(N+1)}{100}$ th score

$P_{81} = \frac{81(N+1)}{100}$ th score

उदाहरण 4. उदाहरण (1) में दिये गए प्रदत्तों की सहायता से P_{22}, P_{57} एवं P_{80} का प्राप्तांक ज्ञात कीजिए।

सूत्र प्रयुक्त करने पर—

$$P_n = \frac{n(N+1)}{100} \text{ th score}$$

$$P_{22} = \frac{22(N+1)}{100} \text{ th score}$$

$$= \frac{462}{100} \text{ th score} = 4\frac{62}{100} \text{ th score}$$

$$= 51 + \frac{62}{100}(52 - 51)$$

$$= 51 + .62 = 51.62 \qquad P_{22} = 51.62$$

$$P_{57} = \frac{57(20+1)}{100} \text{ th score}$$

$$= \frac{1197}{100} \text{ th score} = 11\frac{97}{100} \text{ th score}$$

$$= 61 + \frac{97}{100}(65 - 61)$$

$$= 61 + 3.88 = 64.88 \qquad P_{57} = 64.88$$

$$P_{80} = \frac{80(20+1)}{100} \text{ th score}$$

$$= \frac{1680}{100} \text{th score} = 16\frac{4}{5} \text{ th score}$$

$$= 72 + \frac{4}{5}(74 - 72)$$

$$= 72 + 1.6 = 73.6 \qquad P_{80} = 73.6$$

Scanned with CamScanner

(ब) व्यवस्थित (Grouped) प्रदत्तों से शंताशीय (Percentile) की गणना

शतांशीय मान ज्ञात करने के लिए निम्नलिखित सूत्र का अनुप्रयोग किया जाता है–

सूत्र— $$P_n = lm + \left(\frac{\frac{nN}{100} - fb}{fp} \right) \times C.I. \quad \text{...(13)}$$

यहाँ P_n = ज्ञात की जाने वाली शतांशीय की संख्या जैसे P_{40}, P_{73}

lm = ज्ञातव्य शतांशीय (percentile) वाले वर्गान्तर की निम्नतम सीमा

fb = निम्नतम सीमा के नीचे की सभी आवृत्तियों का योग

fb = Pn वाले वर्गान्तर की आवृत्ति

N = प्राप्तांकों की संख्या

C.I. = वर्ग विस्तार

नोट—मध्यांक के समान ही इसका सूत्र होता है, अत: इसकी गणना करने के लिए मध्यांक की गणना के चरणों का अनुकरण करना चाहिये।

उदाहरण 4. उदाहरण (2) के प्रदत्तों से P_{75} एवं P_{45} ज्ञात कीजिए।

हल : उपर्युक्त प्रदत्तों में सूत्र (13) प्रयुक्त करने पर

$$P_{75} = lm + \left(\frac{\frac{75N}{100} - fb}{fp} \right) \times C.I.$$

यहाँ, $lm = 29.5$, $N = 40$, $fb = 23$, $fp = 9$ तथा C.I. = 5 हैं।

अत: $$P_{75} = 29.5 + \left(\frac{\frac{75 \times 40}{100} - 23}{9} \right) \times 5$$

$$= 29.5 + \left(\frac{30 - 23}{9} \right) \times 5$$

$$= 29.5 + 3.89 = 33.39$$

$P_{75} = 33.39$

$$P_{45} = lm + \left(\frac{\frac{45N}{100} - fb}{fp} \right) \times C.I.$$

यहाँ, $lm = 24.5$, $N = 40$, $fb = 11$, $fp = 12$ तथा C.I. = 5 हैं।

अत: $$P_{45} = 24.5 + \left(\frac{\frac{45 \times 40}{100} - 11}{12} \right) \times 5$$

$$= 24.5 + 2.92 = 27.42$$

$P_{45} = 27.42$

इसी प्रकार सभी शतांशीय मानों की गणना की जाती है।

Scanned with CamScanner

शतांशीय क्रम या बिन्दु
(PERCENTILE RANK OR PR)

अभी हमने ऊपर शतांशीय मूल्य की गणना का अध्ययन किया। यह मूल्य हमें बताता है कि सौ व्यक्तियों के समूह में किसी विशेष स्थान को ग्रहण करने वाले व्यक्ति को कितने प्राप्तांक मिलते हैं, उदाहरणार्थ, मान लीजिए 73 शतांशीय वाले व्यक्ति के 28.6 प्राप्तांक हैं, किन्तु शतांशीय क्रम में स्थिति इसके विपरीत होती है, यहाँ दिये गये प्राप्तांक को पाने वाले व्यक्ति का समस्त समूह में जो स्थान (rank) होता है उसे ज्ञात किया जाता है तथा इसी स्थान को शतांशीय क्रम के नाम से सम्बोधित किया जाता है। उदाहरणार्थ, मान लीजिये यदि 65 प्राप्तांक हासिल करने वाले छात्र का सौ व्यक्तियों के समूह में स्थान अड़तीसवाँ (38th) है तो यही उसका शतांशीय क्रम (perentile rank) होगा। अन्य शब्दों में, इससे आशय यह है कि सैंतीस छात्र उससे बुद्धि स्तर में निम्न एवं बासठ छात्र उससे बुद्धि स्तर में श्रेष्ठ हैं। अतएव यहाँ यह स्पष्ट है कि शतांशीय मान की गणना में एक बिन्दु अथवा कोई न कोई प्राप्तांक दिया होता है एवं उस पर स्थित आवृत्ति का मान ज्ञात करना होता है जबकि शतांशीय बिन्दु (PR) की गणना में हमें उस बिन्दु पर स्थित आवृत्ति का मान या कोई न कोई स्थान (position) मालूम होता है एवं उस पर बिन्दु की स्थिति ज्ञात करनी होती है। अत: अब यह स्पष्ट है कि शतांशीय क्रम का अनुप्रयोग समूह में किसी अमुक व्यक्ति की स्थिति को निर्धारित करने के लिए किया जाता है।

(अ) शतांशीय क्रम की प्रत्यक्ष गणना

जब कभी संख्या (N) कम हो तथा विशेषता के अनुसार सदस्यों को श्रेणी क्रम (rank order) में रखा जा सके तो शतांशीय क्रम निम्नलिखित सूत्र की सहायता से ज्ञात किया जा सकता है–

सूत्र : $$PR = 100 - \left(\frac{100R - 50}{N}\right) \quad \ldots(14)$$

यहाँ, PR = शतांशीय क्रम

R = व्यक्ति विशेष का उसके समूह में स्थान

N = समूह में व्यक्तियों की संख्या।

उदाहरण 5. यदि एम. ए. (मनोविज्ञान) की 25 छात्राओं की कक्षा को सांख्यिकी के उपलब्धि परीक्षण पर क्रमांकित किया गया तथा उसमें आभा को 6वाँ स्थान प्राप्त हुआ तो उसका शतांशीय क्रम क्या होगा ?

हल : आभा का $PR = 100 - \left(\frac{100 \times 6 - 50}{25}\right)$

$$= 100 - \frac{550}{25}$$

$$= 100 - 22 = 78$$

अत: आभा का शतांशीय क्रम 78 है अर्थात् 78 प्रतिशत छात्राओं ने उससे कम प्राप्तांक हासिल किये।

उदाहरण 6. बीस फिल्म अभिनेत्रियों को क्रमान्वित किया गया तथा हेमामालिनी को अभिनय की दृष्टि से 12वाँ स्थान, नर्तकी की दृष्टि से 15वाँ स्थान एवं आकर्षण की दृष्टि से 4वाँ स्थान प्राप्त हुआ, तो वह किस दृष्टि से श्रेष्ठ है ?

Scanned with CamScanner

हल :अभनिय की दृष्टि से हेमा का PR $= 100 - \left(\frac{100\times12-50}{20}\right) = 42.5$

नर्तकी की दृष्टि से हेमा का PR $= 100 - \left(\frac{100\times15-50}{20}\right) = 27.5$

आकर्षण की दृष्टि से हेमा का PR $= 100 - \left(\frac{100\times4-50}{20}\right) = 82.5$

अत: यह सिद्ध है कि हेमामालिनी को आकर्षण की दृष्टि से सबसे श्रेष्ठ रूप में क्रियान्वित किया गया क्योंकि उसका PR 82.5 है, फिर अभिनय की दृष्टि से उसे क्रियान्वित किया गया तथा अन्त में नर्तकी की दृष्टि से।

उदाहरण 7. एक ऐसे छात्र के शतांशीय क्रमों (PR) की गणना कीजिये जिनके क्रम 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 एवं 10 के क्रमिक रूप में हों।

हल : एक छात्र का शतांशीय क्रम (PR) जबकि उसका क्रम—

$$PR_1 = 100 - \left(\frac{100\times1-50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{50}{10} = 100 - 5 = 95$$

$$PR_2 = 100 - \left(\frac{100\times2-50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{150}{10} = 100 - 15 = 85$$

$$PR_3 = 100 - \left(\frac{100\times3-50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{250}{10} = 100 - 25 = 75$$

$$PR_4 = 100 - \left(\frac{100\times4-50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{350}{10} = 100 - 35 = 65$$

$$PR_5 = 100 - \left(\frac{100\times5-50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{450}{10} = 100 - 45 = 55$$

$$PR_6 = 100 - \left(\frac{100\times6-50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{550}{10} = 100 - 55 = 45$$

$$PR_7 = = 100 - \left(\frac{100\times7-50}{10}\right)$$

Scanned with CamScanner

$$= 100 - \frac{650}{10} = 100 - 65 = 35$$

$$PR_8 = 100 - \left(\frac{100 \times 8 - 50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{750}{10} = 100 - 75 = 25$$

$$PR_9 = 100 - \left(\frac{100 \times 9 - 50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{850}{10} = 100 - 85 = 15$$

$$PR_{10} = 100 - \left(\frac{100 \times 10 - 50}{10}\right)$$

$$= 100 - \frac{950}{10} = 100 - 95 = 5$$

(ब) व्यवस्थित प्रदत्तों से शतांशीय (PR) की गणना

जब प्राप्तांकों का वितरण वर्गीकृत आवृत्ति के रूप में हो तो किसी प्राप्तांक का शतांशीय क्रम (PR) ज्ञात करने का सूत्र निम्न है—

सूत्र : $$PR(x) = \frac{100}{N}\left[Fb + \frac{(x - L)f}{i}\right] \quad \ldots(15)$$

यहाँ $PR(x)$ = दिये हुए प्राप्तांक (x) का शतांशीय क्रम

N = समस्त आवृत्तियाँ

Fb = x के वर्गान्तर से नीचे वाले वर्गान्तर की संचयी आवृत्ति

L = जहाँ x स्थित हो उस वर्गान्तर की शुद्ध निम्नतम सीमा

f = x वाले वर्गान्तर की आवृत्ति

i = वर्गान्तर का आकार

शतांशीय क्रम (PR) की गणना के चरण

(i) यह ज्ञात करना कि शतांशीय क्रम वाला प्राप्तांक किस वर्गान्तर में स्थित है।

(ii) जिस वर्गान्तर में वह प्राप्तांक हो उसकी निम्नतम सीमा क्या है।

(iii) प्राप्तांक वाले वर्गान्तर के नीचे के वर्गान्तर के सामने की संचयी आवृत्ति क्या है।

(iv) वर्गान्तर का क्या आकार है।

(v) प्राप्तांक वाले वर्गान्तर की क्या आवृत्ति है।

(vi) समस्त आवृत्तियाँ क्या हैं।

उदाहरण 8. उदाहरण (2) के व्यवस्थित प्रदत्तों से 40 से 25 प्राप्तांकों का शतांशीय क्रम (PR) ज्ञात कीजिये।

हल : उपर्युक्त चरणों के अनुसार हमने निम्न प्रकार प्राप्त किये—

Scanned with CamScanner

प्राप्तांक	आवृत्ति	संचयी आवृत्ति
45 – 50	2	40
40 – 45	3	38
35 – 40	3	35
30 – 35	9	32
25 – 30	12	23
20 – 25	7	11
15 – 20	3	4
10 – 15	1	1
	N = 40	

सूत्र में मान रखने पर

$$PR_{40} = \frac{100}{N}\left[Fb + \frac{(x - L)f}{i}\right]$$

यहाँ, N = 40, Fb = 35, x = 40, L = 39.5, f = 3, i = 5

$$PR_{40} = \frac{100}{40}\left[35 + \frac{(40 - 39.5)3}{5}\right]$$

$$= \frac{5}{2}[35.30] = \frac{176.50}{2} = 88.30$$

उत्तर : $PR_{40} = 88.30$

$$PR_{25} = \frac{100}{N}\left[Fb + \frac{(x - L)f}{i}\right]$$

यहाँ, N = 40, Fb = 11, x = 25, L = 24.5, f = 12, i = 5

$$PR_{25} = \frac{100}{40}\left[11 + \frac{(25 - 24.5)12}{5}\right]$$

$$= \frac{5}{2}[12.20] = \frac{61.00}{2} = 31.00$$

उत्तर : $PR_{25} = 31.00$

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. अव्यवस्थित प्रदत्तों से दशांशीय गणना की विधि का वर्णन कीजिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. शतांशीय बिन्दु से क्या आशय है?
2. शतांशीय क्रम की गणना के कौन-से चरण हैं?

Scanned with CamScanner